श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ

चतुर्थ खण्ड

जिसमें

दशमस्कन्ध पूर्वार्द्ध

के प्रति श्लोक की कथा सरस छन्दों में वर्णित है।

रचयिता

श्री पं० माधवरामजी अवस्थी "व्यास"

प्रकाशक

आयुर्वेदाचार्य पं० रामचन्द्र अवस्थी वैद्यशास्त्री धर्मशा० आ०

अध्यक्ष श्रीरामकृष्ण औषधालय तथा विद्यालय,

इटावाबाजार, कानपुर।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति | संवत् १९८४ वि० | मूल्य प्रति पु० १।)

प्रिन्टर—लाला रामनारायण, मरचेंट प्रेस, कानपुर।
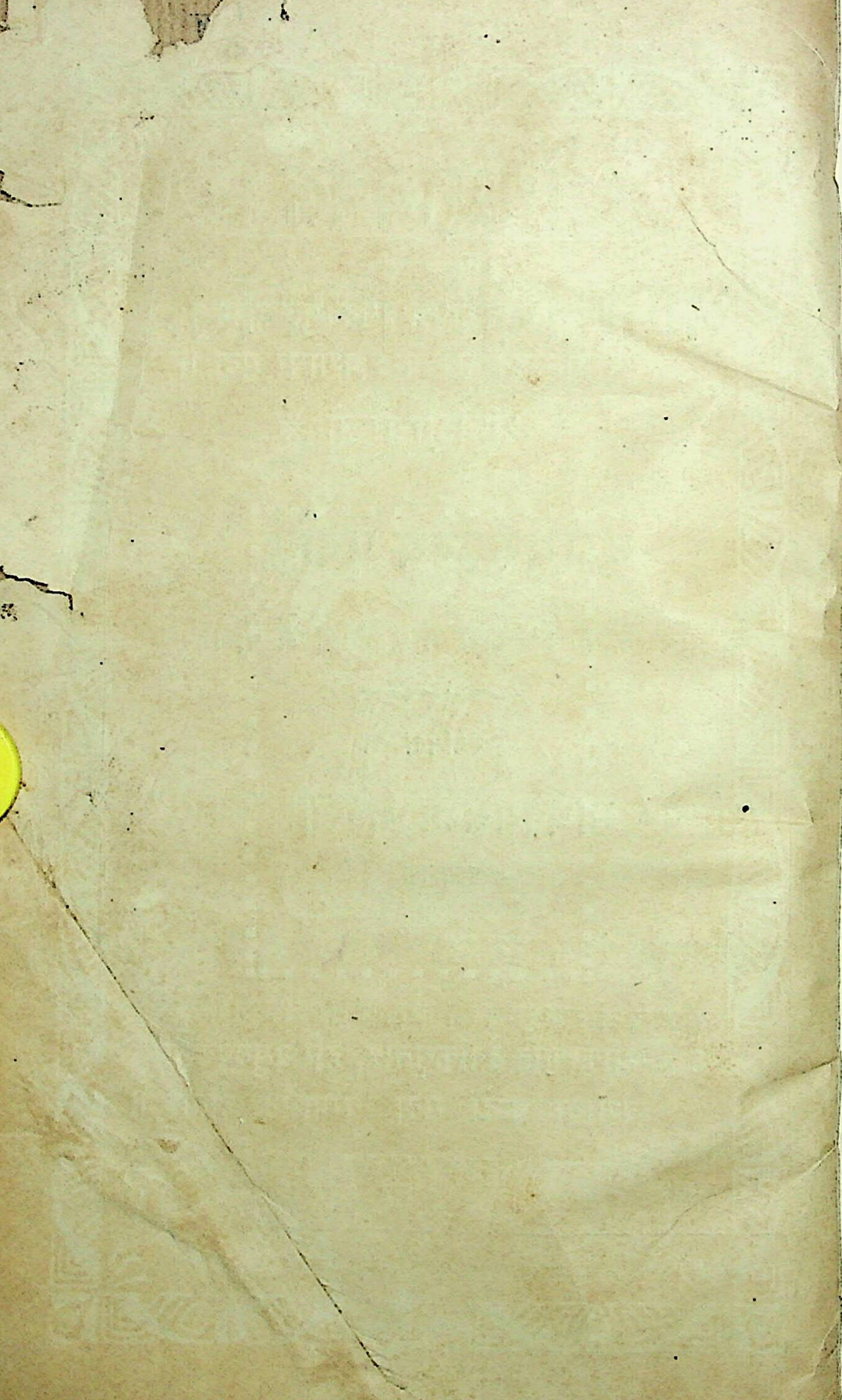
श्रीहरिर्जयति
श्लो०—श्रीकृष्णं देवकीपुत्रं वसुदेवसुतं हरिम् ।
परमानन्ददातारं बन्दे बंशीधरं सदा ॥
* श्रीबंशीधरजी *
दो०—श्रीकृष्णहिं देवकिसुतहिं, हरि वसुदेवकुमार ।
बंशीधर बन्दौं सदा, परमानँद दातार ॥
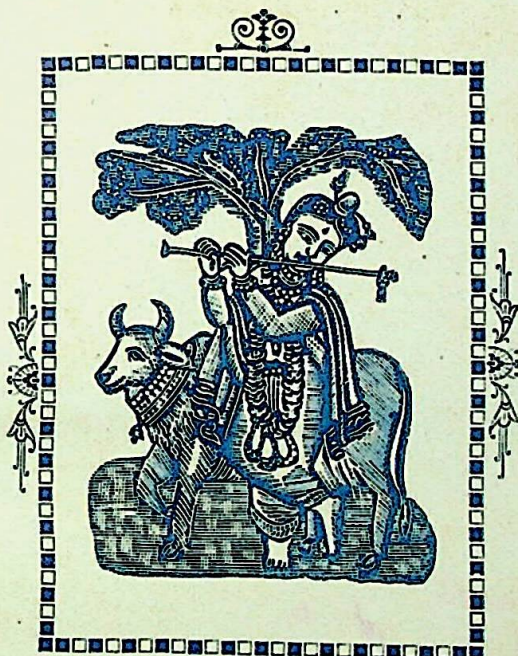
* श्रीगणेशाय नमः *

दशमस्कन्ध पूर्वार्द्ध की विषयानुक्रमणिका।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे प्रथमोऽध्यायः ।

श्लोक—विश्वसर्गोद्विसर्गादि नवलक्षणलक्षितम् ॥
श्रीकृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत् ।
कृता नवतिरध्याया दशमे कृष्णकीर्तये ॥ १
गोकुले मथुरायां च द्वारवत्यां ततः क्रमात् ।
कृष्णलीला त्रिधा प्रोक्ता तत्तद्भेदैस्त्वनेकधा ॥ २
आद्यैश्चतुर्भिरध्यायैर्ब्रह्मप्रार्थनयाऽवनेः ।
भारं हर्तुं हरेर्जन्म सप्रसंगं निरूप्यते ॥ ३
तत्र तु प्रथमे कंसः स्वमृत्युं देवकी सुतात् ।
श्रुत्वा भीतोऽवधीत्तस्याः षड्गर्भानिति वर्ण्यते ॥ ४

दो०—श्रीगुरुगनपति शंभु हरि, बंदि रमा रघुनाथ ।
दोहा छंद प्रबंध महँ, करत कृष्ण गुणगाथ ॥ १
दशमस्कंध चरित्र हरि, तहाँ प्रथम अध्याय ।
गगनगिरा सुनि कंसखल, भगिनीसुत हने धाय ॥ २

ॐ नमोभगवते वासुदेवाय ।

राजोवाच—कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः ।
राज्ञां चोभयवंश्यानां, चरितं परमाद्भुतम् ॥ १

दो०—वर्णन कीनो आपने, चंद सूर्य नृप वंश।
चरित जहाँ जन्मे प्रभू, पूर्णकला सहअंश ॥ १

छ०—मुनिश्रेष्ठ कहो नृप धर्मशील, यदुवंश में जैसे हरि आये ।२
अवतार धारि यदुकुल में हरि, सब जीवन भावन कहलाये ॥
विश्वात्मा जौन जौन लीला, कीनी मुनिजी वर्णन करिये।
सुनने को मन उत्साहित है, सेवक की विनय हिये धरिये ॥३
जेहि तृष्णारहित भी गानकरैं, भव औषध सुनै में प्यारा है।
हत्यारें बिन है कौन पुरुष, हरियश सुनने से न्यारा है ॥ ४
सुरजयी भीष्मआदिक तिमिगिल, मछरी सम बीर निगल जावैं।
कौरव अंबुधि अगाध हरिपद, चढ़ि नाव से पूर्वज थल पावैं ॥५

दो०—अश्वत्थामा अस्त्र से, मर्दित मेरो देह।
कुरु पाण्डव को बीज यह, हरि राख्यो करि नेह ॥

छ०—मा मेरी विकल जब शरण गई, प्रभु गर्भ मेरा रक्षा करिये।
लै चक्र गुप्त कोषी में जा, रक्षा की कहि धीरज धरिये ॥ ६
सब जीवों के बाहर भीतर, वो कालपुरुष दे जीव मरन।
माया से मनुजरूप धारे, शुभ चरित कहो हरि के विद्धन् ॥ ७
संकर्षण श्रीबलदेव, रोहिणी पुत्र आपने बतलाये।
किस भांति देवकी गर्भहु से, संबन्ध और तन बिन पाये ॥ ८
पितुगृह से केहि कारण मुकुंद, प्रभुजी ब्रज गोकुल माहिं गये।
सात्वतपति अपनी जाति माहिं, करि बास कहां पर रहत भये ॥६

दो०—ब्रजबसि केशव कह कियो, काह मधुपुरी माहिं।
मातु भाइ कंसहि हन्यो, किमि अयोग्य यह नाहिं ॥ १०

छ०—धरि मनुज देह वृष्णीहु संग, यदुपुरी में कितने वर्ष बसे।

रानी औ पुत्र हरिके कितने, केहि भांति चरित करि तहँ विलसे ॥ ११
औरहू सभी हरिचरित कहो, श्रद्धालू हौं विस्तार सहित । १२
जल अन्न बिना बाधै न क्षुधा, पिवौं तव मुख निकसी कथा अमृत ॥ १३
सूत उ०—हे शौनक श्रीशुक प्रश्न सुन्यो, नृप विष्णुरात (परीक्षित) से वचनकहें ।
धनिधन्य भूप हरिचरित सुनो, सुनतै जेहि कलियुगपाप दहे ॥ १४
श्रीशुक उ०—हे भूपति बुद्धि तुम्हारि विमल, जो कृष्ण कथा में प्रीति करै । १५
श्रीवासुदेव के कथा प्रश्न से, जग महँ तीन मनुष्य तरैं ॥

दो०—वक्ता श्रोता जन सुमति, प्रश्न करै सुप्रवीन ।
जैसे गंगा जलहु जग, तारि देत नर तीन ॥ १६

छ०—दैत्य ही भूप ह्वै अनगिनती, करैं पाप विकल महि मैं भारी ।
गौरूप धारि विधि शरन गई, हाहा करि नैन आँसु ढारी ॥ १७
ब्रह्मा की विनय करि दुःख कहे, सुनि देवन ब्रह्मा संग लियो । १८
जा पहुँचे क्षीरसमुद्र तीर, शिव सहित दया से भरो हियो ॥ १६
तहँ सावधान ह्वै पुरुष सूक्त, पढ़ि जगन्नाथ की विनय करी । २०
बानी सुनि समाधि महँ ब्रह्मा, देवन सों कहैं जो कह्यो हरी ॥
सुनि लेहु देवगन हरि बानी, करने महँ नाहिं विलंब करौ ।
पृथ्वीहू धीरज हियधारै, हरि की आज्ञा सब शीश धरौ ॥ २१

दो०—महिदुख सब हरिहैं हरी, यदुकुल लो अवतार ।
जब लगि हरि भूमी बसैं, हरैं दुष्टजन भार ॥ २२

छ०—वसुदेव गेह में हरि प्रगटैं, तहँ प्रगट होंय सुरदेवी सब । २३
हरि प्रसन्नता हित कृष्ण कला, शेषहु तनधरि करिहैं करतब ॥ २४
जगमोहनि विष्णु की माया भी, भगवती प्रगट तहँ होवैंगी ।
बलदेवहिं रोहिणि महँ राखैं, यशुदहिं निद्रा से मोहैंगी ॥ २५

श्रीशुक उ०—ब्रह्माजी देवन आज्ञा दै, पृथ्वी प्रबोधि निज धाम गये।२६
माथुर औ सूरसेन देशहु, श्री सूरसेन भोगते भये॥ २७
यदुपति मथुरा में वास करैं, मथुरा यदुकुल रजधानी है।
जिस मथुरा में हाजिरै रहैं, हरदम हरि शारंगपानी हैं॥ २८
दो०—ब्याह भयो वसुदेव को, कन्या देवकि संग।
बिदा भये दोउ रथ चढ़े, हर्षित भरे उमंग॥ २९
छ०—सुत उग्रसेन के कंस बहिन प्रिय, पठवन हित रथ हांकि चले।
सैकड़ों सजे रथ साथ दिये, गज चारि सैकड़ा सजे भले॥ ३०
दशहजार घोड़े दहेज में, रथ अट्ठारह सौ दै सज्जित। ३१
दोसौ दासी सब सजी बजी, दीं देवकजी निजकन्याहित॥ ३२
मंगल हित तूर्य मृदंग बजे, बर बहू सुरथ चढ़ि जाते हैं। ३३
बानी अकाश मारग में भई, अज्ञानी सुन समझाते हैं॥
देवकी में अष्टम गर्भ प्रगट हो, समय से तुझको मारैगा।
अति प्रेम से जिसको पहुँचावै, उसका सुत तुझे पछारैगा॥३४
दो०—यह सुनि पापी कंस खल, भोज बंश महँ नीच।
खड्ग खैंचि मारै बहिन, गहि कर चोटी खींच॥ ३५
छ०—निर्दयी निलज करै निंद्य कर्म, शांती देकर वसुदेव कहैं।
यह महाभाग जिनके हरि सुत, इस दुष्ट से वह नहीं लड़ा चहैं ३६
वसुदेवउ०—निजवंश प्रशंसितगुणतुम्हार, इसपर्वमेंनारीबहिनहनौ ३७
लेतेही जन्म हो साथ मौत, पैदा इतनी हिय माहिं गुनौ॥
चह मरै आज सौ वर्ष बाद, जीवों का मरण जरूरी है। ३८
तन छुटने पर यह जीव विवश, भोगता कर्म गति पूरी है॥
दूसरी देह रच कर पहले, यह पिछले तन को त्यागै है। ३९
तृन का कीरा धरि प्रथम पैर, तब पिछला उठाके भागै है॥

दो०—जीव कर्मगति लहत है, कीजै याहि विचार।
जीवन स्वप्न समान जग, करौ हिये निरधार॥ ४०

छ०—मन मनोरथों से युक्त देह, जागृतसी स्वप्न में तुर्त गहै।
देखा औ सुना नृप इन्द्रलोक, मैं हौं सोई भूले से लहै॥ ४१
प्रारब्ध भरो मन जहां जहां, धावै विकार सब पावै है।
तिस मनके संगही जीव संग, यह पंचतत्व तन आवै है॥ ४२
जलपूरित घट में चंद्रज्योति, प्रतिबिम्ब वायु से हिलता है।
निजरचितअपनगुण माहिं जीव, तिसमें करिमोह पिघलता है ४३
नहिं किसी से कबहूं बैर करै, अपना जो ह्यां कल्यान चहै।
जब इस प्रकार करनी का फल है, करि बैर सदा यह दुःख लहै॥४४

दो०—छोटी बहिन दीन अति, कन्या तुल्य तुम्हार।
दीनवसल मारहु न यहि, कीजै हिये विचार॥ ४५

श्रीशुक उ०—समझाया दुष्ट कहँ बहुविधिसे, राक्षसव्रतधर नहिंमानै है ४६
मारिहै दुष्ट यह निश्चय लखि, वसुदेव बात अनुमानै हैं॥४७
जबलौं बल बुद्धि हटाव मौत, नहिं हटै तो उसका दोष नहीं ४८
दे पुत्र बचालूं मौत से यह, कन्या होवैं कहिं मरैं यही॥ ४९
बिधिगती कठिन उलटा न होय, आया जावै गत आ जावै।
कहिं सोचै और हो जाय और, ब्रह्माकी गति को लख पावै ५०
बनअग्नि निकट के बृक्ष छोड़ि, जा दूर के बृक्ष जलावै है।
है भागभोग जीवों का कठिन, तन योग वियोग करावै है॥ ५१

दो०—यह विचारि वसुदेव हिय, जहँ लग आपन ज्ञान।
कंस दुष्ट है तहूँ पर, बहुत कीन सन्मान॥ ५२

छ०—मुख प्रसन्न खल से कहैं बात, मन दुखित हँसै से देखि परैं।

क्या करूं दुष्ट छोड़ै इसको, इस भांति बहुत अनुमान करैं ॥ ५३
वसुदेव उ०—नहिं इससे भय नभ बानी भै, भय जिन्हैं पुत्र इसके देवैं।
युक्ती से अर्थ यह भी निकलै, जिससे भय तुमको रखलेवैं ॥५४
श्रीशुक उ०—निज बहिन के वध से रुका कंस, सारग्राही निज घर आया।
वसुदेव हर्षयुत घर आये, नारी का प्राणदान पाया ॥ ५५
आठौ सुत भये देवकी में, प्रतिवर्ष सुता पीछे पाई। ५६
वसुदेव प्रथम सुत कीर्तिमान, जादियो झूठ मति नहिं लाई ॥ ५७

दो०—साधू काह न सहि सकैं, पंडित केहिकी चाह। ५८
कौन अधर्म न दुष्ट कर, ज्ञानी लगि उत्साह ॥ ५९

छ०—वसुदेवकी समता लखिकै कंस, मन सत्यनिष्ठ लखि खुश हो कहै६०
ले जाव न भय इससे मुझको, आठवें से मेरी मौत अहै ॥
अच्छाकहि सुतलै पिताचले, अजितेंद्री लखि नहिं हर्ष किया।६१
नंदादिगोप निजनारि सहित, यदुवंशी तिययुत जन्म लिया ६२
वे सब देवी अरु देव प्रगट भये, कंस तुम्हारे मारन हित। ६३
महि भार उतारैं दैत्यमारि, हरि सुनो बात देकर निज चित ॥६४
कहि नारद गे तेहि दैत्यपुत्र, यदुवंशी सुत ह्वै हरि मारैं। ६५
वसुदेव देवकी कैद किये, जो जो सुत होवै हनि डारैं ॥ ६६
पितु मातु भाय मित्रहु मारैं, तनपोषक महिलोभी भूपति। ६७
अपने को समझा कालनेमि, हरि हन्यो पूर्व अब करै विपति ॥६८

दो०—उग्रसेन निज पिता की, गद्दी लीन छोड़ाय।
यदु अन्धक सब वंश को, भूप बन्यो हरषाय ॥

भजन दादरा—दुष्टजन सब कहँ अति दुखदाई ॥ टेक ॥
संत संतपन गहैं सदा हिय, दुष्ट हिये कुटिलाई ॥ दुष्ट०

मातु पिता गुरु बन्धु मित्र सों, हठ करि लेत लड़ाई ॥ दुष्ट०
नेकी नेक बदी बद जग महँ, फल तुरतहि मिलिजाई ॥ दुष्ट०
माधवराम गहै नित नेकी, भजै श्याम हरषाई ॥ दुष्ट०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे प्रथमोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वितीयोऽध्यायः

श्लोक—द्वितीये कंस घाताय देवक्या गर्भतो हरिः ।
ब्रह्मादिभिः स्तुतः सा च सांत्वितेति निरूप्यते ॥

दो०—कंस नाश हित कृष्ण हरि, गर्भ देवकी जाय ।
बिधि सुर स्तुति शांतिपन, कथा द्वितीये गाय ॥

श्रीशुक उ० श्लोक—प्रलम्ब वकचाणूरस्तृणावर्तमहाशनैः ।
मुष्टिकारिष्टद्विविदपूतनाकेशिधेनुकैः ॥ १

दो०—प्रलम्ब वक चाणूर खल, तृणावर्त सब दुष्ट ।
मुष्टिक द्विविद पूतना, केशी वृषभ बलिष्ट ॥ १

छ०—औरहू असुर नृप संग धरे, बाणासुर भौमासुर जितने ।
यदुवंशिन को दुख दिया अधिक, लै जरासंध आश्रय तितने २
भागे ते बसे जाय बहु थल, कुरु केकय शाल्व विदर्भ देश ।
कोइ निषध विदेह कोशला में, यदुवंशी तहँ दुख सह हमेश ॥३
रहते हैं शरण कोई बेबश हो, छै पुत्र बहिन के कंस हने । ४
सातवें शेष ज़ाहिर अनंत, आ गर्भ दिये सुख शोक घने ॥ ५
विश्वात्माहरि लखि कंस से भय, यदुवंशिन हित टेरी माया । ६
गऊ गोपपूर्ण गोकुलहि जाव, मम आज्ञा मानि करौ दाया ॥

वसुदेवनारि रोहिणी तहां हैं, औरन का कुछ पता नहीं। ७
मम अंश शेष देवकी गर्भ से, खैंचि रोहिणिहि धरौ सही॥ ८
दो०—पुत्रभाव गहि देवि हम, प्रगटि देवकी माहिं।
मातु बनाओ जाय तुम, नंदघरनि यशुदाहिं॥ ९
छ०—सब वरदायक तुम होहुदेवि, पूजहिं जन धूपादिक दैकै १०
स्थान रचैं बहु दुर्गाजी, वैष्णवी कालि नामहु लैकै॥ ११
विजया कुमुदा चंडिका अम्ब, माधवी कन्यका कृष्णा कहि।
माया नारायणि ईशानी, शारदा अम्बिका नामहु गहि॥ १२
खैंचे से संकर्षण सुरूप से, राम बहुत बल बलदाऊ। १३
आज्ञा गहि हांकरि महि आई, सब किया न पाया लखकाहू॥ १४
माया हरिकैं देवकी गर्भ, रोहिणी उदर में धरि दीना।
हा गर्भ सातवां लोप भया, भय से सबने अचरज कीना॥ १५
दो०—विश्वात्मा भगवान हरि, भक्तन भय हरतार।
मन महँ श्रीवसुदेव के, अंशभाग निज धार॥ १६
छ०—ईश्वरी तेज वह धारण कर, रवि सम सब कहँ दुर्धर्ष भये।
वसुदेव तेज़ हरि का धारे, अब सोहैं अद्भुत रूप लिये॥ १७
जग मङ्गलकारी च्युत न अंश, देवकी शूरसुत से धारा।
मनहीसे सबका आत्मभूत, जिमि पूरब दिशि शशि उजियारा १८
सब जग निवास को हिये धारि, नहिं कंसभवन में शोभपावै।
ज्यों मूढ हिये में सरस्वती, त्यों अग्निशिखासम छविछावै॥ १९
लखि प्रभासे दीपित भवन कंस, अपने मनमें अनुमान करै।
मम शत्रु हरी आ गया गर्भ, नहिं ऐसी शोभा कभूँ धरै॥२०
क्या करूँ परिश्रम बृथा न हो, नहिं करतब भी खाली जावै।
है बहिन नारि पुनि गर्भवती, मारे से महा अयश छावै॥ २१

दो०—जीवित मरे समान है, करै कर्म जो नीच।
निंदा सब पीछे करैं, परै नर्क दुखकीच ॥ २२

छ०—इस घोर भाव से हटा कंस, करि बैर जन्म हरि देखै है। २३
बैठे ठाढ़े खाते सोते, सोचै जग हरिमय लेखै है ॥ २४
ब्रह्मा शिव सुर मुनि नारदादि, चुप आकर स्तुति करते हैं। २५
सत्यव्रत सत्यहि परत्रिसत्य, प्रभु सत्ययोनि तन धरते हैं ॥
ऋत सत्यनेत्र हरि सत्यात्मा, सत्य की शरण हम हैं आये। २६
है एक प्रकृति स्थान दुःख सुख, फल हैं त्रिगुण मूल गाये ॥
धर्मार्थ काम मोक्षहू चार, रस ज्ञानेन्द्री हैं पाँच विधान।
षट ऊर्मी भूखप्यास मन औ, प्राण स्मृति शोक मोह लो मान ॥

दो० सप्त धातु तरु की त्वचा, शाखा आठहु धार।
महि जल अग्नि पवन गगन, मन बुधि है हंकार ॥

छ०—नवद्वार नैन मुख नाक कान, मलमूत्रत्याग इन्द्री जानो।
दश छद प्राणादि[1] पाँच नागहु, कूर्मादिक[2] पांचहु पहिचानो ॥
दो पक्षी ईश्वर जीव यहाँ, यह आदि वृक्ष जग माया है। २७
तुमसे ह्वै ठहरै आपहि में, तुमको पालक ठहराया है ॥
माया में फँसे नाना प्रकार, लखते ज्ञानी तुम्हें एक रूप। २८
जगरक्षाहित धरते सरूप, ज्ञानात्मा तन अद्भुत अनूप ॥
सात्विक भक्तों को सुखदाई, दुष्टों के नाशहित तन धरते। २९
चितसमाधिसे तुममें लगाय, पदकमलनाव करि भवतरते ॥३०

दो०—भक्त भये भव पार सब, छोड़ि यहाँ पदनाव।
जन पर दाया करत हरि, चढाय पार लगाव ॥ ३१

---

[1] प्राण अपान व्यान उदान समान [2] नाग कूर्म कृकल देवदत्त धनंजय।

छं०—हे कमलनैन अभिमानी जे, नहिं प्रेम आपमें मंदमती ।
तप आदिक करि ऊपर जावैं, पद त्यागि गिरैं लेवैं कुगती ॥ ३२
हे माधव भक्त तुम्हार कभी नहिं, सतमारग से गिरते हैं।
तुमसे रक्षित सुर शिर पद धरि, निर्भय सब लोक विचरते हैं॥३३
प्रभु विशुद्ध तन धारे हो आप, सब जीवों के रक्षाकारी।
तप योग समाधि औ वेद क्रिया से, तव पूजन हरि विस्तारी ॥३४
यह सत्वरूप जो प्रगट न हो, अज्ञान विनाशक ज्ञान नहीं ।
जिसके जिससे गुण प्रकाश हैं, वह सत्यरूप प्रभु आप सही ॥३५

दो०—नामरूप गुण कर्म नहिं, साक्षी सब में आप ।
मन वाणी से अलग प्रभु, गहैं न क्रिया कलाप ॥ ३६

छं०—सुनि गुनि सुमिरन करि नाम कर्म, मंगलकारी गुण गाते हैं
करि क्रिया चरण अर्पण करते, तुरतै भवसे तर जाते हैं ॥ ३७
बड़ भाग आप निज चरण धारि, पृथ्वी का भार हर लेवैंगे ।
तव पदसे अंकित मही निरखि, प्रभु हम सब आनँद सेवैंगे ॥३८
नहिं जन्म आप का अज हैं प्रभु, लीला करते यह धारैं हैं।
जग रचिकै पालत नाश करैं, अभयाश्रय भव उद्धारैं हैं ॥ ३९
कच्छप नृसिंह मत्स्यहु वराह, नृप विप्र देव अवतार धरैं ।
त्रिभुवनरक्षक भूभारहरन, यदु उत्तम प्रभू प्रणाम करैं ॥ ४०
बड़ भाग अम्ब परपुरुष हरी, भगवान कोष में आये हैं।
मत डरो कंस को नाश करैं, जगरक्षक तव सुत गाये हैं ॥ ४१

श्रीशुकउ० दो०—हरि स्तुति करि देव सब, नेति नेति करि गान।
सब सुर निज २ धामगे, बिधि शिव गुणहिं बखान ॥४२

भजन—गर्भ में श्याम लखि सब सुर, विनय अपनी सुनाते हैं।
करैं लीला प्रभू तन धरि, कहीं आते न जाते हैं ॥ टेक ॥

जगत है वृक्ष लख लीजै, सहारे हरि के ठहरा है।
नमूना देह में लख लो, असत सत द्वै लखाते हैं॥ गर्भ०
बनै ज्ञानी विचारैं ब्रह्म, सच है मुक्त हो जावैं।
भरे हंकार से दिल हैं, न सपने मुक्ति पाते हैं॥ गर्भ०
जगत जंजाल को तज कर, गहैं प्रभुपदकमल हरिजन।
नावपद पाय भव तरते, तरो सब को सिखाते हैं॥ गर्भ०
कहे शास्त्रों ने सब साधन, हमैं कोई न जँचते हैं।
तरैं तारैंगे माधवराम, हरिगुन गान गाते हैं॥ गर्भ०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वितीयोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे तृतीयोऽध्यायः।

श्लोक—तृतीये निजरूपेण संभूतस्तु हरिस्वयम्।
पितृभ्यां संस्तुतो नीतः पित्रा भीतेन गोकुलम्॥

दो०—तृतीय में निजरूप से, प्रगटे श्रीभगवान।
मात पिता स्तुति करी, गोकुल पितु ले जान॥

श्रीशुक० उ०—फिर परम सुहावन समय भया, ग्रह नखत शांत शुभ हैं तारा। १
सब प्रसन्न दिशि शशिछटा विमल, मंगलमय नगर देश सारा॥ २
सरिता प्रसन्न जलह्रदमें कमल, खिल रहे भ्रमर खग शब्दकरैं।३
बनफूले त्रिविधि बयार चलै, विप्रों की अग्नी ज्योति धरैं॥ ४
भक्तों के हृदय प्रसन्न, प्रगट हों प्रभु नभ में दुन्दुभी बजैं।५
किन्नर गंधर्व सिद्ध चारण, गावैं विद्याधर नृत्य सजैं॥ ६

सुरमुनि सब करते सुमन बृष्टि, सागर पीछे घन गर्जैं मंद । ७
तम नाश चंद्रमा उदय भये, देवकी में प्रगटे प्रभु स्वच्छंद ॥ ८

दो०—अद्भुत बालक दृगकमल, शंख चक्र भुजचार ।
गल कौस्तुभमणि पीतपट, मेघश्याम छविधार ॥ ९

छं०—मणिजटित क्रीट कुंडल धारे, केशों की शोभा न्यारी है ।
कंकणकर किंकिणि कटि सोहैं, प्रभु छवि वसुदेव निहारी है ॥ १०
विस्मय ह्वै नैन प्रसन्न भये, लखि आनक दुन्दुभि मोद भरैं ।
कृष्णावतार उत्सव से खुश, दशहजार गौवें दान करैं ॥ ११
लखि परमपुरुष नमि हाथजोड़ि, भय त्यागि प्रभूकी विनती की ।
सूतिकाभवन छवि से प्रकाश, हरि प्रभावलखि जगरुचि फीकी १२
वसुदेव उ०—प्रकृतीसे परे परपुरुष आप, अनुभव सरूप बुधिके साखी १३
नहिं भीतर भीतरसे दीखो, गुण तीन प्रकृति जग रचिराखी ॥ १४

दो०—अविकारी महदादिजे, गहि विकार बहु रूप ।
पृथक् पृथक् मिलि एक में, रचैं विराट अनूप ॥ १५

छं०—तिनमें मिलि पैदा से दीखो, हो प्रथम न तिनके संगभये १६
बुधिसे गहिबे लायक गुणसे, नहिं सपने में भी ढके गये ॥ १७
सर्वात्मा गुणों में लख पड़ते, अज्ञानीजन दिल में धरते ।
अनुवाद विवाद बिना बाहर, हरदम ज्ञानी को लख परते ॥ १८
तुमसे जग रचना पलै नाश, अविकारी निर्गुण से कहते ।
प्रभुब्रह्म में नहीं विरोध कोई, प्रभुही से गुण गुणपन लहते ॥१९
जगरक्षाहित सतरूप धारि, संसार की रक्षा करते हो ।
सृष्टी हित रज गुन से ब्रह्मा, तम रुद्र सकल जग हरते हो ॥ २०

दो०—जग रक्षा हित रूप धरि, प्रगटे ह्यां सर्वेश ।
असुर रूप नृप भार महि, रहै न पावै लेश ॥ २१

छ०—खल जन्म आपका ह्यां सुनिके, जिसने तव भाई मार दिये।
ज्यों पुरुष खबर जाकर देवैं, आइहै कंस हथियार लिये॥ २२
श्रीशुक उ०—प्रभु महापुरुष ही पुत्र भये, माताने छवी निहारी है।
भय व्याकुल मृदु हँसि रूप निरखि, देवकी विनय अनुसारी है २३
देवक्युवाच—अव्यक्तब्रह्म निर्गुण ज्योती, निर्विकार आदि सरूप धरे।
निर्विशेष चेष्टारहित सत्य, विष्णू अध्यात्म प्रकाश करे॥ २४
द्विपरार्द्ध अंत में लोक नाश, सब महाभूत माया में मिले।
माया प्रभु में लय हो जावै, रहैं शेष रूप हरि ही इकले॥ २५

दो०—माया चालक काल के, प्रेरक जगत बनाय।
निमिष वर्ष से कल्प लौं, लेहु शरण हरि धाय॥ २६

छ०—भय विकल जीव सब लोक फिरै, नहिं मौत से अभय कभी पावै।
पदकमल पाय सुख से सोवै, फिर मौत न सपने नगचावै॥ २७
खल कंस से प्रभु रच्छहु हम सब, जनरच्छक भय सब हार लीजै।
यह दिव्यरूप है ध्यान योग, नहिं मांस दृष्टि संमुख कीजे॥ २८
मेरे में जन्म खल नहिं जानै, मधुसूदन कीजे ऐस गती।
तुम्हरे हित व्याकुल फिरै कंस, मैं डरूँ नारि हौं थिर न मती॥२९
यह रूप अलौकिक हरि लीजै, विश्वात्मा महिमा भारी है।
गद पद्म शंख चक्रहु धारे, छवि चतुर्भुजी बलिहारी है॥ ३०

दो०—अंत माहिं जग तन धरो, परमपुरुष भगवान।
सो मेरे उर में बसे, यह अचरज बलवान॥ ३१

श्रीभगवानु० छ०—तुम पूर्व सृष्टिमें पृश्निरहे, तव नारी सुतपा पापरहित ३२
सृष्टी हित बिधि की आज्ञा लै, तपकीना बश करि इन्द्री चित ३३
सहि घाम वायु वर्षा सब दुख, स्वासा चढ़ाय मन शुद्ध किया ३४

वायू भोजन खा सूख पात, मम आराधन में चित्त दिया ॥ ३५
देवतों के बारा सहस गये, दोउ कीन तपस्या अति भारी । ३६
तप भक्ति से झट प्रसन्न ह्वै कै, प्रगटे हम यही मूर्ति धारी ॥ ३७
मांगो बर प्रगटि कहा तुमसे, मम तुल्य पुत्र तुमने माँगा । ३८
मोहित मायासे मुक्ति न ली, जगसुखतजि सुतमें मनलागा ॥ ३९

दो०—मम सम सुत बर दै गये, पूर मनोरथ आप ।
जगसुख पाये पुत्र हरि, छूटे सब संताप ॥ ४०

छ०—मेरे समान नहिं पुत्र देखि, तव पुत्र हुआ इस रूपसे आय ४१
हूं पृश्नि गर्भ पुनि कश्यप से, अदिती में उपेंद्रकी पदवी पाय ४२
वामन भी मेरा नाम हुआ, तीसरी वार इसही तनसे ।
सुत हुआ तुम्हारा लखो आप, है सत्यकथन समझो मनसे ॥ ४३
सुमिरन को रूप दिखाया यह, नहिं ज्ञान होय लघु बाल बने । ४४
सुतभाव करो चहै ब्रह्मभाव, गति लहौ हमारे प्रेम सने ॥ ४५
जो कंस से डरते आप होंय, हमको गोकुल पहुँचा दीजै ।
प्रगटी यशुधा में मम माया, ले आवो सभी काम सीझै ॥

श्रीशुकउ० दो०—अस कहिकै हरि मौन भे, माता पिता निहार ।
निज माया से शीघ्र ही, बालरूप प्रभु धार ॥ ४६

छ०—प्रभु प्रेरित झट सूतीघर से, बालक लैके वसुदेव चले ।
उसही क्षणमें यशुधामें झट, प्रगटी माया हों काज भले ॥ ४७
खुलिगे कपाट पहरू सोये, शृङ्खला कील टूटे ताले । ४८
वसुदेव चले लै जल वर्षै, हुए शेष फणों से रखवाले ॥ ४९
यमुना बाढी गंभीर नीर, भयदायक भवँर पड़ैं भारी ।
पद परसि सिंधु ज्यों विष्णू को, दी मारग अति मंगलकारी ॥ ५०

नंद ब्रज में वसुदेव पहुँचि, सब सोते लखि धरि पुत्र दिया।
कन्या लेकर चलभये तुरत, घर आयगये सिधि काज किया॥ ५१

दो०—कन्या देवकि पास धरि, बेड़ी लीनी डार। ५२
जाना यशुधा कुछ भया, नहीं चिन्ह निरधार॥ ५३

भजन—वसुदेव के भवन में, प्रगटे कुँवर कन्हाई।
लीला विचित्र हरि की, नहिं बुद्धि में समाई॥ टेक॥
तप और जन्म कीना, बर विष्णु आय दीना।
हरि ही को पुत्र लीना, मुक्ती गये भुलाई॥ वसुदेव०
अपने सदृश न पाया, सुत आपको बनाया।
सोइ रूप ह्यां दिखाया, झट बालरूप लाई॥ वसुदेव०
वसुदेव लै सिधाये, जाते न रह पाये।
प्रभु चरण ज्यों छुवाये, तरवा तरे लो आई॥ वसुदेव०
सुत दै सुता को लाये, पगबंधहू बँधाये।
माधव चरित सुनाये, सुनि भक्ति मुक्ति पाई॥ वसुदेव०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे तृतीयोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्थोऽध्यायः।

श्लोक—चतुर्थे चंडिका वाक्यमाकर्ण्यातिभयाकुलः।
दुर्मंत्रिभिर्हितं मेने कंसो बालादि हिंसनम्॥

दो०—देवी की बाणी सुनी, कंस बहुत घबरान।
चौथे में सल्लाह करि, बालक बध हित ठान॥

श्रीशुक उ० छ०—बाहर भीतर के बन्द द्वार होगये, बालधुनि सुनि धाये। १
दरवानी तुर्त कंस पै जा, कुछ भया जिसे पारिख लाये॥ २
आगया काल झट सेज तजै, खुले बाल विकल हो धाया है।३
लखि बहिन देवकी दीन कहै, यह बेटी कीजै दाया है॥ ४
बहु हने पुत्र तनतेज अग्नि, मिली भाग से कन्या लखिलीजै।५
लघु बहिन हने सुत, बेटी यह, है पेट पोछिनी दे दीजै॥ ६
श्रीशुकउ०—छाती में लगाये रोती है, उसने झट हाथसे खींचलिया।७
गहि पैर शिलापै पटक दई, स्वारथवश सौहृद त्याग दिया॥ ८

दो०—छटकि हाथ से निकरि वह, देवी गई अकाश।
आठ भुजा धारण किये, अस्त्रों सहित प्रकाश॥ ९

छ०—तन दिव्य अभूषण बस्त्रधरे, गद शंखचक्र धनुबाण धरें १०
अप्सरा नृत्य गंधर्व सिद्ध, मुनिपूजि विनय जैकार करें॥ ११
कहती क्या मूढ़ मुझे मारै, रिपु प्रगट भया मत हनै दीन। १२
अस कहि देवी भगवती जाय, बहु ठौर नाम स्थिती कीन॥ १३
सुनि कंस बहुत विस्मय लाया, वसुदेव देवकी खोलि दिये।१४
बहनोई बहिन के पांव पड़े, कहै बृथा पुत्र मैं हनन किये॥ १५
निर्दई निलज अज्ञानि मूढ़, मरि कौन लोकको हम जावैं।१६
अब लगे देवता झूठ कहैं, जिसके बस हम सुत बध लावैं॥ १७

दो०—महाभाग मत सोचिये, कर्म भोग लें जीव।
एक ठौर रहते नहीं, दैव अधीन अतीव॥ १८

छ०—घट आदिक जैसे बनि फूटै, मिट्टी सोइ है तनमें आत्मा १९
अज्ञानी आत्मा मृतक लखैं, भव तजै न पावैं परमात्मा॥ २०
मत सोचो मुझ से मरे पुत्र, भोगता कर्म यह जीव अवश। २१
मारूँ मारा आत्मा में लखै, अज्ञानी मूढ़ रहै परबश॥ २२

साधू दयाल मम क्षमहु दोष, पैरों पड़ि कंस रुदन करता। २३
दिखलाय प्रेम दोनों में बहुत, छोड़ा दिल में धीरज धरता॥ २४
तजि कोप देवकी वसुदेवहु, हँस के कंसहिं समझाते हैं। २५
ऐसे है जीव कर्म भोगें, अज्ञानी निज पर लाते हैं॥ २६

दो०—शोक हर्ष भय बैर मद, लोभ मोह में लीन।
मारैं मरैं कुभाव से, रहैं सदा अति दीन॥ २७

श्रीशुकउ०छं०—यों प्रसन्न करि दोनोंको कंस, आज्ञालेघरमेंआया है २८
गई रात बोलाये मंत्री सब, देवी का हाल सुनाया है॥ २९
सुनि देवशत्रु करि कोप कहैं, नहिं समझैं बैर बढ़ाते हैं। ३०
जो ऐसा नगर ग्राम पुर में, छोटे बालक मरवाते हैं॥ ३१
डरपोक देवता क्या करिहैं, सुनि धनुष शब्द डर जाते हैं। ३२
जिस समय आप छोड़ते बाण, भग छिपके प्राण बचाते हैं ३३
धरिशस्त्र कोइ जोड़तेहाथ, खोले हैं कच्छ (कांछ) हम डरे कहैं।३४
यह दशा देखि सुर दीन भये, नहिं आप मारना उन्हें चहैं॥३५

दो०—कहने भर के शूर सुर, पीछे करैं प्रलाप।
शिव बनवासी छिपे हरि, ब्रह्मा तपते ताप॥ ३६

छं०—लघु बली इन्द्र तौ भी सब सुर, मानैं नहिं हम जड़ काटैंगे ३७
तन होय रोग झट दवा करै, इन्द्री दाबै रिपु डाटैंगे॥ ३८
देवों की मूल हरि वहां धर्म, गौ विप्र यज्ञ तप जड़ तिसकी।३९
तपसी याज्ञिक ब्राह्मण मारो, गौवैं लेवैंगी शरण किसकी॥४०
गौ वेद विप्र तप सत्य दया, शमदम मख सब हरिके तन हैं।४१
हरि देवमित्र बैरीहमार, विधिसहित उचित सुर हिंसन है॥ ४२
श्रीशुक उ०—मंत्रीसे मंत्रकरि दुष्ट कंस, हिंसा से अपना हित लाया ४३
सब को मारो धरि विविधि रूप, दे हुक्म आप महलों आया॥४४

दो०—मूढ तामसी असुर सब, निकट मौत धरि बैर। ४५
आयू श्री धन यश हरै, साधुबैर नहिं खैर॥ ४६

भजन—बैर से सपने नहिं कल्यान॥ टेक॥
गऊ विप्र औ दीन सतावे, चाहै धन यश मान।
सहै दुःख दुर्गति ह्यां भोगै, अंतहु नर्क निदान॥ बैर०
काल युक्ति से टरै न टारे, ठानै बहुत विधान।
हरि आराधन दया बचावै, सो नहिं ठानै ठान॥ बैर०
बड़े बड़े बहु उपाय साधे, बचैं हमारे प्रान।
हारे मरे पलक में सबही, मृत्यू अस बलवान॥ बैर०
निश्चय संत शास्त्र बतलावैं, होय नहीं हैरान।
माधवराम धीर धरि हरि भजु, राखैंगे भगवान॥ बैर०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्थोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचमोऽध्यायः।

श्लोक—पंचके जातकं नन्दः सूनो कृत्वा महोत्सवम्।
गत्वाऽथ मथुरां प्राप वसुदेवागमोत्सवम्॥

दो०—पुत्र जन्म उत्सव महा, पँचवें नंद मनाय।
गे मथुरा वसुदेव मिलि, परम हर्ष हिय छाय।

श्रीशुक उ० छं०—सुनि पुत्रजन्म आनन्द भया, मन नंद परम आनँद पाया।
स्नान कीन शुचि वस्त्र धारि, दैवज्ञ द्विजों को बुलवाया॥ १
स्वस्त्ययन कराया जातकर्म, पितृ देवों के पूजन कीने। २

दो लक्ष गऊ मजाय दीनी, धरि रत्न स्वर्ण तिलगिरि दीने ॥ ३
महि काल से तन स्नान शुद्ध, संस्कार गर्भ इन्द्री तप से ।
मख से द्विज दान से धन अरु मन, संतोषसे, आत्मज्ञान जपसे ॥ ४
द्विज सूत बंदि मागध मंगल, कहि गान नृत्य दुन्दुभी बजैं । ५
गृह गृह ब्रज अंतर द्वार चित्र, ध्वज पताक बन्दनवार सजैं ॥ ६

दो०—गौ बृष बछरा साजि कै, नाचहिं नन्द दुआर ।
हलदी तेल विचित्र रँग, वसन अभूषन धार ॥ ७

छं०—बहुमोल वस्त्र आभूषण धरि, शिर पाग भेट लै गोप चले । ८
गोपी सुनि पुत्रजन्म सजि सजि, धारैं आभूषण बस्त्र भले ॥ ९
नव कुंकुम सोहै कमलमुखैं, लै भेट नन्द घर आती हैं । १०
मणि कुंडल कंठहार हिलते, सजि सुमन चुवैं छवि पाती हैं ११
दै भेट आरती उतारि लखि, हो चिरंजीव अशीष देवैं ।
दधि गोरस रँग से उत्सव करि, नाचैं गावैं[१] मन सुख लेवैं ॥ १२
बाजे विचित्र बज रहे कृष्ण, विश्वेश्वर नन्द ब्रजै आये । १३
उत्सव दधि दूध से गोप करैं, मक्खन मुख लेपैं सुख छाये ॥ १४

दो०—अति उदार नँदराय जी, गो धन भूषण चीर ।
मागध सूत याचकन, देहिं प्रसन्न शरीर ॥ १५

छं०—कामना पूरि सबकी कीनी, हरि आराधन सुत उदय गुनै १६
करि नन्द मान रोहिणी हर्षि, सजि आनँद मंगल गान सुनै १७
सब ऋद्धि युक्त ब्रजनन्द भये, हरिनिवासथल उस छनसे भया ।
लक्ष्मी क्रीड़ा गृह मनहु सुथल, आनंद परमसुख छाय गया ॥ १८
गोकुल रक्षा में गोप राखि, वार्षिक कर कंसहि देन चले । १९

[१] इसी अध्याय का अंतिम भजन गाइये ।

वसुदेव नन्द आये सुनिकै, कर दिया जाय तहँ नंद मिले ॥२०
लखि मिले देह से प्राणतुल्य, भरि अंक प्रेम उर छाया है। २१
बैठाये पूजि कुशल पूँछी, मन पुत्र में बचन सुनाया है ॥ २२

दो०—वयस अधिक हे नन्दजी, सुत नहिं पाये आप।
हरि दाया से सुतभया, मिटे सकल सन्ताप ॥ २३

छ०—ज्यों पुनर्जन्म मिलगये आप, प्रियदर्शन दुर्लभजग ऐसे २४
सुहृदों के चित्रकर्म इकथल, नहिं बसै नदी में तृण जैसे ॥ २५
गोचारण तृण जलसे है पूर्ण, जहँ आप सुहृदयुत रहते हो। २६
है कुशल मातुयुत सुत मेरा, पितु गुनै तुम्हैं तुम चहते हो॥ २७
धर्मार्थ काम परिवार हेत, जो कुल दुख पावै सुख निष्फल।
निजधन से कुलके सुखी होंय, हरि भजै तभी तन धनहै सफल २८
नन्द उवाच—सुत भये देवकीमें तुमसे, सब कंस हने नहिं एक रहा।
इक सुता बची वह स्वर्ग गई, उसने भी औरहि बचन कहा॥ २९
जग भागनिष्ठ भागहि मानैं, नहिं तत्व लखै वह मोहकरै। ३०
वसुदेव उ०—कर दिया हमैं मिलि सुख आया, हों तहां उपद्रव जाहु घरै॥ ३१
श्रीशुक उ० दो०—तब नन्दादिक गोपसब, बृषभ यान जुतवाय।
आज्ञा लै वसुदेवकी, गोकुल गे हर्षाय ॥ ३२

भजन—श्रीनन्दजी मगन हैं, जन्मे कुँवर कन्हाई।
पाया अनन्द भारी, दुख की दशा भुलाई ॥ टेक ॥
भादौं निशा अँधेरी, भै चन्द्र की उजेरी।
प्रभु आपदा निवेरी, दियो पुत्रमुख दिखाई ॥ श्रीनन्दजी०
द्विज सूत बन्दि आये, पितृ देव सब मनाये।
बहु दान मान पाये, हिय हर्ष नहिं समाई ॥ श्रीनन्दजी०

सब गोपी गोप आवैं, भेटैं अनेक लावैं।
लै मोद नाचि गावैं, दधिकीचहू मचाई ॥ श्रीनन्दजी०
कोइ आरती उतारैं, कोइ वार फेर डारैं।
माधव छवी निहारैं, तन मन सुरति भुलाई ॥ श्रीनन्दजी० ॥१

हमैं नंदनंदन प्राण प्यारा ॥ टेक ॥
सखि कोइ आवैं कोई जावैं, कोइ धन धाम बिसारा ॥ हमैं०
कोइ सखि गावैं कोई बजावैं, कोइ सखि रूप निहारा ॥ हमैं०
नन्दभवनमें आनँद पूरण, बहे प्रेम की धारा ॥ हमैं०
जैजै करहिं कन्हैयासुतकी, भक्तन प्राणअधारा ॥ हमैं०
माधवराम निहारै छविको, अपना सर्वस वारा ॥ हमैं० ॥२

यशोदा रानी चिरंजीव तेरो लाला ॥ टेक ॥
शिव ब्रह्मादिक ध्यान न पावैं, भयो तेरो गोपाला ॥ यशोदा०
जनरक्षक सन्तन को सर्वस, भक्तन को प्रतिपाला ॥ यशोदा०
बड़े भाग लह्यो परब्रह्मसुत, वह हरि दीनदयाला ॥ यशोदा०
माधवराम रूप लखि मोहे, तजि दीनो जगजाला ॥ यशोदा० ॥३

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचमोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षष्ठोऽध्यायः।

श्लोक—षष्ठे सख्युर्गिरा नन्दो व्रजं गच्छन्मृतां पथि।
दृष्ट्वा तु राक्षसीं तस्या मृत्युं श्रुत्वाऽथ विस्मतः॥

दो०—छठवें मित्र बचन सुने, नन्द चले ब्रज जाहिं।
देखि पूतना मरी मग, विस्मित मन घबराहिं॥

श्रीशुक उ० छ०—वसुदेववचन नहिं झूंठ समझ, भयसे शंकित हरिशरणगये १
पूतना पुत्रघातिनि पठई, शिशु ढूंढत ब्रज पुर ग्राम नये ॥ २
जहँ हरिके कीर्तन श्रवण नहीं, तहँ राक्षस बहु विधि विघ्नकरैं ३
आई है पूतना नन्द ब्रजहि, अति सुन्दर अपनो रूप धरैं ॥ ४
शुभ केशपाश में गुँथे फूल, भारी नितम्ब कटि पतली है।
काननकुंडल अँग वस्त्र सोह, भूषण छवि हारहु हसली है ॥ ५
बाँकी चितवनि मन गोप हरै, जनु लक्ष्मी पति ढूंढने चली। ६
आई है भाग से नन्द घरैं, जिमि छिपी आग लखि बातभली ॥ ७

दो०—बालक मारक ग्रह निरखि, दृग मूँदे भगवान।
गोद उठायो बालकहि, सर्प रज्जु जिय जान ॥ ८

छ०—तरवार तुल्य है कड़ा चित्त, ऊपरसे दिव्यलखि मातु खड़ी ९
गोदी में लै स्तन में ज़हर, दीना मूँठी हरि गही कड़ी ॥ १०
पी गये प्राणहू रोषसहित, ब्याकुल छोड़ो छोड़ो कहती।
कर पद पटकै तन स्वेद बहै, नैनों से अश्रुधार बहती ॥ ११
गर्जन से मही पहाड़ हिलैं, दश दिशि में पूरित शब्द भया।
पृथ्वी पर गिरे बहुत जन हैं, घर बाहर तासु शरीर गया ॥ १२
मर गई पूतना केश चरण, हाथों को बेहद फैलाये।
सुरपति के बज्र से बृत्रासुर, मरि गिरे तैस उपमा पाये ॥ १३

दो०—हर की फालैं दाढ़ हैं, मुख मानो गिरिखोह ।१४
स्तन गिरिके शिखर ज्यों, लाल लाल द्युतिसोह ॥ १५

छ०—तन से छः कोस के तरु टूटे, अति अद्भुतरूप लखाई है।
हैं गढ़ा नैन ज्यों सिंधु उदर, भुज सेतु से उपमा पाई है ॥ १६
लखि गोपी गोप डरैं तनको, शिर हृदय कान जनु फूटे हैं। १७

जा लखा खेलते हियमें बाल, विस्मित गोपी निधि लूटे हैं ॥ १८
लै यशुधा रोहिणि गोपी सब, गोपुच्छ फेरि युक्ती करतीं । १६
गोरज लगाय गोमूत्र न्हाय, बारहू अंग रक्षा धरतीं ॥ २०
जल पर्शि हाथ पद सब अँगमें, पढ़िमंत्र बीज सब न्यास करैं । २१
अज चरण, जानु मणिमान रक्षि, उरु यज्ञहु श्रीभगवान् धरैं ॥

दो०—कटि अच्युत हयमुख उदर, केशव हिय उर ईश ।
इनहु कंठ, भुज विष्णु, मुख वामन, ईश्वर शीश ॥ २२

छ०—चक्री आगे गदाधर पीछे, धनु असिलै मधुहा दोउ बगल ।
कोनों में शंख उरु गीत उपर, महि गरुड़ सब तरफ रक्षहिं बल २३
तव इन्द्री रक्षहिं हृषीकेश, नारायण रक्षहिं पञ्चप्रान ।
चित श्वेतद्वीप पती रक्षहिं, मन योगेश्वर रक्षा विधान ॥ २४
बुद्धी को रक्षहिं प्रश्निगर्भ, आत्मा भगवान बचावैंगे ।
गोविंद खेलते में रक्षहिं, माधव सोते में आवैंगे ॥ २५
वैकुंठपती चलते राखैं, बैठे में श्रीपति रखवाले ।
खाते में यज्ञभोक्ता रख, सबही ग्रह भय से प्रतिपाले ॥ २६

दो०—यातुधानि औ डाकिनी, बालग्रह कूष्मंड ।
भूत प्रेत पैशाच बहु, रक्ष यक्ष दे दंड ॥ २७

छ०—कोटरा रेवती मातृकादि, पूतना ज्येष्ठा उन्मादहु ।
वैनायक अपस्मार दोषहु, तन प्राण करैं जे बरबादहु ॥ २८
स्वप्नहू दृष्ट उत्पात बड़े, ग्रह बाल बृद्ध जे गाये हैं ।
विष्णू का नाम लेत ही क्षण, सब नाशैं पास न आये हैं ॥ २६
श्रीशुक उ०—गोपी इसभांति करी रक्षा, सुत दूध पिवाय सुवाया है ३०
तब लौं नन्दादिक आय लखैं, पूतना से विस्मय पाया है ॥ ३१

निश्चय वसुदेव ज्योतिषी हैं, उत्पात कहा सो लखआया । ३२
तनकाटि परशु से दूर फेंकि, धरि काष्ठ बहुतसा फुँकवाया ॥ ३३

दो०—जलै देह तहँ उठ रही, अगरु धूम की बास ।
कृष्णकमलपद पर्शि कै, गये पाप, गतिपास ॥ ३४

छ०—पूतना राक्षसी रुधिरभोजि, सबलोकबाल मारैं वाली ।
मारन को दूध पिवाय कृष्ण से, माताकी गति झट पा ली ॥३५
श्रद्धा भक्ती से सेइ कृष्ण, परमात्मा को प्रिय लाते हैं ।
माता समान करते हैं प्यार, क्या पदार्थ वह नहिं पाते हैं ॥ ३६
जगवन्दित अपने चरणों से, उरमें धरि स्तन पान किया । ३७
राक्षसी स्वर्ग माता गतिली, क्या कहिये मा–गोदूध पिया ॥३८
सुत नेह से जिनका दूधपिया, देवकीपुत्र हरि गतिदाई । ३९
सुतमानि निहारैं कृष्ण छवी, अज्ञान जगत नहिं उपजाई ॥ ४०

दो०—धूम गन्ध सब गोप लै, मनमें विस्मय लाय ।
कहाँ से आवै गन्ध यह, कहि ब्रज पहुँचे आय ॥ ४१

छ०—पूतना आगमन कहैं गोप, मरना शिशु रक्षा समझावैं । ४२
विस्मय लहि नंद सूँघिमस्तक, हरि का हिय में आनँद लावैं ॥४३
प्यारे नर नारि विचार करौ, विष देकर मुक्ती पाई है ।
दे तृष्णा विषय पूतना पय, तुरतै मुक्ती बनि जाई है ॥
सोचो सब उमर धूर फांकी, विषयोंसुख नशा सवाई है ।
चटनी उपदेश ज़रा चाटो, उतरै हरिभक्ती आई है ॥

दो०—पढ़ै पूतनाचरित यह, कृष्णचरित शुभबाल ।
लीला सुनि गोविंद तेहि, देहिं भक्ति नँदलाल ॥४४

भजन—बनै सब भांति से उनकी, जो हरि में लव लगाई है।
राक्षसी पूतना देखो, प्याय विष मुक्ति पाई है ॥ टेक ॥
मांसभोजी पूतना है, राक्षसी कंस की चेरी।
पिलाया मारने को विष, सुगति अपनी बनाई है ॥ बनै०
ये तृष्णा पूतना नर की, विषय विष कृष्ण को देवै।
मरै भवबंध से छूटै, असल युक्ती बताई है ॥ बनै०
खींच ली पूतना जैसे, इसे भी कृष्ण अब खींचो।
नाम का अर्थ ढीला है, हमें अबतो लखाई है ॥ बनै०
जो चलता है तुम्हें मिलने, सैकड़ों आफतें घेरें।
पुकारै रात दिन माधव, रामपद आश लाई है ॥ बनै०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षष्ठोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तमोऽध्यायः

श्लोक—उत्क्षिपन् शकटं व्योम्नि तृणावर्तमधःक्षिपन्।
दर्शयन्विश्वमास्ये च कृष्णः क्रीडति सप्तमे ॥

दो०—गाड़ा ऊपर फेंकि हरि, तृणावर्त तर डार।
मुख में विश्व दिखावते, सात में लीला धार ॥

राजोवाच छं०—जिस जिस अवतार से कृष्णचंद्र, मुनिवर जो लीला कीनी है।
तृष्णा छूटै बुधि शुद्ध होय, कहिये मुनि भक्ती लीनी है ॥ २
जो लखो योगता मुनि मुझमें, हरि बालचरित जो और किये।
तन धारि मनुजलीला कीनी, सब कहिये सुनता चित्त दिये ॥ ३

श्रीशुक उ०—हरि करवट ली उत्सव कीना, सब गोपीजन जुरि आई हैं।
अभिषेक सभी द्विज मंगल करि, बाजैं आनन्द बधाई हैं ॥ ४
अभिषेक स्वस्त्ययन द्विज कीना, वस्त्राभूषण पहनाये हैं।
पय पानकराय यशोदाजी, पलना में अलग सोवाये हैं ॥ ५

दो०—आवैं गोपी नन्दगृह, करैं लगी सतकार।
सुत रोदन मा सुनै नहिं, ऊपर पद फटकार ॥ ६

छ०—गाड़ा के तरे सोवते हरि, तहँ असुर प्रवेश निहार लिया।
नाना रसपात्र बिखरि फूटे, पद प्रहार से सब चूर्ण किया ॥ ७
यशुदा गोपी नंदादि निरखि, विस्मित कैसे गिरि शकटगया।८
मोहित बुधि सब मिलि बात करैं, तब बाल कहैं यह गिरादिया ॥ ९
नहिं मानै गोपबाल भाषण, नहिं अतौलबल सुत का जानै ॥१०
हरि रोवैं द्विज रक्षा कीनी, लै मातु करावै पय पानै ॥ ११
पूजन औ हवन विप्र कीना, सब गोप शकट तैसहि कीना ॥१२
नहिं विप्र अशीष होंय झूंठे, जिन असत दंभ मद तजि दीना ॥१३

दो०—साम यजू ऋग मंत्रपढ़ि, औषधि जलहिं मिलाय।
करैं विप्र अभिषेक शिशु, नन्द गोप हरषाय ॥ १४

छ०—स्वस्त्ययन हवन करवाय नन्द, द्विजवृंद जिमाय दक्षिणा दी।१५
गौवैं सजाय सब गुणोंयुक्त, निजपुत्र उदय हित अर्पण की ॥१६
द्विज मंत्रवेत्ता आशिष दें, नहिं निष्फल सपने होंय कभी ।१७
इक समय खिलावै मातु कृष्ण, भयेभारी गोद न सधैं तभी ॥१८
अकुलाय भारसे महि बिठाय, हरि ध्यानक्रिया गृह काजलिया १९
तब कंसभृत्य तृणावर्त दैत्य, बौंडर बनि बालक हरण किया ॥२०
बहुरज उड़ाय किये नैनबंद, गोकुल दिशि विदिश शब्द छाया २१

दो घड़ी रहा अति अंधकार, फिर लखै मातु सुत नहिं पाया॥२२

दो०—आपन पर नहिं लखि पड़ै, अंधकार रह्यो छाय।
पुत्र यशोदा नहिं लखा, जहां गई बैठाय॥ २३

छ०—खर पवन चलै रज वर्षा में, जब माता पुत्र न पाती है।
जिमिवत्सविछोह गऊ व्याकुल, महि पड़ि अति रुदन मचातीहै॥ २४
सुनि रोदन धाय आय गोपी, दृग धार बहै हिय विकल भई।
नहिं पाय नंदसुत रज में सब, घबराती नहिं हिय शांतिलई॥ २५
धरि रूप कृष्ण लै तृष्णावर्त, नभ गयो भार से चलि न सकै। २६
पत्थर से भारी भार मानि, गल गहा न सुत गिरै चाल रुकै॥ २७
आंखैं कढ़ि आईं होश गया, हरि सहित गिरा खल प्राणगया २८
पड़ि शिला माहिं तनचूर्ण भया, ज्यों त्रिपुर रुद्रसे दैत्यनया॥ २९

दो०—गोपी देखहिं उदर तेहिं, खेलि रहे नँदलाल।
बच्यो मौत से लाय झट, गोपी गोप निहाल॥ ३०

छ०—सब खुशी दैत्य मरगया आप, बालक को ईश्वर राखिलिया।
पापी अपने पापहि से मरा, साधुता साधु को बचा दिया॥ ३१
हम सब क्या तप करि हरि पूजे, मख दान जीव मित्रता करी।
सुत मौत के मुखसे आय मिला, हम सबको है आनन्दघरी॥ ३२
गोकुल में अचरज देखि नन्द, वसुदेव बचन सच मानै हैं। ३३
इक समय मातु सुत दूध प्याव, पय चुवै प्रेम उर आनै हैं॥ ३४
लालन करती हरि मुसकाये, जमुहाये मुंहमें जग देखा। ३५
शशि रवि दिशि सिंधु पवन अग्नी, चर अचर सरित वन गिरि लेखा ३६

दो०—माता मुख में विश्व लखि, विस्मित कम्पित गात।
नैन मूँदि बैठी मही, अद्भुत चरित लखात॥ ३७

भजन—विश्वरूप मुँह में दिखराया ॥ टेक ॥
शकटासुर औ तृणावर्त, हरि प्रथमै मारि गिराया ।
विस्मय लहैं गोप गोपी सब, लखे भेद नहिं पाया ॥ विश्वरूप०
पय पीवत श्रीबालकृष्ण हैं, माता सुत दुलराया ।
हँसि जमुहाये मुखके भीतर, सकलविश्व लख आया ॥ विश्वरूप०
पर्वत नदी समुद्र पवन रवि, चंद्रज्योति बन छाया ।
जीव चराचर दशौ दिशा लौं, जो रचती है माया ॥ विश्वरूप०
माता विकल मूंदि दृग बैठी, मनमें अचरज आया ।
माधवराम कृष्णलीला गुन, भक्तन गाय सुनाया ॥ विश्वरूप०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तमोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टमोऽध्यायः ।

श्लोक—अष्टमे नाम कर्मास्य, बालक्रीड़ा कुतूहले ।
मृद्भक्षणाभियोगे च विश्वरूपं निरूप्यते ॥

दो०—नाम कर्म हरि का भया, क्रीड़ा करि हर्षाहिं ।
खाय मृत्तिका कृष्णमुख, विश्वरूप दिखराहिं ॥

श्रीशुकउ० छ०—यदुवंश पुरोहित गर्ग अहैं, वसुदेव कहेसे ब्रज आये १
लखि नंद प्रणाम किया पूजन, ईश्वरहि मानि गृह में लाये ॥ २
करि अतिथि मान मृदुबानी कहि, प्रभुपूर्ण आप ढिग काह धरूँ । ३
विचरै हैं महात्मा गृहस्थ के, कल्याण हेत पद विनय करूँ ॥ ४
सब ज्योतिष शास्त्र ज्ञान जानौ, परजन्महु का फल कहते हैं । ५
हैं श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता जनमे, सुत संस्कार करो चहते हैं ॥ ६

गर्गउ० छ०—यदुवंश के हम आचार्य अहैं, देवकी पुत्र कहैं कर्म किये ।७
पापी है कंस, वसुदेवमित्र, हो कन्या अठवीं योग न ये ॥ ८
दो०—सोचै देवी का बचन, करि शंका दे मार ।
हाेय अनीति जगत महँ, अपयश होय हमार ॥ ९
नंदउ०छ०—गोशाला में करि देहु कर्म, मम गोप न जाने पावैंगे ।
करिकै द्विजाति संस्कार प्रभू, स्वस्त्ययन से आनँद छावैंगे ॥१०
श्रीशुक उ०—मुनिविनय कर्म करना ही था, छिपिकै सुत नामकरणकीना ।
पूजन करवाय गर्ग मुनिजी, यह विधिसे नाम कथन लीना ॥११
गर्ग उ०—यह रोहिणि सुत अपने गुणसे, सुहृदों को रमाते राम भये ।
बलभद्र अधिक बलसे कहिये, यदुवंश मिले संकर्षण ये ॥ १२
सतयुग त्रेता द्वापर में शुक्ल, रक्तहू पीत अब श्याम रहैं । १३
वसुदेव के गृह में तवसुत भे, सब वासुदेव बुध नाम कहैं ॥ १४
दो०—बहुत नाम हों पुत्र के, गुणहु कर्म अनुसार ।
हम जानैं नहिं जन लखैं, सुनहु नंद यह सार ॥ १५
छ०—हे नंद करै कल्याणपुत्र, इससे सब विपति पार जैहै । १६
दुष्टों से पीड़ित सुजन राखि, सब दुष्ट मारिकै सुख दैहै ॥ १७
सुतप्रेम करैं ते बड़भागी, जिमि असुर हरिहिं शत्रू न लखैं । १८
इससे नारायण सम है पुत्र, श्री कीर्ति प्रताप मित्र निरखैं ॥ १९
रक्षा करियो कहि गर्ग गये, बड़ भाग नन्द अपने मानैं । २०
कुछ काल में राम कृष्ण गृह में, बैयां बैयां क्रीडा ठानैं ॥ २१
पिछला पद खैंचि चलैं आँगन, नूपुरधुनि सुनि हर्षावैं हैं ।
अनुकरण लोक करि मुग्धभाव, झट दौरि मातु पहँ आवैं हैं ॥२२
दो०—चुवै दूध दुहुँ मातु के, धूरि भरे अँग लाय ।
दूध पियावैं मुख लखैं, हँसनि निरखि मुसकाय ॥ २३

छ०—गोपी लीला देखैं आवैं, हरि वत्स पुच्छ गहि लेते हैं।
कूदैं बछरा गिरैं इधर उधर, गोपी हँसती हँसि देते हैं॥ २४
बृष अग्नि बिलाव शस्त्र कंटक, गहि पक्षी मुख अँगुरी डालैं।
गृह कार्य न करैं पाव माता, ऐसी लीला हरि प्रतिपालैं॥ २५
थोड़ेही काल में पांव पांव, चलि मिलि गोपन क्रीड़ा करते।२६
गोपीगृह जाय चपलता करि, सब उलहन दें हरि नहिं डरते॥२७
घर आय यशोदा से कहतीं, बछरा बिन समय खोलि देवै।२८
गुस्सा करने से हँसता है, पय दधि माखन चोरी लेवै॥
दो०—खाय खवावै बानरहिं, भांड़हु डारै फोरि।
कुछ नहिं पावै झट भगै, लडिकन हाथ मरोरि॥ २६
छ०—नहिं मिलै हाथ से रचै बिधी, उखली पर पीढ़ा धरै चढ़ै।
छीका में दंड से छेद करै, बाहर दधि माखन झट्ट कढ़ै॥
धरै अंधियाले मणिगण चमकैं, अंगही दीप मणि सम चमकैं।
गृहकाज में गोपी लग जावैं, छुप लुप कै चोरी में लमकैं॥३०
नहिं पाय वस्तु मलमूत्र करै, तब संमुख सीधा ली शिक्षा।
कहि श्रीमुख लखि गोपी हँसतीं, यशुधा हू न डांटैं की इच्छा॥३१
बलराम गोप बालक खेलैं, माटी खाई हरि मा से कहैं। ३२
सुनि पकड़ि हाथ डांटैं माता, भय विकल नैन सुत हितू चहैं॥३३
दो०—माटी खाई ढीठ कस, कहैं गोप बड़ भाय। ३४
नहिं खाई झूँठी कहैं, जो सच मुख लख माय॥ ३५
छ०—तो दिखला मुख हरि मुँहखोला, ऐश्वर्य बड़ा बनि नर बालक। ३६
चर अचर विश्व आकाश दिशा, भूगोल दीप रविग्रह चालक॥३७
जल तेज चक्र ज्योतिष विकार, मन इन्द्री सुरमन गुण तीनों।३८
जग विचित्र जीव स्वभाव काल, कर्माशय लिंग भेद कीनो॥ ३६

सुतमुख में ब्रज आपहु को लखि, शंका यह स्वप्न कि माया है ।
मम बुद्धिमोह ग्रहयोग पुत्र, मन निश्चय नहिं ठहराया है ॥४०
मन वचन कर्म जानै न तर्क, से जो आश्रय यह जिस करके ।
जिससे यह जगत प्रकाशित है, ततपद प्रणाम करूँ शिरधरके ॥४१

दो०—मैं पति मेरा पुत्र यह, ब्रजेश्वरी हिय धार ।
गोपी गोप माया रचै, जासु सो गती हमार ॥४२

छ०—इसभांति ज्ञान माताको भया, फैलाई हरि अपनी माया।४३
भट गई सुरति हरि गोदलिया, जसपूर्व प्रेमसुत हियछाया॥ ४४
त्रयवेद उपनिषद सांख्ययोग, मुनि महात्म गावैं सुतमाना । ४५
राजोवाच—क्या नंद यशोदा कियापुण्य, है पुत्र ब्रह्म करै पय पाना॥४६
पितु मातु न पाये बालसुखहिं, जगपापहरन कवि यश गावैं।४७
श्रीशुकउ०—वसुद्रोण धरा उसकी नारी, विधिआज्ञालै तपमन लावैं॥४८
हरि प्रसन्न भे सुत भक्ति मांगि, जिससे दुर्गति तर जाते हैं। ४९
भइ धरा यशोदा द्रोण नन्द, प्रभु में सुत भक्ती लाते हैं॥ ५०

दो०—गोपी गोपहु भक्ति ली, सुत को भाव ललाम । ५१
ब्रह्म बचन सच करन को, भये कृष्ण बलराम ॥ ५२

भजन—सदा हरि भक्तन के आधीन ।
गोपी छवि देखन को चाहैं, सोइ युक्ति हरि लीन ॥ टेक ॥
जायजाय तिनके गृह छिपिकै, माखन चोरी कीन ।
छविलखि मोहि धावतींपीछे, उलहन मिस लखि दीन॥सदाहरि०
करैं अनेकन लीला जनहित, सदा रहित गुण तीन ।
माधवराम श्यामगुण गावै, सो नरनारि प्रवीन ॥ सदाहरि०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टमोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे नवमोऽध्यायः ।

श्लोक–नवमे पय उत्सिक्ते गत्वा गोप्यथ तत्कृतम् ।
विलोक्य भाराडभङ्गादि कृष्णंदाम्नाववंधतम् ॥

दो०–नवमें उफनो दूध जब, माता करै सुधार ।
फूट महेश निरखि झट, बाँधे नंदकुमार ॥

श्रीशुक उ० छ०–गृह दासी कामकरैं लखिकै, यशुदाजीआपहि दधिमथतीं १
जो जो हरि कीने बालचरित, मथने के समय सब गुण कथतीं ॥२
स्थूल देह रेशमी वसन, कटि किंकिणि पय चुवै स्तन से ।
कढ़नी खींचैं कंकण कुंडल, हिलते मुख सोह स्वेदकन से ॥ ३
हरि दूध पियैं को मथनी गहि, रोकै माता गुनि बात भली । ४
सुनि दूधपिलावै मुखनिरखै, उफना जो दूध तजि कृष्ण चली ॥५
हरि कोप किया फर्राय होठ, पत्थर हनि पात्रहु फोड़ दिया ।६
पय सवाँरि मा यह दशा लखौ, हरि तहां न लखि बहु हांस लिया ७

दो०–उखली चढ़ि माखन चखैं, देहिं कपिन हर्षाहिं ।
इत उत शंकित चित लखैं, मा नहिं आव डेराहिं ॥ ८

छ०–नर नारि लखाये प्रेममार्ग, जगभक्षक काल जाहि डरता।
सो परब्रह्म सुत भया, मातु के मारन का भय हिय धरता ॥
लिये छड़ी हाथ माता को देखि, झट उतर के मोहन भाग चले।
योगीजन का मन नहिं पहुंचै, माता पकड़न को चहै भले॥ ९
भारी शरीर नहिं दौरि सकैं, बिथुरे हैं केश लखि थकी हरी । १०
हो गये खड़े दृग मींजि रहे, रोवैं डरयुत मा कर पकरी ॥ ११

डाटती डरो लखि छड़ी छोड़ि, सुतप्यारा तहँ बांधना चहै। १२
बाहर भीतर पर अवर नहीं, बाहर भीतर जो जगके रहै॥ १३
सुत मानि ब्रह्म को लौकिकसम, उखली में बांधा चहै विषम। १४
बांधी रस्सी दो अंगुल कम, जो जो बांधै हो तैसी कम॥ १५

दो०—गृह रसरी बांधी सभी, दो अंगुल कम होय। १६
गोपी हँसतीं चरित लखि, चलती एक न दोय॥ १७

छ०—आगया पसीना लट बिथुरी, लखिश्रम हरि बंधन को चाहा। १८
जन वत्सलता दिखलाय दई, जगवश जनका प्रण निर्वाहा १९
बिधि शिव श्रीअंगबसी जो है, नहिलें प्रसाद जो मातु लिया २०
गतिदें ज्ञानिन को यह सुखनहिं, भक्तों को बंधि बहु मानदिया २१
सुत बांधि उलूखल में माता, गृह काज करैं में उलझ गई।
यमलार्जुन कुवेरसुत लखि कै, हरि लीला ह्यां पर करैं नई॥ २२

दो०—नारद शाप लह्यो तिन, पायो बृक्ष शरीर।
नल कूबर मणिग्रीव है, हरि हरिहैं सब पीर॥ २३

भजन—ज्ञानियों से अधिक दरजे, भक्तजन के दिखाते हैं।
मुक्ति चह कष्ट कर पावैं, प्रेम मारग न पाते हैं॥ टेक॥
इसी से शंभु बिधि नारद, शेष सनकादि शुक शारद।
हैं ज्ञानी ब्रह्म ध्यानी पर, भक्ति सिद्धांत लाते हैं॥ ज्ञानियों०
आजकल के निरे ज्ञानी, धरे हैं ज्ञान तन मानी।
चढ़े पाखंड के गिरि पै, डाँट आँखें दिखाते हैं॥ ज्ञानियों०
कहो किसने लही पदवी, यशोदा मातु जो पाई।
करौ नर नारि सच भक्ती, न हरि छल पास आते हैं॥ ज्ञानियों०

जँचै जिसको वही अच्छा, हमैं तो एक यह भावै ।
करैं हरि जो चहैं माधव, राम गुण गान गाते हैं ॥ ज्ञानियों०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे नवमोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे दशमोऽध्यायः ।

श्लोक—दशमेऽपातयद्दिङ्भन्तरायमलार्जुनौ ।
तत्रत्याभ्यां च देवाभ्यां कृष्णः स्तुत इतीर्यते ॥

दो०—यमलार्जुनपातन कियो, देवरूप तब दोय ।
दशमे हरि स्तुति करैं, पाप मुक्त सब होय ॥

राजोवाच—मुनि कहो शापका कारण सब, क्याकिया, कोप नारदकीना
ज्ञानी हरिभक्त मुनीश्वर भी, यह शाप उन्हें कैसे दीना ॥ १
श्रीशुक उ०—शिवसेवक कुवेर के सुतदो, गंगातट नारी सँग विहरैं । २
वारुणी मद्य पी दृग घूमैं, बन में विहार औ गान करैं ॥ ३
गज हथिनी लै त्यों तिया संग, लै गंगा में मज्जन करते । ४
मदमत्त नग्न तहँ नारद मुनि, आये तौभी न वस्त्र धरते ॥ ५
नारी तौ मुनि लखि वस्त्र गहे, ये दोनों नहिं मद मतवाले । ६
लक्ष्मी मदिरा दोऊ से मत्त, दै शाप मुनीश्वर जन पाले ॥ ७
नारद उ० दो०—प्रिय विषयों को सेवहीं, रजगुन मति हरतार ।
लक्ष्मी से मद जुवा तिय, बहुत पाप विस्तार ॥ ८
छ०—निर्दयी मारि पशु खा जावैं, इस तनको अमर समझते हैं ९
सुर संज्ञित तौ भी भस्म कीट, करि बैर नरक पड़ि झखते हैं ॥ १०

पितुमाता या तनपालक का, या अग्निश्वान जो खरीद कर। ११
ऐसे साधारण तन के हेत, को जीव हनै अस है मूढ नर॥ १२
श्रीमद को अंजन दरिद्र है, अपने सम दुख दुखिया देखै। १३
कांटेसे बिंधा परदुख न चहै, सुखिया परदुःख नहीं लेखै॥ १४
हंकाररहित होता दरिद्र, निर्वाह कष्ट से करता है। १५
दुर्बल भूखा नित अन्न चहै, मनबश हिंसा नहिं धरता है॥ १६

दो०—दरिद्र को साधू मिलैं, तहँ सतसंग प्रकाश।
ज्ञान उदय होवै हिये, आशा तृष्णा नाश॥ १७

छं०—हरिपदप्रेमी समचित्त साधु, खल धनी दुष्ट नर को न चहै।१८
तिससे मतवाले नारीजित, का मद हरिहौं तम तन न रहै॥ १९
सुत लोकपाल के नग्न मत्त, अपने को ऐसे भूले हैं। २०
तरु से है खड़े हो जाव वृक्ष, हम दाया करि अनुकूले हैं॥ २१
सौ वर्ष सुरों के जब बीतैं, हरिभक्ति होय सुरलोक मिलै।
सुर तन सबसे बढिकै गाया, इसमें भक्ती चहिये पहिले॥ २२
श्रीशुक उ०—नारायण आश्रम नारदगे, नलकूबर अर्जुनबृक्ष भये। २३
मुनि बचन सत्य करने को हरि, उद्धार हेत तरु पास गये॥ २४

दो०—मम प्रिय नारद मुनि अहैं, सुतकुवेर ये दोय।
कहा मुनीश्वर करौं वह, इनकी मुक्ती होय॥ २५

छं०—दोनों अर्जुन के मध्य कढ़े, फिर उखली टेढ़ी कर दीनी २६
उखली अटकी दामोदर हरि, कर परसे जोर युक्ति कीनी॥
गिरपड़े भूमि कम्पित हैं पात, बहु शब्द भया प्रभु नहिं डोले २७
तनदिव्य तुर्त दो सिद्ध कढ़े, जगपतिहरिनमिकै दोउ बोले॥२८
हे कृष्ण कृष्ण प्रभु आदिपुरुष, अव्यक्त व्यक्त जग विप्र कहैं। २९

योगी तुम जीवों के स्वामी, भगवान काल हरि ईश्वर हैं ॥ ३०
तुम प्रकृति रजो तम सत्वमयी, अध्यक्ष पुरुष सब क्षेत्रपती ।३१
मायाके गुण युत गहि न सकैं, को जानै प्रभु हैं सिद्धयती ॥३२
दो०—वासुदेव भगवान बिधि, ब्रह्महिं करैं प्रणाम ।
आत्म प्रकाशक गणों से, महिमा छिपी ललाम ॥ ३३
छ०—तनरहित लेहु तन वतार धरि, तन ऊँच नीच सबही धारौ । ३४
जग भव अरु विभवहेतु प्रभु हैं, सुरकाज अंशयुत निस्तारौ ॥३५
कल्याण परम मंगल यदुपति, प्रभु शांत वासुदेवाय नमो ।३६
सेवक किंकरहम दया करौ, मुनिकृपासे दर्श मिले प्रणमो ॥३७
बानी गुण कथै, कथा में कान, कर सेवा कर, मन पद सुमिरै ।
शिर प्रणाममें, दर्शनमें नैन, हियध्यान और नहिं काम करै ॥३८
श्रीशुक उ०—स्तुति दोनों ने बहुत करी, सुनि गोकुलपति भगवानहरी ।
उखली में बँधे हंसि कै कहते, सुनो कुबेरसुत शिक्षाहमरी ॥ ३९
श्रीभगवानुवाच दो०—दयावान मुनिनारद, हमजानैं सबकार ।
श्रीमद अंधहि शापदै, दायाकीन सुधार ॥ ४०
छ०—साधू सम चित्त न करैं दुःख, ईश्वर में आत्मा धारे हैं ।
रवि संत दर्शसे बँधै नहीं, करि दाया जन उद्धारे हैं ॥ ४१
नल कूबर अपने लोक जाहु, हमको हिय धरि भक्ती करना ।
गति पैहौ मेरी भक्ति लही, इच्छा पूरै मद नहिं धरना ॥ ४२
श्रीशुक उ० दो०—कीन प्रणाम प्रदक्षिणा, हरि से आज्ञा पाय ।
उत्तरदिशि निज लोकगे, प्रभुको हिये बसाय ॥ ४३
भजन—मुनी का क्रोधहु गतिदातार ॥ टेक ॥
कुबेरसुत मदमत्त विषयबस, सब विधि भरे विकार ।
शापदीन नारद लखि नग्नहु, लेहु वृक्षतन धार ॥ मुनी का०

तासों हरि मिलि भक्ती पाई, छूटी जगत बिगार।
माधवराम दयाल संत अस, कृपा कीन करतार ॥ मुनी का०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे दशमोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकादशोऽध्यायः।

श्लो०—एकादशे समागत्य बृन्दाबनमथार्भकैः।
वत्सान्यालयताऽनेन हतौ वत्सवकासुरौ ॥

दो०—बृन्दाबन में आय हरि, गोपबृन्द लै साथ।
एकादश में वत्स बक, मारे कीन सनाथ ॥

श्रीशुकउ० छ०—तरु गिरे सुना नन्दादि गोप, करि शंका बज्रपात धाये।१
महि पड़े लखे यमलार्जुन तरु, नहिं मर्म, गिरे तरु लख पाये ॥२
ऊखल खैंचत कृष्णहिं देखा, किससे कैसे उत्पात भया।
विस्मित लखि सब बालक कहते, गिरने में यत्न हरि किया नया ॥३
उखली खींची घुसि टेढ़ी की, तरु डारि दिये दो नर निकले।४
कुछ कहिगे, गोप न सच मानैं, सुत बृक्ष उखाड़े मन में न लें ॥५
रसरी में बँधे उखली खैंचैं, लखि नंद हँसे झट खोलि दिये।
यशुदा को डांटा पछिताई, मंगल कीना सुत गोद लिये ॥ ६

दो०—गोपी कहते नाचहीं, गावैं मधुरे बैन।
ज्यों बाजीगर पूतरी, भक्तों के मन चैन ॥ ७

छ०—कहतीं पादुका पीठ लाओ, ला कहे हाथ फैलाते हैं। ८
भगवान बाललीला करके, जनवत्सलता दिखलाते हैं ॥ ९

लेओ फल सुनिकै झट दौड़ैं, सब फलदाता फल लै खावैं। १०
बेचनवाली कर धान्य लेति, फल भरे हाथ लखि सुख पावैं॥
रत्नों से भर जाता है पात्र, यमुनातट जब प्रभु जावैं हैं। ११
रोहिणी जाय कहि कृष्ण राम, खेलनसे बाल बोलावैं हैं॥ १२
नहि आवैं खेलहिं बालसंग, भेजतीं यशोदा जाती हैं। १३
स्तन से दूध चुवै सुतमय, लै लै कै नाम बुलाती हैं॥ १४

दो०—कृष्ण कृष्ण सुत कमलदृग, आय करो पयपान।
भूखे मत खेलो लला, थकिहो पांय पिरान॥ १५

छ०—हे राम आयजा भाई लै, प्रातहि खाये भोजन करलो। १६
ब्रजराज तुम्हें परखे बैठे, आओ, सब बालक निज घरलो॥ १७
तन भरी धूरि सुत नहायले, है जन्म नखत विप्रन दो दान। १८
लख माता से बालक न्हाये, भोजन विहार कीजै स्नान॥ १९
यशुधा यों ब्रह्महि सुत कहिकै, कर गहि गृह में ले आती हैं।
नहवाय वस्त्र पहनाय स्वच्छ, भोजन करवाय सुलाती हैं॥ २०
गोकुल में लखि उत्पात बहुत, नंदादिक गोप सलाह करैं। २१
वयज्ञान वृद्ध उपनंद गोप, करि बात कृष्ण का हितहु धरैं॥ २२

दो०—गोकुल वास उचित नहीं, यहां होंय उत्पात।
राम-कृष्ण के बचैं को, येही युक्ति लखात॥ २३

छ०—बचगया पूतनासे ज्यों त्यों, शकटा में नहीं दबाया है। २४
गिरि चक्र बात से शिला माहिं, ईश्वर ने बाल बचाया है॥ २५
बच गया बृक्ष के गिरनेसे, प्रभु करी कृष्ण रखवारी है। २६
आवैं न यहां उत्पात, और थल चलैं सलाह हमारी है॥ २७
नव बृन्दावन पशु हितकारी, गौ गोपी गोपहिं सुखदाई।

तृण लता बेलि पर्वत पुनीत, तहँ चलौ राह यह ठहराई ॥ २८
आजही चलौ गाड़ी लदाय, गोधन करि आगे सबहिं जँचै ।२९
हाँ करि सबगोप एकमति ह्वै, लादैं समान सब युक्ति रचै ॥ ३०

दो०—सामग्री धरि शकट पर, बालक बृद्ध चढ़ाय ।
युवा गोप पैदल चले, शस्त्र लिये हरषाय ॥ ३१

छ०—करि गौवैं आगे शृङ्गधुनी, हैं संग पुरोहित ध्यानधरैं । ३२
गोपी सजिकै रथपै बैठीं, श्रीकृष्णचंद्र गुण गान करैं ॥ ३३
रोहिणी यशोदा एक शकट, में बैठीं रामकृष्ण लीने ।
गोपी गुणगावैं रामकृष्ण, सुनिबे में अपना मन दीने ॥ ३४
बृन्दाबन है सब सुखदायक, तहँ पहुँचि सबों ने बास लिया ।
शकटों से अंर्धचंद्र रचिकै, अति उत्तम कोट तयार किया ॥ ३५
यमुना के पुलिनबन गोबर्धन, श्रीरामकृष्ण लखि मग्न भये ।३६
ब्रजबासी हरि से सुख पावैं, हरि वत्सपाल भे हर्ष नये ॥ ३७

दो०—गोप बाल प्रभु संग लै, ब्रज भूमी के पास ।
खेलहिं वत्स चरावहीं, सब विधि सुखद सुपास ॥ ३८

छ०—वंशी बजाय फेंका फेंकी, पद बांधि घूँघरू नृत्य करैं । ३९
गोवृष आकार बनैं बोलैं, करि युद्ध पच्छि अनुकरन धरैं ॥ ४०
यमुना तट पै बछरा चारैं, वत्सासुर मारन आया है । ४१
बलदेवहिं कृष्ण दिखाय दिया, बनि मुग्ध न वह लख पाया है ४२
गहि पुच्छ सहित पीछले पैर, कैथा में घुमाकर दै मारा ।
महि पड़े कपित्थ मरा पापी, तन असुर भया हरि उद्धारा ॥ ४३
सब बालक कहते वाह वाह, देवता फूल बरसाते हैं । ४४
सब लोकपाल ह्वै वत्सपाल,, प्रातहि से वत्स चराते हैं ॥ ४५

दो०—निजनिज पालैं वत्सकुल, पीवैं यमुना नीर। ४६
एक समय बालक लखैं, बक गिरितुल्य शरीर ॥ ४७

वह महा असुर बकरूपधरे, झट दौरि कृष्ण को निगल गया। ४८
बिनप्राण इन्द्रियाँ त्यों बालक, बकग्रसित देखि बहु शोकलिया ४६
भये अग्निरूप बकतालु जरैं, गोपाल जगतगुरु उगल दिया।
मारूँगा चोच से मनमें धरि, भरि क्रोध कृष्ण का निकट लिया ५०
आते लखि हरि झट चोच पकरि, हरि कंससखा गुनि यत्न किया।
सब लखैं गोप तृण के समान, मुख उसका प्रभुने फाड़ दिया ॥ ५१
सुर वर्षहिं पुष्प करैं संस्तुति, बाजे बजाय आनंद धरैं।
गोपाल की करतब गोप निरखि, अपने मनमें आश्चर्य करैं ५२

दो०—बकमुख ते हरि बच गये, मिले राम सब बाल।
आये ब्रजमें वत्स लै, सबहिं कहा यह हाल ॥ ५३

छ०· सुनि गोपी गोप करैं विस्मय, जनु फेरि मिले लखि तृप्त भये ५४
बालककी आवैं मृत्यु बहुत, करि बदी आपही मृत्यु लिये ॥ ५५
मारने कृष्ण को दैत्य आय, अग्नीमें कीट त्यों क्षय पाया ।५६
बाणी न झूंठ हों विप्रों की, जो गर्ग कहा आगे आया ॥ ५७
नंदादिक गोप हर्ष हिय में, श्रीराम कृष्ण गुण गाते हैं।
चित लगाय श्याम माधुरी में, जगके भ्रम दुःख भुलाते हैं ॥ ५८

दो०—करि विहार कौमार के, करैं बालपन त्याग।
सेतुबंध कपि फाँदिबो, लीला विविधि विभाग ॥ ५९

भजन—सँग गोप बाल मोहन, बन वत्स लै चरावैं।
है धर्म ये सनातन, सब जाति को सिखावैं ॥ टेक ॥
है पांच वर्ष बालक, ब्रह्मांड हू के मालक।
बछरान के हैं पालक, करतब असल दिखावैं ॥ सँग०

इक दैत्य वत्सतन धर, मारन में मन है छिप कर ।
मारा उसे पटक कर, निज लोक में पठावैं ॥ सँग०
बक दैत्य फेरि आवै, धरि कृष्णही को खावै ।
हरि अग्निरूप लावैं, हनि मुक्तिहू दिलावैं ॥ सँग०
कुंजन में खेल कारी, मन में अनन्द धारी ।
माधवराम श्रीमुरारी, गुन गान भक्त गावैं ॥ सँग०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकादशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वादशोऽध्यायः ।

श्लोक—द्वादशेतु महासर्पवपुर्धरमहासुरम् ।
वत्सपालगिलं क्रुद्धो गलेऽहन्निति वर्ण्यते ॥

दो०—बारह में अजगर बना, दुष्ट अघासुर आय ।
वत्स गोप निगले सबै, हनि हरि लीन बचाय ॥

श्रीशुक उ० छ०—मनमें धरि बनमें भोजन की, सब वत्सगोप हरि संगलिये ।
करि शृङ्गशब्द बाहर निकले, आगे सब बछराबृन्द किये ॥ १
छीका वंशी लिये शृङ्ग वेत्र, हरि संग हजारों बालक हैं ।
बछरा सहस्र संख्या ऊपर, इक इक बालक प्रतिपालक हैं ॥ २
हैं अनगिनती श्रीकृष्ण वत्स, लीला करि मिले चराते हैं । ३
मित्रों सँग नाना खेल खेलि, मनमोहन आनँद पाते हैं ॥
फल फूल पत्र रंग मोरपच्छ, गुंजा औ काँच शृङ्गार करैं ।
मणि स्वर्ण से अंग विभूषित हैं, तबहूं ये सब हर्षाय धरैं ॥ ४

दो०—वस्तु चुरावैं परस्पर, जाने फेंकहिं दूर।
दूर फेंकते दूरसे, हँसैं खेलि भरपूर॥ ५
छ०—बन शोभा देखन कृष्णजांय, हम हम पहिले छूने जावैं। ६
बंशी कोइ शृङ्ग बजाय गोप, कोकिल कोइ भृङ्गधुनी लावैं॥ ७
कोइ छाया के पीछे दौड़ैं, बक हंस तुल्य बैठे चुप चाप।
कोइ मोर तुल्य नाचै लयसे, तरु चढ़ि कपि पुच्छ खैंचते आप॥ ८
कपिमुख सम मुँह करि फांदैं हैं, मेंडक सम कूदि गिरैं जलमें। ९
अपनी छाया को देखि हँसैं, बोलैं पक्षीबोली छन में॥ १०
अनुभव करि ब्रह्मसुखहिं ज्ञानी, निज इष्ट मानि जन सेवैं हैं।
अति पुण्यवान हैं गोपबाल, माया फँसि सो सुख लेवैं हैं॥ ११
दो०—बहुत जन्म लौं कष्ट करि, बस आत्मा धरि योग।
धूरि न पावहिं किमि कहौं, गोप भाग्य संयोग॥ १२
छ०—नहिं देखि सका खेलब सबका, वह दुष्ट अघासुर आयाहै।
जेहि मरण चहैं सुर अमृत पिये, रणमें कोइ पार न पायाहै॥ १३
पूतना बकासुर का भाई, वह कृष्ण गोप सब लख करके।
यह मेरे सहोदर नाश किये, बलसहित मारिहौं छल धरके॥ १४
मेरे मित्रों को नाश किया, मैं नष्ट तुल्य सब देव करूँ।
हैं कृष्ण प्राण सबका मारूं, सुर सेवक तनसम भ्रम न धरूँ॥ १५
यह सोचि एक योजन गिरिसम, अजगर का रूप बनाया है।
मारग में पड़ि करि ग्रसैं आश, कन्दरसम मुँह फैलाया है॥ १६
दो०—तरे होंठ एक ऊपर, बीच है गुफा समान।
जीभमार्ग खर श्वास त्यों, दावानल पहिचान॥ १७
छ०—बृन्दाबन शोभा गोप गुनैं, अजगर लखि बहुशंका करते। १८
हे मित्र कहो क्या अजगर है, या पर्वत तुम चित में धरते॥ १९

रवि किरनों से हैं लाल होठ, ऊपर का या बादल कहिये।
घनप्रतिछाया से लाल मही, या होठ तरे ही का चहिये ॥ २०
गलफड़ हैं या कन्दरकोन, गिरिशृङ्ग कि उसकी दाढ़ैं हैं। २१
यह मारग है की जिह्वा है, कन्दर या मुख तम बाढ़े हैं ॥ २२
है श्वास दवांरि कि वायु कहौ, दुर्गंध जीव खाये या जरे। २३
जो हमैं ग्रसै बकसम नाशौ, हँसि कृष्ण निरखि मुँह जायपरे॥ २४

दो०—सुनी दूर से बात सब, झूँठ सत्य भइ एक।
गुनि राक्षस रोका चहैं, हरि धरि विमल विवेक ॥ २५

छ०—सब बछरा गोप गये तबलौं, नहिं गले कृष्णको परखे हैं।
भयहरण कृष्ण निजकर से कढे, नहिं नाथ और हरि निरखे हैं॥ २६
सब दीन मृत्यु मुखमें पहुँचे, भावीवश कृष्ण दयालु हिया। २७
क्या करैं जियैंजन मरैदुष्ट, गुनि मुख में कृष्ण प्रवेश किया ॥ २८
हरि जानैं सब सुर विकलभये, राक्षस पापी हिय हर्ष धरैं। २९
करि देहुँ चूर्ण यह देखि कृष्ण, भीतर शरीर निजबृद्धि करैं ॥ ३०
तन बढ़ा कृष्ण तेहि रुकी श्वांस, दृग कढ़े दुष्ट लोटैं लागा।
फटगयो शीश कढ़ि प्राणगये, मरिकै पुनीत ह्वै तनत्यागा ॥ ३१

दो०—सबै जिवाये दृष्टि से, बाल वत्स गोपाल।
तिस मारग से सब कढे, मुकुन्द भे प्रतिपाल ॥ ३२

छ०—अजगर तनसे कढि दिव्य ज्योति, दशदिशि प्रकाश फैलातीहै।
सब देव निहार रहे ऊपर, हरिरूप में झट मिल जाती है ॥ ३३
सुर वर्षहिं फूल गाय नाचैं, गन्धर्व अप्सरा आये हैं।
बाजे बाजैं मुनि स्तुतिकर, जय जय धुनि शब्दहु छाये हैं ॥ ३४
स्तुति बाजा जयगीत सुने, निज धाम छोड़ि ब्रह्मा धाये।
प्रभुकी यह महिमा निहारिकै अपने मनमें विस्मय पाये ॥ ३५

सूखा अजगर का चर्म बहुत दिन तक गोपों का क्रीड़ाघर। ३६
था कर्म कुमार अवस्था का, कहैं गोप अवस्था पौगंडधर॥ ३७

दो०—नहीं चित्र लीलाधरहिं, ज्ञात परावर जाहि।
पापी अघको मुक्ति दी, खल को दुलभ सदाहि॥ ३८

छ०—रिपु है हरि को हिय में राखा, हरि अपनी गति दे दीनी है।
मायाछूटी जन हिय हमेश, बसते मृदुमूरति लीनी है॥ ३६
सूत उ०—हे शौनक हरि के चरित्र सुनि, राजा शुकमुनिसे प्रश्नकिया।४०
राजोवाच—कालांतर में जो किया कर्म, उस काल में कैसे मान लिया॥
कौमार अवस्था में कीना, गोपों ने जाय पौगंड कहा। ४१
है यह भी कुछ भगवतमाया, मेरे मन में आश्चर्य महा॥ ४२
क्षत्रियों में जैसा तैसा भी, तौभी हम बड़े भाग वाले।
हरिकथा अमृत तुमसे पीवैं, मुनिबर दाया से प्रतिपाले॥ ४३
सूतउ० दो०—प्रश्न सुनत मुनिराजके, मन बुधि हरिमें लाग।
खैंचि कष्ट से भक्त नृप, पहँ कह कथा विभाग॥ ४४

भजन—कृष्ण पापिन के तारनहार।
दैत्य अघासुर महान पापी, अजगर बना पहार॥ टेक॥
बाल वत्स सब लील गयो जब, हरि हिय करैं विचार।
आखिर आप प्रवेश किया मुख, तन बढाय दिया मार॥ कृष्ण०
दीन जानि मुक्ती दै दीनी, जगकर्ता करतार।
माधवराम देखि बिधि विस्मित, मन में बारंबार॥ कृष्ण०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वादशोऽध्यायः।

—०:०:०—

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयोदशोऽध्यायः ।

श्लोक—त्रयोदशेऽहरद्ब्रह्मा वत्सान्पालांश्च मायया ।
तदा तत्सर्वरूपोऽद्दं कृष्णः पूर्ववदाचरत् ॥

दो०—माया से ब्रह्मा हरे, बछरा औ सब बाल ।
तेरह में सब रूप ह्वै, कृष्ण भये प्रतिपाल ॥

श्रीशुक उ० छ०—हरिभक्त भूप अच्छा पूँछा, सुनिकै हरि कथा नई करते ।१
प्रतिक्षणमें स्त्रीविट (कामी) की भांति, हरि की चरचा चितमें धरते ॥२
नृप सावधान सुनो गुप्त कथा, श्रद्धालू से गुरु गुप्त कहैं । ३
अघमुख से काढ़ि बछरा बालक, यमुनातट भोजन कीन चहैं ॥४
हे मित्रो है रमणीक पुलिन, देखो क्या कोमल बालू है ।
जल खिले कमल बोलैं पक्षी, थल चौरस ऊँच न ढालू है ॥ ५
दिन चढ़ा यहां भोजन करलो, बछड़े पानी पी घास चरैं । ६
हां करि सब बालक बैठि गये, पानी पीकर बछड़ा विचरैं ॥ ७

दो०—हरि के चहुँ दिशि बाल सब, मुख प्रसन्न छवि सोह ।
कमल पांखरी सम डटे, मध्य हरी संदोह ॥ ८

छ०—दलपत्र पुष्प फल अंकुर पै, छीका पत्थर पै हाथ लिये । ९
निज निज भोजन रुचि हरि दिखाय,प्रभुहँसैं हँसावैं खेलकिये १०
वंशी पट में है बगल शृङ्ग, वेत्रहु बायें कर में हैं कमल ।
अँगुलियोंमें फल मित्रोंके मध्य, सुर लखैं जीमते हरि चंचल ॥११
नृप हरिमें चित सब जीम रहे, बछरा चरते तृण ओट भये ।१२
सब डरे कृष्ण धीरज देते, तुम खाव मित्र हम लेन गये ॥ १३

कहि कृष्ण चले बनमें ढूंढैं, बछरा हरि हाथ में कौर लिये। १४
मायासेबिधि उत बछरा हरि, इत बालक अघगति लखि चितये १५
दो०—बछरा हरि पाये नहीं, इत बालकहु हेरान।
सब बन भोजनथल लखैं, कृष्णचंद्र भगवान॥ १६
छ०—जगवेत्ता बालवत्स नहिं लहि, झटब्रह्माकी करतब जानी। १७
गोपी गौवैं बिधि प्रसन्न हित, बनि बाल वत्स युक्ती ठानी॥ १८
जितने हैं बछरा गोप जैस, वपु वयस रंग कर पद जैसे।
बंशीदल छीका वेत्र शृङ्ग, बस्त्रहू अभूषण भी तैसे॥
गुण शील आकृती खेल बैन, जो जैसे जाते आते हैं।
सब रूप कृष्ण बछरा बालक, आपहि तैसे बनि जाते हैं॥ १९
आपहि बछरा आपही गोप, आपहि गुपाल ह्वै ब्रजहि गये। २०
गोशाला में बछरा बांधे, तिस तिस घर माहिं प्रवेश भये॥ २१
दो०—बंशी सुनि माता उठीं, लिये बाल लिपटाय।
चुवै दूध सुत ब्रह्म लहि, हर्षित दूध पिवाय॥ २२
छ०—मज्जन मर्दन स्नान लेप, गहना कपड़ा भोजन पाये।
क्रीड़ा के नियम से माधव प्रभु, सब गृह में सबलै हर्षाये॥ २३
गौवैं चरि आईं बछरा लखि, हुंकार मार कर धाईं हैं।
निज निज बछरा को दूध प्याय, चाटैं हियमें हरषाईं हैं॥ २४
गोपी गौवों का प्रेम अधिक, मायाबिन हरिसुत में है बढ़ा। २५
सीमा नहिं नित दिन दूना है, सब ब्रजवासी में बढ़ाचढ़ा॥ २६
बनि बछरा बाल गोपाल हरी, आत्मासे आत्म में खेल करैं। २७
हैं साल में बाकी पांच छ दिन, बलदेव सहित बनमें विचरैं॥ २८
दो०—गिरि पै गौवैं चर रहीं, नीचे बछरा बाल। २९
लखि धाईं पथ कठिन अति, ताने पुच्छ विशाल॥ ३०

छ०—चू रहा दूध मिलि वत्स प्याय, हरिवत्स चाटतीं सुखपाये।३१
करि कोप गोपरक्षक आये, लखि कृष्ण पुत्र आनँद छाये॥ ३२
लखि क्रोधगया छाया है प्रेम, अँग लाय सूघिशिर खुशीभये। ३३
बह अश्रुधार सुखहै अपार, ज्यों त्यों करि गौ लै फेरि गये॥ ३४
यह प्रेमबृद्धि बलराम लखी, थन छूटे गौ बछरा प्यावैं। ३५
सर्वात्मा हरिमें क्या अचरज, ब्रज आत्मा क्यों न प्रेम लावैं॥ ३६
दैवी आसुरी मनुज माया, किसकी कहँ से यह आई है।
निश्चय मेरे प्रभुकी होगी, नहिं मोहिं मोह पर लाई है ॥ ३७

दो०—गोप वत्स हरिमय लखे, ज्ञान नैन बल खोलि।
साफ भेद पाये नहीं, सब विधि लिया टटोलि॥ ३८
नहिं सुरेश मुनि और कोइ, ध्यान किया बलराम।
श्रुति से पृथक् निहारते, लखे रूप घनश्याम॥ ३९

छ०—त्रुटि मात्र समय में आय बिधी, गतवर्ष हरीखेलहिं आये ४०
जितने बछरा औ गोप रहे, माया में हैं नहिं उठि पाये॥ ४१
ये कहां से आये बिधि मोहित, भा साल पूर हरि सँग खेले।४२
बिधि ध्यान किया बहु लखि न सके, सतझूठ कौन ह्यांपरमेले॥४३
जगमोहन को मोहन आये, बिधि आपहि माया मोहिगये। ४४
लघुतम निशि समता नाहिं करै, जुगनू प्रकाश दिन लोपभये ४५
घनश्याम पीतपटधारी सब, बछरा बालक लख आते हैं। ४६
भुज चार शंख गद चक्र धरे, कुंडल माला हलराते हैं॥ ४७

दो०—अंगद कंकण कर लसै, श्रीवत्सहु बनमाल।
कटि किंकिणि नूपुर पदहिं, मुँदरी सोह विशाल॥ ४८

छ०—नखसे शिख तक तुलसीसोहै, कोमल जनभक्त चढ़ाई है ४९
चितवनि शशि छवि सम जन पालै, रज सतसे पालनताई है ५०

बिधि से स्तंभ लौ जीव सबै, हरि सेवहिं नाचैं गावैं हैं। ५१
अणिमादि आठ सिद्धी चौबिस, तत्वहु पदमें शिर नावैं हैं॥५२
कालहु स्वभाव संस्कार कर्म, गुण की महिमा लघुता पाई।५३
सत ज्ञान अनंत अनंद मात्र, उपनिषत वेद श्रुति जो गाई॥५४
बिधि ब्रह्मरूप सबको देखा, चर अचर प्रकाशक तेज धरे। ५५
पुतलीसम ह्वै बिधि मौन भये, विस्मितहैं सबै ज्ञान बिसरे॥५६

दो०—तर्क करैं बिधि मोहि गे, ब्रह्मरूप हरि माहिं।
छाई माया कृष्ण की, निश्चय करि न सकाहिं॥ ५७

छ०—फिर खोलि नैन बिधि मृतसम उठि, सबजगत आपने को देखा ५८
बृन्दावन बृक्ष जीव सब प्रिय,दिशि विदिशि सबै कीन्हा लेखा ५९
नर पशु स्वाभाविक बैर तजे, तृष्णा तजि मित्र समान लखैं। ६०
अद्वैत ब्रह्म निज बोध धरे, नटवर गोपाल रूप निरखैं॥
बछरा बालक ढूंढैं इत उत, कर कौर लिये हरि लख पाये। ६१
बाहन से उतरे पांव पड़े, रज शीश धरैं दृग जल छाये॥ ६२
उठि उठि हरिपद में धरैं शीश, चरणों में क्रीट रगड़ते हैं।
महिमा हरि निज अपराध सुमिरि, बिधिमनमें कांपैं डरते हैं॥६३

दो०—नेत्र पोंछि उठिकै बिधी, लखि मुकुंद शिर नाय।
सावधान विनती करैं, गद्‌गद वाणी लाय॥ ६४

भजन—करै मायापति से बिधि माया॥ टेक॥
श्रीगोपाल गोप बछरा ले, ब्रजमें खेल मचाया।
मारि अघासुर मुक्ती दीनी, तेहिं निजलोक पठाया॥ करै०
भोजन करैं गोप सँग लीने, हिय में आनँद छाया।
ब्रह्मा हरे वत्स बालक सब, विघ्न बड़ा फैलाया॥ करै०

सबै रूप गोपाल धारि गौ, गोपिन सुख पहुँचाया।
ब्रह्मा मोहि गये माया में, मर्म नहीं लख पाया॥ करै०
भयो होश सब चक्कर छूटा, जब हरि कीनी दाया।
माधवराम श्यामपद परसै, प्रेमसहित गुन गाया॥ करै०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयोदशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्दशोऽध्यायः

श्लो०—चतुर्दशेऽद्भुतं दृष्ट्वा पूर्वागन्तुकनिश्चयम्।
अनीशः कर्तुमस्तौषीत्कृष्णं ब्रह्मा विमोहितः॥

दो०—चौदह में अद्भुत निरखि, बिधि नहिं निश्चय लाय।
मोहित कृष्ण विनय करैं, चरणों शीश नवाय॥

ब्रह्मोवाच छ०—घनश्याम तड़ित अम्बरधारी, शिर मोरपंख गल गुंजमाल।
बनमाल वेत्र बंशी कर में, कोमलपद प्रनमों नंदलाल॥ १
तन इच्छामय नहिं तत्वमयी, मम दयाहेत यह धारा है।
मन से भी महिमा लखि न सकै, ब्रह्मात्म सुखहि निस्तारा है॥२
जो ज्ञान परिश्रम छोड़ि नाथ, नमि कथा श्रवण तन धारे हैं।
हे अजित सोइ जग जीति लेहिं, तन मन से स्थान सिधारे हैं॥३
तव भक्ति मुक्तिप्रद छोड़ि प्रभू, जे ज्ञान हेत श्रम करते हैं।
श्रम ही तिनके लगता है हाथ, ज्यों छूँछी भूसी छरते हैं॥ ४

दो०—योगी ज्ञान न पाय कै, कर्म अर्पि ले भक्ति।
सुनै कथा शुभ गति लहै, बिन श्रम पावै मुक्ति॥ ५

छ०—निर्गुण हे भूमन अमलात्मा-जन महिमा तुम्हरी जानै हैं।

निर्विकार अनुभवरूप आप, अध्यात्म ज्ञान पहिचानै हैं ॥ ६
गुण आत्मा जगहित तनधारी, गुणगणना कोई करि न सकै।
महिरज नक्षत्र गगन तारे, गनिलेवे हरिगुण नाहिं तकै ॥७
तव दया आश कीनें स्वामी, निज कर्मभोग को भोगि रहे।
तन मन वाणी से तुम्हैं नमो, गति हेतु जियै ते मुक्त कहे ॥ ८
देखौ अनारिपन मम स्वामी, मायापति तुम परमात्मा से।
चिनगारी ज्वाला से उलझै, दिखलाया वैभव आत्मा से ॥ ९

दो०—रजोजन्म मानी पृथक, क्षमहु प्रभू अपराध।
मायामद से अंध दृग, दया करहु लो साध ॥ १०

छ०—तम महत् अहं सब पंचतत्व, से रचित अंडघट हम राजैं।
है सात बिलस्त जासु मालिक, ब्रह्मांड कोटि रोमहिं साजैं ॥ ११
माता के गर्भ में बाल हिलै, क्या मातु ताहि अपराध गिनै।
हे अनंत जग सारा तुममें, हम नहिं बाहर यह वेद भनै ॥ १२
जब प्रलय होय त्रैलोक सभी, नारायण उदर समावैं हैं।
नारायण से फिर प्रगट होय, हमहूँ आपहि से आवैं हैं ॥ १३
जगके साक्षी मालिक आपहि, जलशायी नारायण गाये।
तव माया तुमसे प्रगट होय, सब जीव चराचर उपजाये ॥ १४
जल में स्थित जग सत तव तन, भगवन् जब हम नहिं लखपाये।
तप करायपुनि दिखलाय दिया, नहिं देश काल तुममें आये ॥१५
हे मायाहर इस वतार में, तुमने यह लीला फैलाई।
सब जगत उदर में रखते तुम, माया तुम्हारि नहिं लखपाई ॥१६
यह जगत आपकी कोख में है, तुम जगत में व्यापित सदा रहे।
तुममें तुमहीं सब जगत हरे, माया है कहने मात्र कहे ॥ १७

दो०—अबहिं लखा तुम बिन न कुछ, एक वत्स बहु ग्वाल।
चतुर्भुजी सब पूजि सुर, अंत आप गोपाल ॥ १८

छ०—नहिं जानैं जे प्रभु गति तुम्हारि, माया रचि आत्मा आप लसैं।
रचने में ब्रह्मा नाश में शिव, जगपालक ह्वै जग माहिं बसैं ॥१९
नहिं जन्म तहूँ सुर मुनि नर में; जल जीवों में अवतार धरो।
दुष्टों को मारि मद चूरण करि, निज भक्तों का प्रतिपाल करो ॥२०
भगवान परात्मा योगेश्वर, जग में को तव लीला जानै।
कब कहां किसतरह किसमें क्या, लख आवै नहिं क्रीड़ा ठानै ॥२१
तिससे जग स्वप्न समान प्रभू, बहु दुःखहि दुःख भरा इसमें।
तुम नित्य अनंत बोधमय में, सत समदीखै नहिं सत जिसमें ॥२२

दो०—एक आत्मा परपुरुष, पूरण मुक्त पुरान।
अक्षर नित्य अनंत सुख, अमृत एक भगवान ॥ २३

छ०—इसभांति सकल जग आत्मा तुम, आत्मासे आत्ममें लख आते।
गुरु सूर्य उपनिषत नेत्र देहिं, झूठा भवसागर तर जाते ॥ २४
आत्मा को आत्मपन से न लखैं, तिससे प्रपंच सारा आया।
हो ज्ञान जगतमें मरण जन्म, रजु सर्प तुल्य भ्रम क्षय पाया ॥२५
है बंध मोक्ष अज्ञान संज्ञ, तुम सत्यरूप सब जग माहीं।
केवल अचिंत्य पर विचार से, दिन राति सूर्य में कुछ नाहीं ॥२६
तुमही आत्मा परमात्मा हो, बाहर ढूंढ़ै नर अज्ञानी।
जगमें व्यापित सब ठौर आप, यह नहिं कहि ढूंढे सतज्ञानी ॥२७

दो०—नहीं तहाँ तुम रहत हो, जानहिं संत सुजान।
रज्जु सर्प भ्रम जिन्हैं है, किमि जानहिं अज्ञान ॥२८

छ०—पदकमलयुगुल के प्रसाद से, जिसपर प्रभु दाया धारी है।

वह आपकी महिमा को जानै, बहु ढूँढैं एक निहारी है ॥ २९
बड़भाग हमारें इस तन में, या औरहु नीच योनि तन में।
तुम्हरे जन में हम एक होंय, पदपंकज सेवैं शुचि मन से ॥३०
ब्रजकी गौ गोपी धन्य अहैं, जिनका अम्मृत सम दूध पिया।
अबतक न तृप्ति हित रुकै यज्ञ, सो बछरा बालकरूप लिया॥ ३१
बड़भाग अहो बड़भाग अहो, श्रीनंद गोप ब्रजबासी के।
जो पूरण ब्रह्म सनातन हरि, हैं मित्र सकल सुखरासी के ॥ ३२

दो०—इनकी महिमा है सही, हम इनमें बड़ भाग।
इन्द्री सुर में एक हैं, सतसुख लह्यो विभाग ॥ ३३

छ०—इस गोकुल कुंजनमें हो जन्म, बड़भाग चरणरज अंग परै।
हे मुकुंद जीवन सफल होय, पदरज श्रुति अबहूँ खोज करै ॥ ३४
क्या कहिये इन ब्रजबासी को, जिनके तुमही हो इष्टदाता।
तुमसे बढ़ि फलदाता न कोइ, भटकै यह जीव मोह लाता ॥
करि बैर पूतना सकुल तरी, छल से विष तुम्हें पिवाया है।
गृह अर्थ सुहृत्प्रियआत्मप्राण, जिनके तुम क्या नहिंपायाहै॥ ३५
तबतक रागादिक चोर ग्रसैं, तबहीं तक है गृह कारागार।
तबहींतक मोह जबरबेड़ी, जन ह्वै पदरज जबलौं नहिं धार॥ ३६

दो०—निःप्रपंच परपंच की, करत विडंबन आप।
भक्तन सुखदाता प्रभो, हरत सकल संताप ॥ ३७

छ०—जानैं ते जानैं कहेसे क्या, तन मनबानी तव विभव अहै।३८
करि देह दया सब लखि जानौ, प्रभु जगन्नाथ जग अर्पित है॥३९
श्रीकृष्ण वृष्णिकुलकमलरवी, महि द्विज सुर गौ रक्षाधारी।
राक्षस नाशक सुधर्म रक्षक, हे पूज्य नमो मंगलकारी ॥ ४०

श्रीशुकउ०—करि विनय प्रदक्षिण तीनवार, करिप्रणाम इष्टहिं धाम गये ।४१
ब्रह्माको भेजि लै प्रथम वत्स, प्रभु प्रथम गोप ढिग चलतभये ४२
सब छिपा लिये बछरा बालक, जो पीछे कृष्ण बनाये हैं ।
माया में मोहित बाल सबै, आधा क्षण वर्ष बताये हैं ॥ ४३
दो०—क्या नहिं भूलैं जगत में, माया मोहित लोग ।
जगत सबै विस्मृतमई, सत गुनि झूँठा भोग ॥ ४४
छ०—कृष्णहिं लखि मित्र सबै कहते, आइये बहुत जल्दी आये ।
बैठो जीमो वा वाह कृष्ण, नहिं एकौ कौर जीम पाये ॥ ४५
हँसि भोजन करि विहार करते, अजगर का चर्म दिखाते हैं ।
बछरा चराय आनंदसहित, बछरा बालक लै आते हैं ॥ ४६
शिर मोरपंख अँग रंगे चित्र, दलवेणु शृङ्ग उत्सव करते ।
बछरा बुलाय गुण गाव मित्र, करि प्रवेश गोपी सुखधरते ॥ ४७
सब कहते नन्द यशोदासुत, इक आज दैत्य अजगर मारा ।
उसके मुख से हमको राखा, पापी का कीना निस्तारा ॥ ४८
राजोवाच दो०—कृष्ण पराये पुत्र में, कैसे भा अस प्रेम ।
नहिं निज बछरा बालमें, किमि यह उलटानेम ॥ ४९
श्रीशुकउ०छ०—राजन सबजीवों कोअपना, आत्मा प्यारा सुत जन धनसे ५०
तैसा सब में नहिं प्रेम होय, जैसा हो निज आत्मा तनसे ॥ ५१
तन को जो आत्मा मानै हैं, तन सम नहिं और पियारा है ।५२
आत्माके तुल्य नहिं तन प्यारा, तन जीर्ण आश जिय धाराहै ॥५३
प्रिय से प्रिय सबको है आत्मा, तिसके हित जगत चराचर है ।५४
सब की आत्मा श्रीकृष्ण लखौ, जगके हित मायातन नर है ॥५५
चर अचर कृष्णमय जे जानैं, हरिरूप से कुछभी भिन्न नहीं ।५६
भव में सबका भावार्थ अहै, भगवानमें भव सब कृष्ण सही ॥५७

दो०—मुरारिके पदपंकज, जो राखै हिय माहिं।
गोपद सम भव तरि लहै, पद पद विपति न ताहि ॥५८

हे राजन तुमसे सभी कहा, जो प्रश्न आपने कीना है।
वर्णन कीना पौगंड माहिं, वय कुमार में वह लीना है ॥ ५९
अघमर्दन सुहृद संग जीमन, हरिचरित्र सुनते गाते हैं।
परमात्म कृष्णकी बिधिस्तुति, गा सभी मनोरथ पाते हैं ॥ ६०

दो०—करि विहार कौमार को, तजा कृष्ण बलराम।
सेतुबंध कपि फाँदिबो, लीला ललित ललाम ॥ ६१

भजन—करत बिधि हरि के चरण प्रणाम।
कर मुरली बनमाल विराजै, पीताम्बर घनश्याम ॥ टेक ॥
मोर मुकुट श्रुतिकुंडल हलकै, शोभा ललित ललाम।
कटि किंकिणि पद नूपुर शोभा, सुखदायक अभिराम ॥करत०
मायावश अज्ञानधारि हिय, हम यह कीना काम।
क्षमहु नाथ अपराध हमारा, आप दया के धाम ॥ करत०
कृपा कीन बिधि गये लोक निज, रटत हिये हरिनाम।
माधवराम श्याम हिय धारे, नित गावै गुणग्राम ॥ करत०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्दशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचदशोऽध्यायः।

श्लोक—ततः पञ्चदशे धेनुपालनं धेनुकार्दनम्।
कालियक्ष्वेडतो गोपरक्षणं च निरूप्यते ॥

दो०—पंद्रह में गोचारण, धेनुक बध हरि कीन।
काली क्रीड़ा गोप गौ, रत्तणहू कहि दीन ॥

श्रीशुक उ० छ०—पौगंड अवस्था रामकृष्ण, हरि लहिकै अब गोपाल भये।
अति पुण्यवान बृन्दाबन करि, लै सखा गऊ चारण को गये॥ १
सँग सखा मधुर बंशी बाजै, बल संग गोप यश गाते हैं।
करि विहार इच्छा गौ आगे, लै पुष्पित बन में जाते हैं॥ २
पत्ती बोलैं गुंजरहिं भृङ्ग, मृग डोलैं स्वच्छ जल वायु बहै।
शीतलहु मंद युतकमलगंध, लखि रमन हेतु हरि चित्त चहै॥ ३
पल्लव हैं लाल फल फूल डाल, झुकि मानहु पद प्रणाम करते।
हँसि आदिपुरुष भाई से कहैं, जो भाव आपने दिल धरते॥ ४

श्रीभगवानुवाच दो०—सुर अर्चित पदकमलमें, दै फल फूल प्रणाम।
शिर झुकाय याते करैं, दीनो जन्म ललाम॥ ५

छ०—ये भ्रमर विमलयश गाय रहे, प्रभु आदिपुरुष का भजन करैं।
प्रायः मुनिगण आपहि के हैं, बन माहिं छिपे नहिं त्याग धरैं॥ ६
नाचते मोर मृदु करैं शोर, हरिणी जो थीं सम प्रिय देखैं।
गृह आये कोकिल सूक्त पढ़ै, बनजीव धन्य सत सम लेखैं॥ ७
महि धन्य लता तृण औषधि सब, पद नख परसे सुख मानै हैं।
यमुना गिरि खग मृग दयादृष्टि, लखि भुजसे मिलना ठानै हैं॥ ८

श्रीशुक उ०—श्रीयुक्त पुण्य बृन्दाबन लखि, गिरि यमुनातट गोचारैं हैं ९
भ्रमरों सँग गावैं सकल सखा, श्रीकृष्ण चरित उच्चारैं है॥ १०

दो०—कल हंसों सँग कूजहीं, नाचहिं मोरन संग। ११
गऊ बुलावैं उच्च स्वर, गोप गऊ सुख ढंग॥ १२

छ०—चकवा चकोर क्रौंचहू मोर, सम शब्द जोर सब करते हैं।

ज्यों सिंह व्याघ्र से जीव डरैं, अनुकरण वही कर डरते हैं ॥ १३
क्रीड़ा में थके करि गोप कोर, तकिया बड़ भाय सुलाते हैं।
पद सेवा करते आप कृष्ण, यह शिक्षा सबहिं सिखाते हैं ॥ १४
नाचैं गावैं उछलैं औ भिड़ैं, हँसि करगहि सुयश सुनाते हैं। १५
पल्लव बिछाय थकि शयन लाय, तरुमूलहिं आश्रय लाते हैं ॥ १६
हरिपद सेवा कोइ गोप करैं, गत पाप सुव्यजन डोलावैं हैं। १७
भरि प्रेम हिये कृष्णानुकूल, मृदु गीत गोप कोइ गावैं हैं ॥ १८

दो०—माया में छिपि आत्मगति, करैं गोपसम खेल।
लक्ष्मी पद सेवा करैं, नरसम लीला मेल ॥ १९

छ०—श्रीदामा हरि बलराम सखा, स्तोक कृष्ण औ सुबलकहैं। २०
हे राम राम हे कृष्ण सुनो, है पास तालबन जान चहैं ॥ २१
फल गिरे तहाँ औ गिरते हैं, खल धेनुक ने सब रोक दिये। २२
है असुर गधे का रूपधरे, रहता निज जाति बलिष्ठ लिये ॥ २३
आदमियों को वह खा जाता है, क्या पशुकी खग नहिं जाते हैं। २४
फल पके कभी नहिं खाये हैं, आती सुगंध ललचाते हैं ॥ २५
लोभे सुगंध से देहु कृष्ण, है इच्छा राम करो पूरण। २६
सुनि मित्र बचन प्रियकरने को, चलभये करैं खलमद चूरण ॥ २७

दो०—ताल कँपाये बल प्रविशि, गज समान फल फेंक। २८
भया शब्द दौड़ा असुर, महि कँपाय गहि टेक ॥ २९

छ०—आ तिरछा पिछले पैर हनें, बलके उरमें फिर चिल्लाया। ३०
फिर आय क्रोध करि पैर हने, तबतो बलके भी क्रोध आया ॥ ३१
इक हाथहि से गहि दोउ पैर, चहुँ फेरि ताल में दे मारा। ३२
टूटा वो ताल गिर और और, बहु वृक्षोंयुत महि में डारा ॥ ३३

जो जो खर आवैं गहि फेंकै, ज्यो आँधीसे सब ताल गिरैं। ३४
जगदीश अनंत में चित्तनहीं, पट तंतु तुल्य जग जहाँ फिरैं॥ ३५
हतबंधु जातिवाले खल के, सब राम कृष्ण पै धाये हैं।३६
गहि गहि पद तुर्ताफुर्ती से, तालों पर दोउ चलाये हैं॥ ३७
दो०—फलसमूह खरदेह से, महि सोहती विशाल।
अकाश में शोभा अधिक, घन समान तरु ताल॥ ३८
छ०—नभवर्षिफूल सुर बाजबजैं, श्रीराम कृष्ण यश गाते हैं। ३९
धेनुक बनमें गौ तृण चरतीं, सबगोप खेलि फल खाते हैं॥ ४०
दृग कमल अमलयश कृष्णचंद्र, बल गोप संग ब्रज आते हैं। ४१
शिरमोरमुकुट गोरज अलकों, पलकों पै लसै छवि पाते हैं॥
बनपुष्प धरे मृदुहास करे, बंशी धुनि मधुर सुनाते हैं।
आरति उतार दै पुष्पहार, लखि गोपिबृन्द हर्षाते हैं॥ ४२
मुखकमल कृष्ण दृग भृङ्ग पिवैं, दिनताप गोपियां दूर करैं।
मृदुहास विनय लै भेंट कृष्ण, सब गोप कृष्ण निज जाहिं घरैं॥४३
दो०—यशुदा पुत्र वत्सला, रोहिणि परम उदार।
समय कामना देखिकै, सेवहिं बाल सुधार॥ ४४
छ०—मर्दन मज्जनसे श्रम छूटा, शुभवस्त्र पहिन चंदनमाला ४५
माता परसै शुभ भोजन करि, सुखशय्या सोवैं नँदलाला॥ ४६
बृन्दाबनचारी कृष्ण हरी, यमुना तट गे नहिं राम लिये। ४७
प्यासे गौ गोप दुष्ट विषजल, तपि आतपसे चट पान किये॥ ४८
विषजल पीतै बेहोश मृतक, जलतट ही पर गिर जाते हैं। ४९
लखि योगेश्वर के ईश कृष्ण, दृगअमृतबृष्टि कर ज्याते हैं॥५०
आ गया होश गौ गोप उठे, जल के समीप सब खड़े भये।
देखते परस्पर विस्मित ह्वै, आनन्द हृदय में भये नये॥ ५१

दो०—मानै गोविंद की दया, दृष्टिवृष्टि हरि कीन।
विषजल पीकर जी उठे, भये कृष्णपद लीन ॥ ५२

भजन—चरावत हैं ब्रज में हरि गैया।
गऊ दीन उपकार करै जग, यासों बनै गोसैंया ॥ टेक ॥
गोपबृंद बलराम भाय सँग, खेलहिं खेल कन्हैया।
गये तालबन धेनुक वध करि, गोपहिं सुफल देवैया ॥ चरावत०
बर्षि फूल सुर विनय सुनावैं, सुरपुर बजै बधैया।
माधवराम कृष्ण ब्रज आये, माधव सुयश गवैया ॥ चरावत०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचदशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षोडशोऽध्यायः।

श्लोक—षोड़शे कालियस्योक्तो निग्रहो यमुनाह्रदे।
तत्पत्नीभिः स्तुतेनाथ कृष्णेनानुग्रहः कृतः ॥

दो०—सोलह में कालीदमन, कालीदह में कीन।
सब नागिनि विनती करैं, कृष्ण कृपा करि दीन ॥

श्रीशुक उ० छं०—दूषित यमुना को निरखि कृष्ण, कालीका विष दुखदाई है।
काली को ह्वां से निकाल कर, यमुना जल करी सफाई है ॥ १
राजोवाच—कैसेपकड़ा भगवान सर्प,कबसे रहता मुनिवर कहिये।२
इच्छावर्ती भगवान कृष्ण, चरितामृत सुनि न तृप्ति लहिये ॥३
श्रीशुक उ०—यमुनामें कोईकालीदह, जिसमें विषसे जल चुरता है
पक्षी जो ऊपर उड़ता है, विषहवा लगे गिर पड़ता है ॥ ४
ज़हरीली लहर की वायू से, तट के तरु जंगम जीव मरैं। ५

विष वेग से दूषित नदी निरखि, खल दमन कृष्ण चट कूदि परैं॥

दो०—चढ़ि अति उच्च कदंब पै, कमर कसी हरषाय।
कूदि पड़े झट कुंड में, मोहन ताल बजाय॥ ६

छं०—पर पुरुष देह के सार भार से, कालीदह जल उमड़ि चला।
विषभरी लहर सौधनुष बढ़ीं, क्या अनंतबल को अधिक भला॥७
मदगजविक्रम हरि दह भीतर, भुजदंड से निर्भय विहरि रहे।
चक्षुःश्रव काली सुना शब्द, आया यह करतब नहीं सहे॥ ८
तनश्यामसुघन धरि पीत वसन, मृदु मंद हँसन मुरलीवाला।
खेलै निर्भय डसि कमलचरण, सबमर्म पै छाया फणकाला॥ ६
फण में लिपटे श्रीकृष्ण लखे, सब गोप गऊ घबड़ाये हैं।
कृष्णहिं में अर्पे हृदय नैन, महि गिरे होश नहिं लाये हैं॥ १०

दो०—गौ बृष बछड़ा बाछड़ी, दुखित सबै चिल्लांय।
कृष्णहिं को निरखैं खड़े, कुछ नहिं और सुहाय॥ ११

छं०—ब्रज में उत्पात कठिन होते, महि अकाश तनमें भयकहते १२
बिन राम गये गो चारन हरि, नन्दादि गोप भयदुख लहते॥१३
दुर्निमित्त से औरहि समझैं, हरि के बलको नहिं जाने हैं।
मनप्राण कृष्ण में दुःख शोक, भय से व्याकुल घबड़ाने हैं॥ १४
गोपी बालक औ बृद्ध संग, हरि दर्श आश ब्रजसे निकले।१५
आते लखि सब बलराम भाइ, हरि प्रभाव समुझि रहे चुपले॥१६
भगवतपद चिन्हित लखैं मार्ग, यमुना तट ही पर जाते हैं।१७
यव अंकुश ध्वजा वज्र निरखैं, झट उसही थलपर आते हैं॥ १८

दो०—फण में लिपटे कृष्ण लखि, गौ बालक चिल्लाहिं।
दह में कृष्ण विवश निरखि, नंदादिक बिलखाहिं॥१६

छ०—सब गोपी भगवतमें मन धरि, मृदु बाणी हँसन हिये सुमिरैं।
प्रिय प्रभु को अहिफण फँसा देखि, त्रैलोक शून्य सब देखि परैं २०
नँदरानी पानी में गिरतीं, पकड़े सम शोक दुखित रोवैं।
कहि कृष्ण कथा मुखकमल लखैं, जीवत ही मृत समान होवैं २१
नंदादिक प्रविशैं कुंड माहिं, रोकैं प्रभाव जानैं बलराम। २२
है अनन्य गति सब गोपि गोप, लखि अहिफणसे निकले घनश्याम २३
तनचूर होय ह्वै दुखित सर्प, झट छोड़ि कृष्ण फण फैलाये।
मुखनाक से उगलै ज़हर ज़ोर, ले स्वास दृष्टि हरितन लाये॥ २४

दो०—गलफड़ चाटै जीभ से, दृष्टि माहिं विष धारि।
गरुड़ सर्प सम घात निज, ताकैं सर्प मुरारि॥ २५

छ०—भूमते थक गया झुकाया शिर, चढ़ि आदिपुरुष कालीफण पर।
फणसमूह में मणिसमूह पर, नाचते कलागुरु बंशीधर॥ २६
नाचते देखि गंधर्व सिद्ध, सुर चारण वाद्य बजाते हैं।
सुरवधू गाय सुर सुमन लाय, करिकै प्रणाम बरषाते हैं॥ २७
जो शिर उठता पद प्रहार कर, शत एक शिरों को कुचल दिया।
मुख नाक से रक्त बहै घूमै, क्षीणायु सर्प बहु कष्ट लिया॥ २८
उगलै मुख नाक से ज़हर सर्प, रिस कर शिर जौन उठावै है।
लय ताल से नाचैं हरि पद धरि, सुर पुष्पवृष्टि बर्षावै हैं॥ २९

दो०—हरि के तांडव नृत्य से, फण फूटे तन चूर।
नारायण परपुरुष गुनि, ली पद शरण हज़ूर॥ ३०

छ०—जग गर्भ में हरिके सह न भार, पद प्रहार से फण चूर भये।
पति की गति लखि कै नागबधू, छुटकेश बन्दि पद शरण लये ३१
घबड़ाई बालक करि आगे, महि शिर धरि प्रभुहिं प्रणाम करै।

कर जोरि पतिव्रता पतिहित चहि, हरि पै विनवैं हिय शरण धरैं ३२
नागपत्न्यऊचुः—अपराधी पर करि उचित दंड, खलमर्दनको अवतार धरे।
रिपुपुत्रों पर क्या दम धारौ, समदृष्टि दया दम एक करे॥ ३३
हम पर यह दाया करी हरी, खल दंड पापहर संमत हैं।
यह सर्पअधमको शुद्ध किया, क्रोधहू दया सबका मत है॥३४

दो०—किया कौन तप सर्प ने, धर्म दया हिय धार।
तजि गुमान करनी करी, हरि कीना उद्धार॥ ३५

छ०—किसका प्रभाव हमनहिं जानैं, अधिकार कमलपद पाने का।
सुख छोड़ि करैं तप लक्ष्मीजी, पदसेवा सुखदृढ़ आने का॥ ३६
नहिं स्वर्ग भूप पद बिधिका पद, पाताल राज सिद्धी न चहैं।
मुक्ती की इच्छा नहिं राखैं, प्रभुपदरज ही शिर धारि रहैं॥ ३७
तम से है जन्म क्रोधी हु सर्प, बड़ भाग आपको पाया है।
संसार भ्रमित तनुधारी को, हो विभव प्रभू की दाया है॥ ३८
भगवान पुरुष आत्मा महान, परमात्मा जगवासी है नमो। ३९
विज्ञान ज्ञान ब्रह्महु अनंत, निर्गुण गुणवासी को प्रणमो॥ ४०

दो०—काल काल आश्रय प्रभू, साक्षी कालहु आप।
जगद्रष्टा कर्ता हरी, हरहु विश्व के ताप॥ ४१

छ०—मन प्राण इन्द्रियाँ और तत्व, बुद्धी गुण अहंकार आत्मा।४२
कूटस्थ सूक्ष्म पंडित अनंत, नाना विवाद सिध परमात्मा॥ ४३
नमो सर्वरूप कवि शास्त्रयोनि, निवृत्ति प्रवृत्ति निगम तनहैं ४४
श्रीरामकृष्ण वसुदेवपुत्र, अनिरुद्ध प्रदुम्न यती जन हैं॥ ४५
गुणदीपक नमो गुणों में छिपे, गुणद्रष्टा गुण लखते ज्ञानी। ४६
महिमा अतर्क जग प्रगट हेतु, नमो हृषीकेश मुनि हिय ध्यानी ४७

पर अवर गती जानौ मालिक, नमो विश्व अविश्व रूपधारे।४८
द्रष्टा हेतू जग जन्म नाश, पालन गुण से करनेहारे॥

दो०—काल शक्तिधर रूप नहिं, स्वभाव बोधनहार।
मतदृष्टी से देखते, प्रभुके सकल विहार॥ ४६

छ०—जगमें सब हैं तुम्हरे सरूप, कोइ शांत अशांत मूढ़ भारी।
प्रिय शांत भक्त जो धर्म धरैं, तिनके रक्षक ह्वै तनुधारी॥ ५०
तुम्हरी है प्रजा ममपति स्वामी, अपराध क्षमाकरौ जगदात्मा।५१
तुमको नहिं जाना दया करौ, अब प्राण तजे सुनो परमात्मा॥
नथ हमरी इसकी नाथ नाथ, प्रभु हाथ हृदय से लखि लीजै।
स्त्री हैं शोचनीय सब विधि, हमको पतिप्राण दान दीजै॥५२
दासी हैं आज्ञा हो सो करैं, इसही में सब सुख आता है।
श्रद्धा से शिर पर धरे नाथ, भय पाप सभी छुट जाता है॥ ५३

श्रीशुक उ०दो०—नागवधू की विनय सुनि, कृपा कीन भगवान।
फटे शीश मूर्छित फणी, छोड़ा बचिगे प्रान॥५४

छ०—थिर इन्द्रीप्राण भयो चेतन, कर जोरि कृष्ण की विनयकरै।५५
हम दुष्ट जाति तामसी बड़े, जाहिर है स्वभाव नहिं सुधरै॥ ५६
जग रचा गुणों से आपहि ने, नाना स्वभाव तन धारे हैं।
नाना योनी अंतहूकरन, सूरति गुण न्यारे न्यारे हैं॥ ५७
हम सर्प जातिही से क्रोधी, मायावश किमि माया त्यागैं। ५८
कारण तुमहीं जगदीश प्रभू, दया दंड करौ जो भल लागैं॥५६

श्रीशुकउ०—सुनि वचन कहैं हरि कारण नर, तुम सिंधु जाहु नहिं यहां रहौ।
यमुना जल पीवैं गऊ गोप, सुतनारि कुटुम सुख तहाँ लहौ॥६०

दो०—निज आज्ञा तुमसे कही, जो सुमिरैं नर प्रात।
दोनों संध्या में गुने, नहिं अहिदुःख लखात॥ ६१

छ०—ह्रद में नहाय जल से तर्पण, सुरमुनि पितरों का करते हैं।
मम पूजन औ उपवास करैं, सब पाप छूटि भव तरते हैं॥ ६२
जिस भय से रमणकद्वीप छोड़ि, इम यमुनादह में आये हो।
नहिं होय गरुड़ का भय तुमको, पदचिन्ह शीश पै पाये हो॥६३
श्रीशुकउ०—श्रीकृष्ण सर्प को आज्ञादी, नारीयुत पूजै प्रभु चीन्हा। ६४
मणिमाला बड़े मोल भूषण, चंदन शुभ कमलमाल दीना॥ ६५
गरुड़ध्वज जगन्नाथ पूजे, परिक्रमा प्रणाम सर्प कीना।
आज्ञा लै पुत्र कलत्र संग, घर का अपने मारग लीना॥ ६६

दो०—बसो जाय निज द्वीपमें, हरि की दाया पाय।
अमृतनीर यमुना भई, सबही को सुखदाय॥ ६७

भजन—हरी भक्तों के हैं रखवार।
गोप गऊ विषपय पी बनमें, महि गिरि होश बिसार॥ टेक
कृपादृष्टि करि मोहन ज्याये, छूटो विषय विकार।
बिना रामके आय कृष्णजी, किया खेल खिलवार॥ हरी०
गिरा गेंद कूदे जल भीतर, ग्रस काली फण फार।
तन बढ़ाय निकसे मधुसूदन, शिर पर भये सवार॥ हरी०
चरणपात से करि चूरण शिर, डारो मही पछार।
नागवधू विनती बहु कीनी, चरणकमल शिर धार॥ हरी०
ह्वै प्रसन्न निज द्वीप पठायो, करिकै अभय मुरारि।
माधवराम श्याम गुण गावैं, बार बार बलिहार॥ हरी०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षोडशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तदशोऽध्यायः।

श्लोक–नागंसप्तदशे नागालयं तं निरयापयत्।
बन्धून्स्वदुःखतः श्रान्तान् सुप्तांस्तत्रदयादपात्॥

दो०–नागालयसे नागको, सत्रह माहिं निकारि।
गोप थके सोये दुखित, दवारि से उद्धारि॥

राजोवाच छं०–नागालय रमणक द्वीप मुनी, काली ने क्यों कर त्याग दिया।
एकही गरुड़ का उसने क्या, ऐसा भारी अपराध किया॥ १
श्रीशुक उ०–प्रति मास मास में सभी सर्प, मिलि गरुड़को भेट दिया करते २
निज निज रक्षाको पर्व पर्व में, पूजा सब इकत्र धरते॥ ३
विषवीर्य मदान्वित काली वह, नहिं गरुड़ मान सब खायलिया। ४
आगरुड़ सुना सब हाल, दौड़ि, काली मर्दन को कोप किया॥५
लखि आते सौ शिर से काली, विषआयुध जीभ कराल धरे।
दंतायुध उग्र नेत्र भिड़ कर, काटा मिलि दोऊ युद्ध करे॥ ६
दो०–कोप प्रचंड किये गरुड़, दीन ताहि फटकार।
बाम पक्ष से ताहि हनि, कद्रूसुतहि पछार॥ ७
छं०–विह्वल काली ह्वां से भागा, यमुनादह में आ प्रविश गया।
जानता गरुड़ नहिं आय सकैं, बसि यहां बहुत आनन्द भया॥ ८
जलचरों को गरुड़ तहां पकड़ै, रोकासौभरि हठि क्षुधित गहै। ९
सबमीन दुखीमालिक के मरे, मुनिकुशलकरैं को बचन कहै॥ १०
ह्वां आय गरुड़ जो ग्रसै मीन, मरजाय सत्य हम कहते हैं। ११
काली यह शाप हाल जानै, आया हरि बाहर चहते हैं॥ १२

अहि पठै कृष्ण बाहर आये, मणि स्वर्ण बसन माला धारे। १३
आनन्द पाय सब गोपमिले, तनप्राणपाय सुख निस्तारे॥ १४

दो०—नन्द यशोदा गोपियां, कृष्णहिं गोद उठाय।
मुख चूमैं आनन्द लहि, सफल मनोरथ पाय॥ १५

छ०—बलराम कृष्णसे मिलिहँसते, बृष गऊ वत्स आनन्द लहे १६
गुरु विप्र कलत्र सहित आये, सुत बचा नन्द से बचन कहे॥१७
हरिमुक्ति हेतु दो द्विजहिं दान, गो स्वर्ण नन्द विप्रन देते।१८
सुत पाय यशोदा लिये गोद, दृग बहैं गोप आनँद लेते॥ १९
हो गई रात भूखे प्यासे, गौ गोप वहीं पर सोय गये। २०
ग्रीषम दवारि बन में बाढ़ी, अधरात समय सब तप्त भये॥ २१
तपते ब्रजवासी विकल उठे, लीला नरहरि की गही शरन। २२
हे कृष्ण कृष्ण हे राम बली, इस दवारि से सब लगे जरन॥२३
इस दुस्तर कालअग्नि से प्रभु, हम आपके हमैं बचा लीजै।
निर्भय तव चरण न त्यागि सकैं, भयसे व्याकुल निर्भयकीजै॥२४

दो०—स्वजन विकलता सुनी हरि, जगदीश्वर करतार।
अग्नि पान करि युक्ति से, अनंत शक्ती धार॥ २५

भजन—सदा गोविन्द भक्तों को, विपत्ती से बचाते हैं।
शरन लेते बिना पूँछे, जो उनके पास आते हैं॥ टेक॥
बसाया कालिया निज घर, निकल जब कुंड से आये।
मिले सब गोप हिय सुख भर, गले हरि को लगाते हैं॥ सदा०
यशोदा नन्द सब गोपी, गऊ बृष मग्न हैं दिल में।
कमलमुख चूमते खुश हो, मनहु फिर प्राण पाते हैं॥ सदा०

विप्र सब नन्द से कहते, बचाया ईश ने बालक।
दान दो नन्दजी सुनिकै, गऊ सोना लुटाते हैं ॥ सदा०
लगी दावानलौ बन में, बचाया कृष्णजी झट से।
समुझ ये रातदिन माधव, राम गुन गान गाते हैं ॥ सदा०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तदशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टादशोऽध्यायः।

श्लो०—अष्टादशे ततो ग्रीष्मे वसन्तगुणलक्षिते।
अघायद्बलेनालं प्रलम्बं लीलयाहरिः॥

दोहा—अट्ठारह में ग्रीष्मऋतु, वसन्त तुल्य विराज।
बल प्रलम्ब को मारिकै, शोभित गोपसमाज॥

श्रीशुकउ०छ०—फिर कृष्ण संग गोपादि मातु, हर्षित व्रजमाहिं प्रवेश किया १
क्रीड़ा करते करि छद्मबेष, अप्रिय ग्रीषम ऋतु बास लिया॥ २
बृन्दाबन गुण से वसन्त सम, भगवान राम हरि प्रगट भये। ३
झरनों से झिल्ली शब्द छिपै, जल फुहार से तरु हरित नये॥ ४
सरिता सर से शीतल है वायु, मिल कमल धूरि से वासित है।
रह हरित भूमि तहँ सूर्य ताप से, कोई जीव नहिं तापित है॥५
है अगाध जल पुष्करिणी में, तिनके तट लहरों से हैं हरे।
विष तुल्य सूर्यकिरणैं जहँ पर, महि शीतल लहि नहिं जोर करे॥ ६
दो०—फूले बन बोलैं बिहँग, भ्रमर मोर करैं शोर।
कोकिल कूजैं मृग फिरैं, सारस शब्द न थोर॥ ७
छ०—भगवान रामयुत खेल करहिं, सब बालक गऊ चरावैं हैं। ८

शिर मोरमुकुट बनमाल अंग, सब मिलिकै नाचैं गावैं हैं ॥ ९
हरि नाचैं कोइ गावैं बजाव, दै ताल कोइ वहवाह करैं।
इस भाँति सभी नाचैं गावैं, भगवान भक्त आनन्द भरैं ॥ १०
सब गोप देवतारूप अहैं, श्रीराम कृष्ण स्तुति करते। ११
भ्रामण फाँदिबो खैंचि फेंकन, सबके सँग युद्ध हेत भिड़ते ॥१२
दोउ वाद्य बजावैं गोप नचैं, वहवाह प्रशंसा आप कहैं। १३
औंला कहिं विल्व नेत्र मूँदैं, मृग खग की चेष्टा सबै गहैं ॥१४

दो०—फांदैं मेंढुक सम सबै, करैं विविधि उपहास।
भूला भूलैं नृपति बन, लीला करैं हुलास ॥ १५

छ०—बहु लोकप्रसिद्ध करैं लीला, सर सरिता तट गिरि कुंजन में।१६
धरि गोप रूप प्रलंब आया, खेलैं जहँ राम कृष्ण बन में ॥ १७
सबदर्शी कृष्ण उसे जाना, वध विचार उसका साथ किया। १८
सब गोप बोलाये सलाहकी, दो दो मिलि खेलन ठान लिया ॥१९
मुखिया बनिगे श्रीराम कृष्ण, कोइ कृष्ण ओर कोइ राम ओर।२०
जीते सवार हारे ले चलैं, करि चढ़ा चढ़ी बद दिया ठौर ॥ २१
खेलते चराते गौवों को, बट भांडीर तक पहुँचि गये। २२
बलराम ओर श्रीदाम बृषभ, जीते हरि पक्षी लेत भये ॥ २३

दो०—हरि श्रीदामा को लिये, प्रलंब पै बलराम।
भद्रसेन चढ़ि बृषभ पै, निज निज जोड़ तमाम ॥२४

छ०—नहिं कृष्ण से पार मिलै गुनिकै, बलदेवहिं दैत्य चढ़ाय चला।२५
धरणीधर गिरि सम गरू हैं बल, थकगया असुर किमि चलै भला॥
घन बिजलीयुत वह भूषणधर, त्यों असुर चंद्र सम राम धरे।२६
तन विकट भृकुटि कराल दाढ़ैं, लखि चमकक्रीट क्रुद्ध रामडरे ॥२७

आ गई याद भय छोड़ि रिपुहिं, देखा हमको लिये जावै है।
गिरिमें जिमि बज्र बाँधि घूँसा, बल खल के शीश लगावै है ॥२८
लगते मस्तक फट गया गिरा, मुँह रक्त बहै बेहोश भया।
करि घोर शब्द मर गया दुष्ट, पापी उत्तमगति पाय गया ॥२९
गिरि बज्रसे त्यों बलराम से खल, लखि विस्मित गोप वाह कहते ।३०
जनु फेरि मिले यश कहि मिलते, पूजनकरि प्रेम हिये लहते ॥३१

दो०—बध प्रलंब को देखिकै, सुर हिय हर्ष महान।
बर्षि फूल गुण गावहीं, साधु साधु भगवान ॥३२

भजन—प्रलंबासुरहिं बध्यो बलराम ॥ टेक ॥
रामकृष्ण सब गोप कुंज में, लीला करहिं ललाम।
तहां प्रलंबासुर खल आयो, साधन हित निज काम ॥ प्रलंबा०
खेल खेलि बलदेव मुष्ठि हनि, कीना काम तमाम।
माधवराम पुष्प सुर बर्षहिं, गावैं हरि गुणग्राम ॥ प्रलंबा०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टादशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनविंशोऽध्यायः।

श्लोक—ऊनविंशे निविष्टं तु गोपगोकुलमच्युतः।
मुंजारण्यमरण्याग्ने ररक्षतन्निपानतः ॥

दो०—उनइस में गौ गोप सब, गये मूंजबन माहिं।
लगि दवारि हरि पान करि, राखे जन हर्षाहिं ॥

श्रीशुक उ० छ०—सब गोप खेलनेमें अटके, तृण लोभसे गौवैं दूरगईं। १
सब गौवैं बनसे मूंजबनहिं, तहँ दवारि फँसि चिल्लात भईं ॥ २

बल कृष्ण गोप नहिं गऊ लखैं, ढूढैं गौवैं सब घबड़ाये। ३
तृण खुदे खुरों के चिन्ह देखि, हैं नष्ट जीविका सब धाये॥ ४
मुंजाटविजहं पै भ्रष्ट मार्ग, सब गौवैं तहँ चिल्लाय रहीं।
प्यासी औ थकीं इतउत भटकैं, सब विकल जहाँतहँ धाय रहीं॥ ५
जब मेघनाद करि हरि बुलाव, निजनाम सुनैं प्रतिशब्द करैं। ६
ताही क्षण जगी प्रचंड अग्नि, बन जारै काल सरूप धरै॥

दो०—बनजीवों के नाश हित, वायु उदंड प्रवाह।
चाटि जाय चर अचर को, कैसेहु नहिं निर्वाह॥ ७

छ०—आते लखि संमुख दवारि को, गौ गोप बहुत घबड़ाये हैं।
जिमि मृत्यु से व्याकुल जीव सबै, बलहरि की शरणहिं आये हैं ८
हे कृष्ण कृष्ण प्रभु महावीर, हे राम अमित विक्रम धारे।
हम शरण आपकी बचाय लो, बनअग्नि हमैं डारै जारे॥ ९
हम बंधु आपके कृष्णचंद्र, हमको नहिं दुःख मिला चहिये।
तुममालिक तुम्हैं परायण हैं, धर्मज्ञ ख्याल हियमें लहिये॥ १०
श्रीशुक उ०—बंधुओं के दीनबचन सुनि हरि, दृग बन्द करो मत डरो कहैं ११
मूँदी आँखैं पी गये अग्नि, दुख छुटा दिया योगीश अहैं॥ १२
खोलीं आँखैं भांडीर पहुंचि, गौ गोप हिये अचरज करते।१३
माया प्रभाव बल योग निरखि, हैं कृष्ण देवता मन धरते॥ १४

दो०—हरि बल गोप गऊ लिये, ब्रज प्रवेश गुन गान। १५
प्रभुलखि गोपी लहैं सुख, हरिबिन क्षण युगमान॥ १६

भजन—शरण से छूटै जगत दवारि॥ टेक॥
गौवैं गईं मूंजबन चरने, खेलहिं खेल सम्हारि।
भया होश सब गौवैं ढूंढैं, भई हानि अरु हारि॥ शरण०

ताही समय दवारि लगी बन, हाहाकार पुकारि।
आंखि मुदाय पान करि अग्नी, रच्छा कीन मुरारि॥ शरण०
शरणागत जे रहैं कृष्ण की, विपति लेहिं उद्धारि।
माधवराम श्याम पदपंकज, बार बार बलिहारि॥ शरण०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनविंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे विंशोऽध्यायः।

श्लो०—विंशेप्रावृट् शरच्छोभा वर्णनेन बनोचिताः।
प्रावृट् क्रीडा निरूप्यन्ते गोपरामयुजो हरेः॥

दो०—बीस में बर्षा शरद ऋतु, वर्णन करैं बनाय।
राम कृष्ण सब गोप की, बर्षा क्रीड़ा गाय॥

श्रीशुकउ० छं०—बल प्रलंब वध हरि अग्निपान, सब गोप गोपियोंसे कहते।१
सब गोप बृद्ध गोपी विस्मित, हैं राम कृष्ण सुर हिय लहते॥२
आई सब जीव जननि बर्षा, आकाश में घन बिजली छाये।३
नीले बादल बिजली चमकै, ज्यों ब्रह्म सगुण सरूप पाये॥ ४
जो आठ मास में जल खींचा, रवि किरणों से अब छोड़ि रहे।५
बह वायु मेघ बिजली चमकै, बर्षैं जिमि हरिजन कृपा गहे॥ ६
महि तपी बृष्टि से पूर्ण भई, कामना तपस्वी फल को लिये।७
जुगुनू चमकैं ग्रह नहिं दिखाहिं, कलि में न वेद पाखंड किये॥८

दो०—घन गर्जन सुनि गगन में, मेंढक भरैं अवाज।
नियम पूर्ण मंगल करैं, जैसे विप्र समाज॥ ९

छं०—सूखी लघु नदियां उमड़ चलीं, जिमि विषयविवशकी तन दौलत १०
महि हरी वीरवधु कृमिसे लाल, छाये गराज जिमि नर संपत् ॥ ११
खेती पूरण लखि किसान खुश, धनी ताप लहैं नहिं दैव लखैं ।१२
जलथल बासी तन सुघर लहे, हरि भजे शुभ्रतन जन न झखैं ॥१३
नदियों से मिलि समुद्र चोभित, नहिं पक्क योग योगीका दिल १४
बर्षा से पर्वत नहीं हिलैं, हरिभक्तचित्त विषयों से न हिल ॥१५
तृण से नहिं पंथ दिखाय पड़ै, विप्रों के वेद अभ्यास रहित ।१६
चंचल बिजली घनमें नहिं थिर, कुलटा का गुणीपुरुषोंमें नचित१७

दो०—गगन महेन्द्र धनुष उदै, रोदा बिना दिखाय ।
निर्गुण ब्रह्म पुरुष यथा, गुण वाला ह्वै जाय ॥१८

छं०—बादल में चंद्र नहिं देखि पड़ै, हंकार से आत्मा छिपि जाये १९
बादल लखते बोलते मोर, गृह से तपि गृही भक्त आये ॥२०
जल पीकर तरु हरिआते हैं, तप तपे तपस्वी सुख पाये ।२१
सारस सरवर तट में बैठे, गृह काज थके नर चुप लाये ॥२२
जल बढ़ाव से पुल टूट गये, कलि में पखंड श्रुतिमार्ग हरैं। २३
वायू से घन बहु जल बर्षै, जिमि अशीष विप्र प्रदान करैं ॥२४
पक्क बन में खजूर जामुन, गो गोप बल सहित कृ ण गये ।२५
आयन भारी हैं गौवों के, भगवान बुलाये दूध चुये ॥२६

दो०—बनबासी सब हर्ष चित, मधु चुचाय बन पांति ।
जलधारा गिरिसे बहैं, गिरि कंदरा सुहाति ॥ २७

छं०—बर्षा में तरुतर गुफामाहिं, बसि कंद मूल फल खाते हैं। २८
जल निकट शिला पै दहीभात, खा सखा संग सुख पाते हैं ॥ २९
हरियाली महि पै छाय गई, गौ पागुरि करतीं सुख पाये ।

बछरा बछरी सब बृषभ सुखी, सारे ब्रज में आनँद छाये ॥ ३०
सब सुखदाई आ गई शरद, भगवान बड़ाई करते हैं । ३१
यों रामकृष्ण क्रीडा करते, घन सुजल विमलता धरते हैं ॥ ३२
जल शरद पायकै निर्मल भे, ज्यों भ्रष्टचित्त फिर योग किये । ३३
घन जीव सब लता, महि कीचड़, ज्यों भक्ति पाप हर लेत हिये ३४

दो०—मेघ सबै जल त्यागिकै, निर्मलता रह छाय ।
तृष्णा तजि मुनि संत ज्यों, पाप छुटै सुख पाय ॥ ३५

छ०—गिरि से झरना झरते औरुकैं, ज्ञानीजन ज्ञान न दंयदंय ।३६
हैं सुखी मीन गहरे जलमें, लघुताल सूख जल सुधि नहिंलेय ॥३७
ज्यों आयुक्षीण धन कुटुंबदुख, रवि शरद ताप जलजीव लहैं ।३८
जलतट धीरे कीचड़ त्यागैं, ज्यों धीर अहंतजि शांति गहैं ॥ ३९
होगया शरद में सिंधुधीर, मुनि आत्म पाय सब क्रिया तजैं ४०
खेती में जल किसान रोकैं, बलज्ञान में प्राणायाम सजैं ॥ ४१
रविताप शरद में चंद्र हरैं, ज्यों ज्ञान अहं हरि गोपी मद । ४२
आकाश मेघ बिन विमल नखत, वेदार्थ लखेपावे शुभचित ॥४३

दो०—अखंड मंडल शशि लसै, तारागण छवि छाय ।
यदुवंशी सब साथ लै, कृष्णचन्द्र सुख पाय ॥ ४४

छ०—लहि शरद वायु जन ताप तजैं, हरि वियोग दुखगोपीहि सहैं ४५
गोमृग खगनारी पुष्पवती, निज निजपति का सँग सभी लहैं ॥४६
बिन कुमुद शरद में कमल खिले, बिन चोर भूपसे निर्भय जन । ४७
पुरग्राम सभी थल में उत्सव, महि पकेधान हरिकिलासे मन ॥४८

दो०—वैश्य मुनीश्वर महीपति, स्नातक स्वारथ पाय ।
समय से रोकी सिद्धि ज्यों, सिद्ध पाय हरषाय ॥ ४९

भजन—शरद बर्षा ऋतु वर्णन कीन ॥ टेक ॥
बर्षा बर्षि सुखी जन कीने, भक्तन हरि सुख दीन ।
शरद सबै विकार लेवै हरि, भक्ति से माया छीन ॥ शरद०
सुख दुख पाप पुण्य जग में हैं, जीव कर्म आधीन ।
माधवराम श्याम भव तारैं, सब तजि हरिगुण लीन ॥ शरद०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे विंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकविंशोऽध्यायः ।

श्लोक—एकविंशे शरद्रम्यबृन्दाबनगतेहरौ ।
तद्वेणुस्वनमाकर्ण्य गोपीभिर्गीतमीर्यते ॥

दो०—एकइस में शुभ शरद ऋतु, सुन बंशी हरषाय ।
बृन्दाबन में गोपियां, रहीं गीत सब गाय ॥

श्रीशुकउ०छ०—इसभांति शरद में निर्मल जल, खिलरहे कमल शुभवायु बहै ।
गोपालकृष्ण सँग गऊ गोप, बन फूले सुना प्रवेश चहै ॥ १
सर नदी कुंज गिरि बन फूले, गुंजार भ्रमर पक्षी करते ।
बलराम गोप लै कृष्णचंद्र, गो चराय बंशी धुनि धरते ॥ २
सुनि ब्रजगोपिन के चितचंचल, सखियों से कहने लगती हैं ।३
हरिरूप सुमिरि नहिं कहि सकतीं, मनविकल कामसे ठगती हैं ।।४
शिर मोर मुकुट नटवर सरूप, कानों में कर्णिकार धारे ।
तन में पीतांबर सोह रहा, बनमाल विभूषण बहु न्यारे ॥

दो०—गोप सखा सँग हरि लिये, बंशी मधुर बजाय ।
बृन्दाबन पद से रमण, तहँ प्रभु प्रविशे जाय ॥ ५

छ०—हे राजन बंशीधुनि चितहर, सब ही के मन हर लेती है।
सुनि कै गोपी हिलमिल कहतीं, आपस में आनँद देती हैं ॥६
गोप्य ऊचुः—दृगधारे का फल यही सखी, बंशीवाले का दर्शकरैं।
गोचारण करते सखा संग, मुखचंद लखैं आनन्द धरैं ॥ ७
शिर आतपत्र[१] पुष्पोंके गुच्छ, बनमाल मुकुट शुभवेश लिये।
नटवर गोपों की गोष्ठी में, नटवर सोहै मृदुगान किये ॥ ८
क्या इस बंशी ने पुण्य किया, हरि अधरसुधामृत निज प्यावैं।
पुष्करिणीरोंवा कमलबृक्ष, मधु आर्य भक्त सुत हरषावैं ॥ ६
पदकमल कृष्ण स्पर्श किये, बृन्दाबन कीरति महि छाई।
बंशी धुनि मानै मेघशब्द, नाचैं मयूर हिय हरषाई ॥ १०
यह मूढमती हरिणी हैं धन्य, पतिसहित कृष्णमुख देखैं हैं।
दृग की शोभा जनु भेट देहिं, बंशी सुनि आनँद लेखैं हैं ॥ ११
दो०-रूप शील तिय हर्ष हित, धुनि बंशी मृदु गान।
केश वस्त्र सुरवधू के, खुलैं होंय हैरान ॥ १२
छ०—श्रीकृष्ण वेणुकी मधुर तान, गौ उठाय मुख कानोंसे पियैं।
तृण मुख में थनसे दूध चुवै, बह अश्रु आत्मा हरिमें किये ॥१३
सब बन के पक्षी मुनिही हैं, छवि लखैं मधुर बंशी सुनते।
तरु पल्लव में बैठे सुख से, दृग बंद किये हरियश गुनते ॥ १४
सरिता में मुकुन्द बंशी सुनि, जल का प्रवाह रुक जाता है।
उलटी लहरैं लै कमल भेट, पद गहैं यही लख आता है ॥ १५
बलराम गोप सँग कृष्णचंद्र, जब घाम में गऊ चराते हैं।
बंशीधुनि सुनि पुष्पहिं तुषार, घन छाया करि बरषाते हैं ॥ १६

१ छाता।

दो०—बड़भागिनि भिल्लिनि अहैं, पदरज स्तन माहिं।
मुख में मलि व्याधो हरैं, छविलखि हिय हर्षाहिं ॥ १७

छ०—भक्तों में श्रेष्ठ गोबर्द्धन है, श्रीराम कृष्ण पद अंग धरै।
तृण कन्द मूल कन्दरा सुजल से, गौ गोपहु सत्कार करै ॥ १८
बंशी धुनि करते बन बन में, गोपों सँग गऊ चराते हैं।
तरु जंगम धर्म हिलैं डालैं, जंगम थिर हो रुक जाते हैं ॥ १९

दो०—बनचारी भगवान के, सब करतीं गुणगान।
गोपी क्रीड़ा मिलि कहैं, तन मय रखतीं प्रान ॥ २०

भजन—लला की बंशी बाजै रे, सातोस्वर मृदु लेहिं तान, हो ॥ टेक
मोर मुकुट अँग में पीताम्बर, उर बनमाल विराजै रे।
कटिकिंकिणि कर कटक मंनोहर, सबै अंग छवि छाजै रे ॥ लला०
अंग अंग शोभा लखि तनकी, कोटिशत कामहु लाजै रे।
माधवराम श्याम छवि सुरलखि, जय जय करैं अवाजै रे ॥ लला०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकविंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वाविंशोऽध्यायः।

श्लोक—द्वाविंशे गोपकन्यानां वस्त्राहरणलीलया।
वरं दत्वा गतः कृष्णो यज्ञशालामितीर्य्यते ॥

दो०—गोप सुता के बस्त्र हरि, तिन्हैं दिया बरदान।
गये यज्ञशाला हरी, बाइस में भगवान ॥

श्रीशुकउ०छ०—हेमंत ऋतू का प्रथम मास, अगहन पुनीत जब आया है।
कात्यायनिपूजन गोपसुता, अपने अपने मन लाया है ॥ १

यमुना नहाय प्रातही काल, देवी का पूजन करती हैं। २
चंदन अक्षत सब धूप दीप, फल फूल लाय बहु धरती हैं॥ ३
कात्यायनि महामात ईश्वरि, पति नंद गोपसुत देहु हमें।
यह मंत्र पढ़ैं पूजैं देवी, हे महायोगिनी नमो तुम्हें॥ ४
इस तरह मास भर ब्रत करिकै, देवी पूजैं मन कृष्ण धरैं। ५
उठि प्रातकाल गलबाहीं डाल, जातीं नहांय गुण गान करैं॥ ६
यमुनातट आय वस्त्र धरिकै, इक दिन मज्जहिं गुन चित धरिकै ७
योगेश्वर कृष्ण सबै लखिकै, आये सँग गोप सखा जुरिकै॥ ८

दो०—सबके वस्त्र उठाय कै, चढ़े कदंबहिं जाय।
गोपबाल चुप हँस रहे, पड़ैं न कृष्ण लखाय॥ ९

छं०—वह लगी ढूंढने वस्त्र, आप कहते ह्यां आय वस्त्र लीजै।
तुम ब्रत कीने हम सत्य कहैं, नहिं तुम सबसे हाँसी कीजै॥१०
नहिं कहैं असत जानैं ये गोप, इक इक या साथहि लै जावैं। ११
सुनि हँसीं प्रेमडूबीं गोपी, लज्जित हँसतीं नहिं ह्वाँ आवैं॥ १२
गोविंद बचन से खिंचा चित्त, गल से डूबीं यों कहती हैं। १३
मत अनीति कीजै देहु बस्त्र, ब्रज कीर्ति तुम्हारी चहती हैं॥ १४
प्रिय नंदगोपसुत श्यामसुंदर, हम दासी कहना मानैंगी।
धर्मज्ञ दीजिये वस्त्र हमैं, नहिं कंसराय पै तानैंगी॥ १५
श्रीभगवानु० दो०—ममदासी कहना करौं, वस्त्र आय लै जांय।१६
निकसीं जल बाहर सबै, कर से अंग छिपाय॥१७
छं०—लखि शुद्धभाव हरि प्रसन्न हैं, कंधे पै वस्त्र धरि कहते हैं।१८
तुम नग्न नहाईं ब्रत धारे, अपराध क्षमापन चहते हैं॥
कर जोरि प्रणांम करो झुकि कै, अपराध छुटै प्रणाम कीजै। १९

नंगे नहाय ब्रत हानि मानि, पूरण हित प्रभु प्रणाम लीजै॥ २०
करतीं प्रणाम लखि कृष्णचंद, हर्षित हो वस्त्र सबहिं देवैं। २१
बंचना निलज उपहास भई, गोपी मन इरषा नहिं लेवैं॥ २२
प्रिय संग से हर्षित वस्त्र लिये, पद पर्शन की कामना हिये। २३
ब्रत लिये गोपि संकल्प देखि, श्रीकृष्णचंद यह बचन दिये॥ २४

दो०—हे गोपी संकल्प अरु, पूजन लखा तुम्हार।
हमने अनुमोदन किया, सत्य होय निरधार॥ २५

छ०—मेरे में बुद्धि लगी जिनकी, नहिं काम भोगका है तिनका।
नहिं भुनाबीज औ चुरा जमै, मम संग न होय विषयपनका॥ २६
हो गोपी सिद्ध जाहु ब्रज में, मेरे सँग रास आप करिहैं।
देवी का पूजन ब्रत धारा, हो सती तुम्हारा दुख हरिहैं॥ २७
श्रीशुक उ०—कामना पूर हरि आज्ञालै, गोपी निज निजगृह आवै हैं २८
गोपों को संग लै कृष्णचंद्र, गोचारण को बन जावै हैं॥ २९
लखि घाम में बृक्षों की छाया, जिमि छत्र गोपगनसे कहते। ३०
स्तोक कृष्ण श्रीदाम अंश, सुबलार्जुन यह कहना चहते॥ ३१

दो०—बृक्ष महाभागी लखो, जिवैं पराये हेत।
बर्षा वायु घाम सहि, परहित राखैं नेत॥ ३२

छ०—तरुजन्मश्रेष्ठ परउपकारी, जिमिसुजनके याचकफिरैं नहीं ३३
फल पत्र पुष्प छाया बकला, गोंदहू काष्ठ नित देहिं सही॥ ३४
तनधारी का अस जन्म सफल, तन धन बुधि से उपकार करै। ३५
इस भांति पुष्प फलवाले तरु, बृन्दों के तरे ह्वै हरि विचरैं॥ ३६
यमुना पै पहुंचि गौ जल पिवाय, गौवों को तहां चराते हैं।
सब गोप स्वादु यमुनाजल पी, मन में अति आनँद पाते हैं ३७

दो०–गऊ चरावहिं कृष्ण बल, गोप सहित सुख मान।
भूखे ह्वै हरि से कहैं, देहु अन्न भगवान॥ ३८

भजन–जगत में करैं बृक्ष उपकार॥ टेक
पत्र पुष्प फल देहिं सबै को, बर्षा घाम निवार।
आप सहैं बर्षा बहु आतप, छाया देहिं पसार॥ जगत में०
बृक्ष काटि कै काष्ठ जरावैं, बनते द्वार किवार।
कोइला राख काम बहु साधै, करलो हिये विचार॥ जगत में०
जब जड़ जीव पराया हित कर, नर चेतन तन धार।
तन धन से उपकार न कीना, सब लादे ज्यों भार॥ जगत में०
यहां कहैं का सुख भोगै हैं, ह्वां दुख नर्क अपार।
माधवराम श्याम गुण गाये, हमरा बेड़ा पार॥ जगत में०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वाविंशोऽध्यायः।

———०:०:०———

अथ श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयोविंशोऽध्यायः।

———०———

श्लोक–त्रयोविंशे ततो गोपैरन्नयांचाऽपदेशतः।
तत्पत्न्यनुग्रहात्कृष्णो दीक्षितानन्वतापयत्॥

दो०–अन्नयाचना ब्याज से, द्विज पहँ गोप पठाय।
तेइस में तिय दया करि, विप्रन ताप कराय॥

गोपा ऊचुः छं०–हे राम राम हो महावीर, हे कृष्ण दुष्ट मारनहारे।
यह क्षुधा हमैं दुख देती है, तुमहीं अब शांति करो प्यारे॥ १
श्रीशुक उ०–इस तरह गोप विनती सुनिकै, द्विजनारीपर खुश हो कहते २
आंगिरस यज्ञ में जाहु करैं, द्विज स्वर्ग कामना चित धरते॥ ३

तहँ जाय भात माँगो उनसे, भाई मेरा भी नाम कथन। ४
हरि के भेजे सब गोप गये, विप्रों को नमिकैं कहैं बचन॥ ५
हे भूमिदेव सुनि देहु बचन, हम कृष्ण के आज्ञाकारी हैं।
उनहीं के भेजे आये हैं, अब लीनी शरण तुम्हारी है॥ ६
गो चारण करते ह्याँ आये, हैं भूँखे भोजन चहते हैं।
उनके भेजे लेने आये, धर्मज्ञ दीजिये कहते हैं॥ ७
पशु संस्था वाली यज्ञ छोड़, अन्यत्र न खाने में है दोष। ८
इस भांति कृष्ण के याचन को, कर सुनी अनसुनी हैं बेहोश॥

दो०—तुच्छ आश बहु कामना, बृद्ध गुनै अज्ञान। ९
देश काल मंत्राग्नि सब, यज्ञ कृष्णमय जान॥ १०

छ०—भगवान ब्रह्म को मनुज समुझि, अज्ञानी ब्रह्म न लख पाये। ११
हां नाहीं कुछ भी कहा नहीं, तजिआश गोप हरिपहँ आये॥१२
सुनि जगदीश्वर हँसि फेरि कहैं, गोपों को लोक गति दिखलाई १३
स्त्रियों से मुझे कहो बलयुत, दें अन्न चित्त मुझमें लाई॥ १४
पत्नीशाला में गये गोप, करि प्रणाम बचन सुनाये हैं। १५
द्विजपत्नी नमो सुनो हरिजो, ह्यां आये हमैं पठाये हैं॥ १६
गो चारण को बल गोप सहित, भूंखे हैं अन्न दै करौ दया। १७
सुनि आये कृष्ण दर्शन उत्सुक, सुनि गुन मन खिंचि आश्चर्य भया १८

दो०—अन्न चार विधि स्वादुमय, भरि भरि भोजन थार।
नदी सिंधु ज्यों चलि भईं, जहँ श्रीकृष्ण मुरार॥ १९

छ०—यमुना तट नव बन कुंजन में, बलसखा सहित हरि देखि परे २०
घनश्याम पीतपट बनमाला, नटबेष मोरपख शीश धरे॥
है सखा कंध पै हाथ एक से, हँसते कमल हिलाते हैं। २१
सुनि सुयश निरखि आंखोंसे जिन्हैं, ज्ञानी भवताप गवांते हैं॥२२

आत्मादर्शन को सबै छोड़, हरि सबदर्शी कहना लीना । २४
हे महाभाग तुम सब आओ, क्या करैं भले दर्शन दीना ॥ २५
जे कुशल स्वार्थदर्शी जगमें, बिन स्वारथ मुझमें प्रेम करैं । २६
मन बुद्धि प्राण स्त्री सुत धन, जिससे प्रिय तिससे हेतधरैं ॥ २७
दो०—जाहु यज्ञ थल विप्र जहँ, तुम्हैं संग मखपूर ।
गृहस्थ का यह धर्म है, पति से नारि न दूर ॥ २८
पत्न्य ऊचुः छ०—मत कहोकरो प्रभु सत्य कथन, शरणागतको नहिं त्यागै हैं।
सब कुटुम्ब तजि आई प्रभुपै, शिर से सेवा में लागै हैं ॥ २९
नहिं पिता पुत्र पति बंधु गहैं, किमि और हमें शरणै लेहैं ।
प्रभुके पदकमल शरण आई, जब तजैं आप हम कहँ जैहैं ॥ ३०
श्रीभगवानुवाच—नहिं पिता पुत्र ईर्षाकरिहैं, तुमको जग सुर भी मान करैं ३१
सुखदायक हैं नहिं अंगसंग, मनही से मुझे मिलि सुखहिधरैं ३२
श्रीशुक उ०—यह सुनि द्विजपत्नी यज्ञ गईं, ईर्षातजि पति मख पूर किया ।३३
इक पकड़ गई तन त्याग मिली, यह कर्म बन्धतन त्याग दिया ३४
गोविंद हरी सब गोपों को, भोजन कराय कर तृप्त भये । ३५
लीला नरतन धरि गोप गऊ, हरि रमण कराते खेल नये ॥ ३६
गुनि विश्वेश्वर याचना विफल, अपराध समझ द्विज घबड़ाये ३७
लखि प्रीति अलौकिक नारी की, अपने को निंदहिं दुख पाये ३८
धिक जन्म वेद विद्या व्रत कुल, बहु ज्ञान कृष्ण से विमुख रहे ३९
योगी मन मोहै हरि माया, जग गुरू स्वार्थ में मोह लहे ॥ ४०
दो०—अहो लखो नारी हृदय, जिनमें हरि का प्रेम ।
मृत्यु फाँस गृह बंध हरि, देहि मुक्ति गति क्षेम ॥४१
छ०—संस्कार नहीं गुरु पासपढ़ीं, तपमीमांसा नहिं शौचक्रिया ४२
उत्तम यश योगेश्वर ईश्वर में, दृढ़ भक्ती हिय प्रेम लिया ॥ ४३

स्वारथ में मत्त हम लोगों को, गोपों से हरि उपदेश कहा। ४४
हैं पूर्णकाम मुक्तीदायक, क्यों मांगैं प्रभुजी खेल गहा ॥ ४५
सब को तजि लक्ष्मी पद सेवै, हरि की यांचा जन मोह धरै। ४६
यजमान मंत्र मख देश काल, सुर अग्नि कृष्णमय देखि परै ॥४७
भगवान विष्णु योगेश्वर हरि, जन्मे यदुबंश नहीं जाना। ४८
अस हैं नारी हम इससे धन्य, सबने हरिपद में प्रेम ठाना ॥ ४९
भगवान कृष्ण मति अकुंठ को, है नमो भ्रमावै हरिमाया। ५०
अज्ञानी माया मोहित पै, अपराध क्षमौ कीजै दाया ॥ ५१

दो०—पाप सुमिरि निज कृष्ण को, दर्शन आश सुपास।
पछतावैं गुनि कंस भय, गये नहीं हरि पास ॥ ५२

भजन—कृष्ण की लीला अपरम्पार ॥ टेक
गोचारण करि मख समीप गे, करते गोप विचार।
भूखे भोजन मांगन लागे, दीजै कृष्ण मुरार ॥ कृष्ण०
चौबे यज्ञ करैं तहँ पठयो, कीन नहीं स्वीकार।
पुनि नारी पैं पठै मँगायो, भोजन चार प्रकार ॥ कृष्ण०
पछताये मन में सब द्विजगन, आपहिं दै धिक्कार।
बड़े भाग हरि मान किया जिन, तिय दृढ़ भक्ती धार ॥ कृष्ण०
विद्या जन्म जाति ब्रत तप मख, सब साधन बेकार।
माधवराम प्रेम से रीझैं, बिन श्रम बेड़ा पार ॥ कृष्ण०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयोविंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्विंशोऽध्यायः ।

श्लोक—चतुर्विंशे महेन्द्रस्य मखं व्यावर्त्य हेतुभिः ।
कृष्णः प्रवर्तयामास गोबर्धनमखोत्सवम् ॥

दो०—चौबिस में हरि इंद्रमख, ब्रज से दीन हटाय ।
गोबर्धन गिरि उत्सव, पूजा दी करवाय ॥

श्रीशुक उ० छं०—बलदेव सहित भगवान कृष्ण लख, गोप इन्द्र मख चहते हैं १
सर्वात्मा सबदर्शी जानैं, निज पितु से प्रश्न यों कहते हैं ॥ २
कहिये पितु किसका उत्सव है, क्या फल है को पूजा लेते । ३
कहिये हम समझा चहैं पिता, साधू न गुप्त रखि कहि देते ॥ ४
निज पर का भेद न संत सुनैं, शत्रू मित्रहु समान लेखैं । ५
भेदी रिपु सम उदास त्यागैं, शत्रू निज मृत्यू सम देखैं ॥ ६
यह क्रिया शास्त्र से संमत है, या लौकिक है वर्णन कीजै ।
जैसी जिससे जहँ से आई, यह पूजन सब बतला दीजै ॥ ७

नन्द उ० दो०—इन्द्र देव भगवान हैं, मेघ हैं तिनके रूप ।
जीवों रक्षा हेत जल, वर्षहिं अमृत सरूप ॥ ८

छं०—हम सब औरहु जन मेघपती, सुरपति का पूजन करते हैं ।
उनके जल से सब भये अन्न, उनही की भेट में धरते हैं ॥ ९
उनके प्रसाद से धर्म अर्थ, कामहु पाकर सब हर्षैं हैं ।
कृषिकारक पुरुषों से जग है, कृषि हेत मेघ जल बर्षैं हैं ॥ १०
जे परम्परागत धर्म तजैं, भय काम द्वेष से सुख न लहैं ।
इस कारण से सुरपतिपूजा, सब गोप मेल करि कीन चहैं ॥ ११

श्रीशुक उ०—सुनि नन्द आदि सब गोप वचन, केशव निज पितु से कहते हैं ।

सुरपति को पैदा करैं क्रोध, गोबर्धन पूजा चहते हैं ॥ १२

श्रीभगवानुवाच दो०—जन्मैं मरैं कर्मवश, सुखदुख भय कल्यान।
जीव पावते कर्म से, देत न कोई आन ॥ १३

छ०—कर्मों का फलदाता ईश्वर, वह भी कर्ता के कर्म लखै।
जो जौन करै वह फल देव, जगमें यह नाहक जीव झखै ॥ १४
कर्महि के बश सब जीव रहैं, असमर्थ इन्द्र क्या कर सकते।
नरका स्वभावसे किया कर्म, कोइ पलटसकै नहिं हम लखते ॥ १५
वश में स्वभाव के जीव रहैं, हरदम स्वभाव वश कर्म करैं।
सुरअसुर मनुज सबजगत लखो, हरदम स्वभावही मुख्यधरैं ॥ १६
तन ऊँच नीच लै जीव तजै, कर्महि से मित्र शत्रु सम हैं।
कर्महि गुरु ईश्वर जीव काहै, नहिं कर्म लिखा ज्यादा कमहै ॥ १७

दो०—तिससे मानै कर्म को, स्वभाव से करै कर्म।
जिससे जो बर्ताव कर, सोइ तासु सुर धर्म ॥ १८

छ०—जीविका भावतजि और सेइ, कुलटातियसम नहिं सुखपावै।
इससे हरदम जग में प्राणी, शुभ धर्म कर्म मन में लावै ॥ १९
द्विज विप्र कर्म से महि रक्षा, कर क्षत्री निज जीविका करै।
वैश्यहू कृषी रोजगार करै, सेवा सब की हिय शूद्र धरै ॥ २०
खेती रुजगार ब्याज लेना, गोपालन वैश्य जीविका चार।
सब तजि एकहि गोपालन से, हम लोगों का पूरा निरधार ॥ २१
सत रज तमसे जग बनता है, पलि नाश होय सारा इतमाम। २२
रज गुण प्रेरित बर्षते मेघ, सब अन्न होय क्या इन्द्र से काम ॥ २३

दो०—ग्राम देश गृह हैं नहीं, बन गिरिबासी तात। २४
गौ द्विज गिरि को पूजिये, इन्द्र नहीं कुछ खात ॥ २५

छ०—पकवान विविधि बनैं पुवा खीर, दधि घृत दूधहु एकत्र करो २६

ब्राह्मण अग्नीमें हवनकरैं, द्विज जिमायकै धन भेंट धरो॥ २७
चंडाल पतित तक भोजन दो, गौवों को अन्न हरा तृण दे। २८
गिरिपूजो तुम्हैं जो नीकजचैं, खा पी सजिसजि परदक्षिण लें २९
हमरी सलाह करिये सब मिलि, इसमें कल्यान लखावे है।
गौ द्विज गोबर्धन यज्ञ करो, हमरे मन में अति भावे है॥ ३०
श्रीशुक उ०—कालात्माहरि भगवान, इन्द्र का मान मिटाना चहते हैं।
नन्दादि गोप सुनि हां हां करि, सच है यह पूजन लहते हैं॥३१
दो०—जौन जौन हरि ने कहा, सब करते हैं गोप।
करि स्वस्त्ययन पुजाय गिरि, किया इन्द्रमख लोप॥३२
छ०—सब भेंट धरी गिरि पूजन की, द्विज गौ जिमाय परदक्षिण दी। ३३
सजि सजि गाड़ों पर कोइ पैदर, गावैं विप्रों की अशीषली॥३४
धरि और रूप गिरि पर चढ़िकै, कहि हम गोबर्धन भेंट गहें। ३५
सब गोप सहित करते प्रणाम, कहते हमपर गिरि दया चहें॥३६
अपमान किये से गोबर्धन, है कामरूप करिहै नुकसान।
बनमें रहते जीवका गऊ, करि प्रणाम सब चाहो कल्यान॥३७
दो०—गिरि गौ द्विज मख कृष्ण करि, गोप हिये हरषाय।
विधि उत्सव सब पूर हैं, ब्रज में पहुंचे आय॥ ३८
भजन—गोबर्धन पूजा कृष्ण कराई।
इन्द्रमान हरने की इच्छा, जँचिकै युक्ति सिखाई॥ टेक॥
आप रूप गोबर्धन बनिगे, सबसे भेंट धराई।
गौवों को तृण अन्न देय बहु, विप्रन दियो जिमाई॥ गोबर्धन०
जीम जिमाय गोप गोपी मिलि, परदक्षिणा फिराई।
माधवराम श्याम ब्रज आये, बाजै अनँद बधाई॥ गोबर्धन०
इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुर्विंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यानिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचविंशोऽध्यायः ।

श्लोक—पंचविंशेरुषाशक्रे ब्रजनाशाय बर्षति ।
उद्धृत्य गिरिमासारादरक्षद्गोकुलं प्रभुः ॥

दो०—इन्द्र कोप पच्चीस में, बोरहिं ब्रज बर्षाय ।
हरि गोबर्धन हाथ लै, गोकुल लीन बचाय ॥

श्रीशुक उ० छं०—सुरपति निजपूजानाश देख, नन्दादि गोप पर कोपकिया १
सांवर्तक मेघ नाशकारक, तिनको सुरपति ने हुक्म दिया ॥ २
बनबासी गोपों का श्रीमद, हाँ कृष्ण मनुज के कहने से ।
कर दिया देव अपराध बड़ा, सब रहित होंय सुख लहने से ॥ ३
दृढ़ कर्म नाव मखमयी त्यागि, तजि आत्म ज्ञान भव तरा चहैं । ४
अज्ञान बतूनी बाल मूढ़, पंडित मानी यह कृष्ण अहैं ॥
इस नर के सहारे मम अप्रिय, इन गोपों ने अपमान चहा । ५
अभिमानी कृष्ण ने भड़काये, मद हर पशु नाशो यही कहा ॥ ६

दो०—ऐरावत चढ़ि आइ कै, देखैंगे ब्रज आज ।
जल बर्षै वायू बहै, नाश करो सब काज ॥ ७

श्रीशुक उ०—आज्ञा लै बंधन छुटे मेघ, जलधारा ब्रज पर बर्षावैं । ८
बिजली चमकै चलै जोर वायु, ऊपर से जल पत्थर नावैं ॥ ९
थूनी समान धारा गिरती, महि डूबी ऊँच न नीच लहैं । १०
गौ व्याकुल गोपी गोप कँपैं, गोविंद शरण आ बचन कहैं ॥ ११
बछरा को छिपाये बालक सब, काँपते कृष्ण पद आये हैं । १२
हे कृष्ण कृष्ण गोकुल के नाथ, तुम बिन को हमैं बचाये हैं ॥ १३

पत्थर बर्षा से विकल देखि, श्रीकृष्ण हिये अनुमान करैं । १४
बह वायु शिलामय बर्षा हो, सुरपति ब्रज नाश हिये में धरैं ॥ १५
दो०—रच्छा मैं करिहौं सही, आत्मयोग से साधि ।
अभिमानी लोकेश का, श्रीमद हरौं उपाधि ॥ १६
छ०—सतगुनी देवता तहूं असत, यह मानभंग शांतीकारक । १७
ब्रज मेरी शरणै मालिक हूं, अपनों का दुख मैं उद्धारक ॥ १८
यों कह कर से गोबर्धन गिरि, हरि उठाय जिमि गराज बालक १६
कहते गो गोप सभी बैठो, निर्भय गोबर्धन तव पालक ॥ २०
मत डरो गिरै नहिं गिरि कर से, बर्षा वायू से बचे रहो । २१
सब घुसे कृष्ण ने समझाया, गो गोप जगह लै सुखी चहों ॥ २२
ब्रजबासी भूख प्यास भय तजि, हरि लखैं सात दिन पग न टरे २३
लखि इन्द्र योगबल श्रीकृष्ण का, संकल्प भ्रष्ट घन मना करे ॥ २४
दो०—विमल गगन रवि उदय हैं, बर्षा बात नशाय ।
गोबर्धन धर कृष्णजी, बचन कहैं हरषाय ॥ २५
छ०—गौ गोपी गोप जाव बाहर, भय तजो गई बर्षा सुख है । २६
सुनि बचन गोप आये बाहर, तिय बाल बृद्ध हरि संमुख है ॥ २७
भगवान पूर्ववत् गोबर्धन, धरते सब देखैं विस्मय लै । २८
सब गोप प्रेम से मिलैं कृष्ण को, गोपी पूजहिं आशिष दै ॥२६
रोहिणी यशोदा नन्द राम, मिलि कृष्णहि आशिष देते हैं । ३०
सुर साध्य सिद्ध गंधर्व बर्षि, पुष्पहु बहु स्तुति लेते हैं ॥ ३१
धुनि दुन्दुभि देव बजाय रहे, हैं हारे प्रेम दिखाय रहे ।
नाचतीं सुरबधू विमान पै, गंधर्व कृष्ण गुन गाय रहे ॥ ३२
दो०—गऊ गोप बलराम सँग, कृष्ण गये ब्रज माहिं ।
गाय गोपिका कृष्ण गुण, हृदय अधिक हर्षाहिं ॥ ३३

भजन—मान सुरपति का हरा गोपाल ॥ टेक
इन्द्र कोप करि बर्षा बर्षहिं, दुखित गोप गो बाल ।
कृष्ण गोबर्धन कर में धारा, चली एक नहिं चाल ॥ मान०
अंत हार कर मेघ हटाये, तब हरि सबहिं निकाल ।
माधवराम श्याम निज जनके, भये कृष्ण प्रतिपाल ॥ मान०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचविंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षड्विंशोऽध्यायः ।

श्लोक—षड्विंशे विस्मितान्गोपान्कृष्णस्याद्भुतकर्मभिः ।
नन्दो गर्गोक्तिमाश्राव्यतदैश्वर्यमवर्णयत् ॥

दो०—छब्बिस विस्मित गोप लखि, कर्म कृष्ण हिय लाय ।
नन्द गर्ग की उक्ति कहि, सबहिं दीन समझाय ॥

श्रीशुक उ० छ०—हरिके अस कर्म गोप लखिकै, नहिं बल जानै सबयों कहते १
बालकके अद्भुत कर्म ऐस, किमि ब्रजहिं बास विस्मय लहते ॥ २
गज कमल धरै त्यों कृष्ण एक, कर से गोबर्धन धारा है । ३
पूतना दूध पीकर मारी, पी प्राण कीन निस्तारा है ॥ ४
गाड़े को पद से फेंका है, जब उसके नीचे सोय रहा । ५
एकही बर्ष में हना दैत्य, वह तृणावर्त बलवान महा ॥ ६
माखन चुरावते बाँधै माँ, कर से यमलार्जुन पटक दिये । ७
बछरा चरावते गोप संग, हनि बकासुरहिं कल्यान किये ॥ ८

दो०—बछरा कृष्ण चरावते, आया दैत्य महान ।
वत्सासुर मारा हरी, गति दीनी भगवान ॥ ९

छ०—गे तालबनहिं बलराम सहित, बल कर फल तहाँ गिराये हैं।
धेनुक कुटुंबसह नाश किया, बालक सुख से फल खाये हैं ॥ १०
बल से मरवाय प्रलंबासुर, गौ गोप अग्नि से बचा लिये। ११
कालीका दमनकर दहसेकाढि, यमुनाजल निर्मल शुद्धाकिये ॥१२
ब्रजबासिन का है अचल प्रेम, हे नन्द तुम्हारे बालक में। १३
है शंका सात बर्ष का सुत, गिरि गोबर्धन संचालक में ॥ १४
नंदउवाच—सुनि गोप सभी शंकाछोड़ो, जो सुतहित गर्गाचार्य कहैं। १५
हैं तीन वर्ण श्वेतहू रक्त, पीतहू श्याम अब रूप लहैं ॥ १६

दो०—जन्मे कहुं वसुदेव गृह, वासुदेव यह नाम। १७
नाम कर्म बहु पुत्र के, ज्ञानी कहँ जस काम ॥ १८

छ०—गोकुल नन्दन कल्याण करैं, इससे सबदुख छुटजावैंगे। १९
दुष्टों से पीड़ित साधु सुजन, हनिकै खल भक्त बचावैंगे ॥ २०
बड़भागी इसमें प्रीतिकरैं, जिमि विष्णुहिं असुर न रिपुआवैं २१
नारायणसम है सुत तुम्हार, श्रीकीर्ति में नहिं अचरज लावैं २२
यह कहके गर्ग गये घर में, कृष्णहिं नारायण सम जानैं। २३
इस भांति नन्द के बचनसुनैं, सब गोप हिये थिरता आनैं ॥
सुनि लखिकै कृष्ण प्रताप गोप, तजि विस्मय नन्द सुयश गावैं।
आनन्दित हैं मनमें अपने, श्रीकृष्णचंद्र पूजन लावैं ॥ २४

दो०—सुरपति बर्षहिं जल उपल, ब्रजको लियो बचाय।
एक हाथ से गिरि धर्‍यो, गोविंद होय सहाय ॥ २५

भजन—लखि गोप कृष्ण लीला, अचरज हृदय में लावैं।
नँदराय पास जाकर, हरि के सुयश सुनावैं ॥ टेक
कहते कोई ये मोहन, मारा है पूतना को।
जब बाल पालना में, पौढ़े को दूध प्यावैं ॥ लखि०

पद से शकट गिराया, खल तृणावर्त मारा।
वत्सा बका पछाड़े, जब वत्स हरि चरावैं॥ लखि०
अजगर अघा को गति दी, काली दमन किया है।
कहँ सात बर्ष बालक, गिरिराज को उठावैं॥ लखि०
सुनि नन्द गोपगण को, समझाय गर्ग बातैं।
श्रीराम कृष्ण माधव, गुनगान नित्य गावैं॥ लखि०

———०:०:०———

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षड्विंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तविंशोऽध्यायः।

श्लोक—सप्तविंशे तदालक्ष्य कृष्णस्य प्रभवंपरम्।
वर्ण्यते सुरभीन्द्राभ्यामभिषेकमहोत्सवः॥

दो०—सत्ताइस में इन्द्र जब, देखा कृष्ण प्रभाव।
सुरभी गौ लै संग में, करि अभिषेक मनाव॥

श्रीशुक उ०छ०—गिरिधर गिरिलै ब्रजराखिलियो, सुरपति सुरभी तहँआये हैं १
मिलि अलग चरण में शीश नाय, अपराध क्षमा करवाये हैं॥ २
लखि कृष्णचंद्र का यह प्रताप, हंकार लोकपति त्याग दिया।
कर जोरि इन्द्र विनती करते, अपराध आपना मान लिया॥ ३
इन्द्र उ०—प्रभुशुद्ध सत्व तव धाम प्रभू, तपमय जहँ रजतम हैं नाहीं।
अज्ञान बन्ध गुणमय प्रवाह, मायामय संमुख नहिं जाहीं॥ ४
तुम में लोभादिक भाव नहीं, जो अज्ञानी में रहते हैं।
तिस पर भी खल को दंड देत, रक्षा स्वधर्म की चहते हैं॥ ५

दो०–पिता गुरू जगके पती, कालरूप भगवान।
इच्छा से तनु धरत हौ, हरत लोकपति मान ॥ ६
छ०–मुझसे अज्ञानी लोकपती, अभिमानी भय दिखलाते हैं।
सतमारग तजि ते दंड पाय, हम सम सीधे हो जाते हैं ॥ ७
ऐश्वर्यमत्त अपराध किया, नहिं प्रताप प्रभु का जाना है।
अपराध क्षमहु बुधि शुद्धि करो, फिर ऐसा कर्म न ठाना है ॥ ८
अवतार आपका ह्यां पर जे, उदरंभर पृथ्वीभार बने।
दुष्टों के नाश हित रक्षा को, भक्तों के जे तव पद प्रेम सने ॥ ६
भगवान पुरुष है तुम्हें नमो, भक्तनपति वासुदेव हरि हैं। १०
इच्छा सरूप प्रभु ज्ञानमूर्ति, जगबीज आत्मा जग करिहैं ॥ ११
दो०–बर्षा की ब्रज नाश हित, मानी धारे क्रोध। १२
दया करी प्रभु मान हरि, शरणागत गुरु बोध ॥ १३
श्रीशुक उ० छ०–इस भांति कृष्णके पद शिरधर, सुरपति ने विनती लीनी है
गंभीर शब्द हँसिकै मोहन, इन्द्रहिं से बातैं कीनी है ॥ १४
श्रीभगवानुवाच–हे इन्द्र भया मखभंग, दया करने को श्रीमद दूर किया।१५
ऐश्वर्यमत्त मुझको न लखैं, श्रीभ्रष्ट करौं धरि उनपै दया॥ १६
जाओ सुरपति आज्ञा करना, तजि मान इन्द्रपद में रहिये। १७
निज कुटुंब लै सुरभी विनवै, श्रीकृष्ण हमारे पति कहिये॥ १८
सुरभिरुवाच–हे कृष्ण कृष्ण हे योगेश्वर, विश्वात्मा जगत बनाते हो।
हो लोकनाथ मेरे भी नाथ, गोपालक पदवी पाते हो ॥ १६
दो०–आप हमारे इन्द्र हैं, आप हमारे देव।
साधु गऊ द्विज हेत प्रभु, लीलाहित तन लेव ॥ २०
छ०–तुम इन्द्र हमारे बिधि ने कहा, इससे ह्यां पर हम आई हैं।
महि भार उतारन को उतरे, विश्वात्मा विनती लाई हैं ॥ २१

श्रीशुक उ०—सुरभीपय से ऐरावत भी, गंगाजलसे अभिषेककरैं। २२
सुरपति नारद सुरमातृ अदिति, गोविंद कृष्ण का नाम धरैं॥ २३
देवी नाचैं गंधर्व सिद्ध, जग पापहरन यश गाते हैं। २४
सुर पुष्पबर्षि विनती करते, महि पर पय गोगण लाते हैं॥ २५
सरिता मृदुजल तरु मीठे फल, महि अन्न गिरी मणि देते हैं। २६
अभिषेक भया सब जीव तहां, दिलही से बैर न लेते हैं॥ २७

दो०—गो गोकुलपति कृष्ण का, करि अभिषेक ललाम।
करि गोविन्द नाम शुभ, इन्द्र सहित गे धाम॥ २८

भजन—कृष्णजी गोविंद पदवी पाई॥ टेक॥
करि अभिषेक गऊ ऐरावत, बहु विधि विनय सुनाई।
इन्द्रहु स्तुति करी बहुत विधि, पदमें शीश नवाई॥ कृष्णजी०
नाचहिं देववधू हर्षित ह्वै, देव पुष्प झरि लाई।
माधवराम श्याम गुण गावैं, भक्ति कृष्ण हिय लाई॥ कृष्णजी०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तविंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टाविंशोऽध्यायः।

श्लोक—अष्टाविंशे ततो नन्दानयनं वरुणालयात्।
वैकुंठदर्शनंचाथ गोपानामनुवर्ण्यते॥

दो०—अट्ठाइस में वरुण से, लाये नन्द छुड़ाय।
गोपों को वैकुंठपुर, दीना कृष्ण दिखाय॥

श्रीशुक उ० छ०—करि इकादशी में निराहार, नारायण का पूजन कीना।
रातहि में नन्द द्वादशी हित, यमुनाजल में मज्जन लीना॥ १

झट वरुणके सेवक नन्दहिं लै, आसुरीसमय लखि वरुणके पास।२
ले गये गोप डूबे गुनिकै, हे रामकृष्ण कहि भये उदास॥
पितु हरा वरुण श्रीकृष्ण सुना, गे वरुण पास जनभयहारी।३
लखि वरुण बहुत पूजा कीनी, दर्शन से हर्ष लह्यो भारी॥४
वरुण उ०—तन सफल मिला सब अर्थ हमैं, तव चरण पाय तरजाते हैं।५
परमात्म ब्रह्म भगवान नमो, माया तुममें नहिं पाते हैं॥६

दो०—बिन जाने पितु को यहां, मम सेवक लै आय।
क्षमहु नाथ अपराध मम, नाथ कहौं पड़ि पाय॥७

छ०—भगवान जगतद्रष्टा मुझ पर, करि कृपादृष्टि दाया कीजै।
गोविन्द पितावत्सल मोहन, ले जाव पिता अपना लीजै॥८
श्रीशुकउ०—ईश्वर श्रीकृष्ण प्रसन्न भये, पितु लाये सबहिं अनन्द दिया ९
बढ़ि लोकपाल से हरि प्रताप, जातीवालों से कथन किया॥१०
हरिको ईश्वर सब गोप मानि, क्या ईश्वर हमको गति देवैं।११
निज भक्तों की रुचि देखि कृष्ण, संकल्पसिद्धिहित मन लेवैं॥१२
इस जगमें जीव कर्मों से भ्रमैं, परमात्मगती निज नहिं जानैं।१३
यह समझ दयाकर कृष्णचन्द्र, निज लोक दिखाने की ठानैं॥१४
जो ब्रह्मसनातन सत्यज्ञान, गुणनाश भये मुनि लखै सही।१५
हरि ब्रह्मलोक में पहुंचाये, अक्रूर गये जहँ प्रथम तहीं॥१६

दो०—नन्दादिक वह लोक लखि, परमानन्दहिं पाय।
वेद कृष्ण स्तुति करैं, पुनि लौटे हर्षाय॥१७

भजन—हरी गोपन वैकुंठ दिखाय।
सत्य ज्ञान आनन्द रूप जहँ, पहुंचि जीव ह्वै जाय॥ टेक।
गोबर्धन यमुना तहँ नाहीं, नहिं पाये दोउ भाय।
औरहि और छटा तहँ देखी, गोप नहीं हरषाय॥ हरी०

कृष्णदरश की इच्छा कीनी, ब्रज में पहुँचे आय।
माधवराम श्याम छवि लखिकै, हरषे आनँद पाय ॥ हरी०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धेऽष्टाविंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनत्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—ऊनत्रिंशे तु रासार्थमुक्तिप्रत्युक्तयो हरेः।
गोपीभी राससंरम्भे तस्य चान्तर्धिकौतुकम् ॥ १
ब्रह्मादिजय संरूढ़दर्पकंदर्पदर्पहा।
जयति श्रीपतिर्गोपीरासमण्डलमण्डनः ॥ २

दो०—उनतिस में रासार्थ हरि, उक्त युक्ति बहु भांति।
गोपी संग रहस करैं, हरि कौतुक विख्याति ॥ १
ब्रह्मादिक से जय लही, कामदेव मद पाय।
वाके मद हर कृष्ण हरि, रास रचैं हरषाय ॥ २

श्रीशुकउ०छं०—ऋतु शरद चमेलीफूलरही, निर्मल रात्री भगवानलखी।
हरि योगमाय का आश्रय ले, मैं रमण करूं लै साथ सखी ॥ १
हो उदय चंद्र निज किरणों से, पूरब दिशि का मुख लाल करै।
प्रिय प्यारी को ज्यों दर्शन दें, हरि शोक हिये आनन्द भरै ॥ २
खिल रहे कुमुद मंडल अखंड, लक्ष्मी मुख कुंकुम सम शशिलाल।
कोमलकिरनोंसे वन शोभित, तियमनहर कल गायो गोपाल ॥ ३
बर्द्धक मनोज सुनि बंशी धुनि, गोपियों का मन श्रीकृष्ण लिया।
इक एक न जानैं आयरहीं, हिलकुंडल हरि मिलने में हिया ॥ ४

दो०–दोहन तजि आईं कोई, पय उतारि तजि भात । ५
कोइ सिंगार कोइ बाल तजि, पति भोजन तजि जात ॥ ६

छ०–कोइ बटना चंदन काजल तजि, झटपट करि गोपी जाती हैं।
उलटे पलटे गहने कपड़े, पहने चलती घबड़ाती हैं ॥ ७
पति भाय पुत्र बंधू रोकैं, गोविंद हरा मन मोह गईं । ८
भीतर से निकल कोइ नहिं पाई, दृग मूँदि भाव से कृष्णमई ॥९
प्रिय असह विरह से तपी शुद्ध, तजि पुण्य बंध श्रीकृष्ण मिली ।१०
परमात्महि पतिकी मतिसे मिलि, गुणमय तन तजि फिर देह न ली ॥११
राजोवाच–गोपी सब कृष्णहि पति मानैं, नहिं ब्रह्म नहीं भगवान गनैं।
गुण में मतिवाली गुण त्यागैं, कैसे यह है आश्चर्य मनैं ॥ १२
श्रीशुक उ० दो०–राजन् पहले कह चुके, सिद्धि लही शिशुपाल।
ये गोपी प्रिय कृष्ण की, वह मानै हरि काल ॥ १३

छ०–अव्यय निर्गुण गुण आत्मा हरि, जीवों के सुख हित देह धरैं । १४
भय काम क्रोध संबंध भक्ति, से कृष्ण प्रीति हरि रूप करैं ॥ १५
अज योगेश्वरके ईश्वर हरि, क्यों विस्मय हरि जग मुक्त किया । १६
गोपी आईं देखते कृष्ण, मृदुबानी से हरि कथन लिया ॥ १७
श्रीभगवानुवाच–स्वागत है गोपी महाभाग, वाली हैं आप क्या मान करैं १८
निशिघोररूप फिर घोर जीव, ब्रजजाहु नारि बन किमिठहरैं ॥१९
पति पुत्र मातु पितु भाय बंधु, ढूंढैं तिनको जनि कष्ट करैं । २०
बन देखि लिया शशिसे शोभित, यमुनाजल वायु लता लहरैं ॥२१

दो०–जाहु ब्रजहि मत देर हो, प्रियपति सेवहु जाय ।
बालक बछड़ा हों दुखी, प्यावहु दूध दुहाय ॥ २२

छ०–मेरे सनेह से आईं जो, अच्छा है भल आगमन किया ।

मुझमें लगि जीव सुखी रहते, जो रखते मुझमें शुद्धहिया ॥ २३
पतिसेवा तियका परमधर्म, सुत कुटुंब का पालन करना ।
दुःशील भाग से हीन बृद्ध, रोगी जड़ निर्धन हरि धरना ॥ २४
बड़पाप किया नहिं शुद्धभया पति, उसका त्याग जरूर करै ।२५
लघुसुख भय ज्यादा अयशनर्क, मिलजो तिय परपति संगधरै २६
दर्शन औ ध्यान श्रवण कीर्तन, से हम प्रसन्न हो जाते हैं ।
नहिं निकट रहे से प्रसन्नता, गृह जावो सीख सिखाते हैं ॥ २७
श्रीशुक उ०दो०—अप्रिय सुनि गोविंद से, गोपी भईं निराश ।
चिंता तन व्यापी कठिन, सुखकी बीती आश ॥ २८

छ०—शोकित नीचे मुख स्वास लेहिं, सूखे हैं होठ पद महि लिखतीं ।
आँसू से भींज गये कपड़े, दुखसे चुप साधि हिये झखतीं ॥ २९
प्रिय हो अस अप्रिय बचन कहैं, हरि से सबही कामना गईं ।
दृग मींजि दुःखसे कुछ क्रोधित, गद्गद बानी बोलती भईं ॥३०
गोप्य ऊचुः—अस कठिनबचन मत कहो कृष्ण, सब तजि पद शरणहिं आई हैं ।
ज्यों आदिपुरुष निजभक्त भजें, त्यों भजिये आश लगाई हैं ॥ ३१
पति पुत्र कुटुम सेवै नारी, यह धर्म आप बतलाते हैं ।
यह धर्म आपही में लागै, सबकी आत्मा श्रुति गाते हैं ॥ ३२
दो०—हरि पद प्रीति कुशल करैं, पति सुत से क्या होय ।
हो प्रसन्न काटो नहीं, आशा तुम में जोय ॥ ३३
छ०—प्रभु चित तो तुमने हरि लीना, गृह कामकरैं जो बेबशहाथ ।
पद भी न पैर भर चलते हैं, कैसे जावैं क्या करैं नाथ ॥ ३४
अधरामृत से सींचिये हमैं, लखि हास दृष्टि उठि विरह अनल ।
नहिं विरहअग्नि से जरि तन तजि, धरि ध्यान मिलैं नहिं लागै पल ३५

लक्ष्मी पदकमल तुम्हार चहैं, बनबासी जन तव प्यारे हैं।
तन से तव वियोग नहिं सहिहैं, नहिं आप हृदय से न्यारे हैं ॥३६

हिय में थल लक्ष्मी लहि पद चहि, तुलसी की इरषा सदा करैं।
जग जिसे चहै वह तुम्हैं चहै, तैसे हम पदरज शरण परैं ॥ ३७

दो०—दुख हर कृष्ण प्रसन्न हो, चरणकमल ली आस।
हास दृष्टि से काम तपि, देह दास्य छुट त्रास ॥ ३८

छ०—मुख अलक मुकुट कुंडल शोभा, अधरामृत हास मधुर चितई।
भयहरण दंडभुज लखि प्यारे, हिय लखिकै दासी नाथ भई ॥३९

नूपुर धुनि सुनिकै कौन नारि, नहिं मोहै इस त्रिलोक माहीं।
शोभा त्रिलोकमयरूप निरखि, गौ पक्षी तरु मृग पुलकाहीं ॥ ४०

ज्यों आदिपुरुष सुरपुर रक्षक, त्यों ब्रजके हरि दुखहारी हैं।
शिर अंग में धरिये करपंकज, हम दासी पद बलिहारी हैं ॥ ४१

श्रीशुक उ०—सुनि सांच विकलता गोपिन की, योगेश्वर के ईश्वर हरि हैं।
हँसि आत्माराम दयाधारी, गोपी सँग कृष्ण रमण करिहैं ॥ ४२

दो०—गोपी संग उदार कृति, प्रसन्न दृग मुख गात।
हास दंतछवि चंद्र सम, मंद मंद मुसकात ॥ ४३

छ०—गाते गावैं सँग गोपिन के, बैजंतिमाल हिय में हलरै। ४४
यमुनातट कोमल बालू है, चल त्रिविध वायु मोहन विहरै ॥ ४५

भुजपसार हिलि मिलि नृत्य करनि, अँगपरशनि बोलनि चित्त हरैं
हँसि हेरनि गोपी मोहन की, रतिपति जगाय हरि रास करैं ॥ ४६

गुनि काम विजय निज हरिसे लड़ि, गोपीं के मान पैदा कीना।
मद मथन मान गोपी का हरैं, ऐसी हियमें युक्ती लीना ॥ ४७

दो०—देखि मान सौभाग मद, शांति हेत भगवान।
प्रसाद शांती हेत हरि, झट भे अंतरध्यान ॥ ४८

भजन—करैं हरि गोपिन के सँग रास ॥ टेक ॥
काम विजय त्रैलोक पाय कै, आया मोहन पास ।
बातचीत करि युद्ध की ठहरी, हरि यह कीन सुपास ॥ करैं०
रासस्थल में गोपी आईं, करि विहार विश्वास ।
कटुक बचन कहि लीन परीक्षा, बहुत दिखायो त्रास ॥ करैं०
सच्चा प्रेम निरखि गोपिन का, कीना रास विलास ।
मान निहारि छिपे झट मोहन, किया खेल जनु हास ॥ करैं०
प्रेम प्रीति के बश केशव हैं, मद से होत निरास ।
माधवराम श्याम हिय धरिकै, रहै पद्मपद दास ॥ करैं०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—त्रिंशे विरहसन्तप्तगोपीभिः कृष्णमार्गणम् ।
उन्मत्तवन्नियतं भ्रमन्तीभिर्बनेबने ॥

दो०—विरह विकल गोपी सबै, ढूंढहिं कृष्णमुरार ।
बनबन घूमैं मत्त ह्वै, कहैं तीस निरधार ॥

श्रीशुकउ०छ०—छिपगयेकृष्ण तबसबगोपी, गजविनहथिनी त्योंविकलफिरैं १
गति हास मनोहर दृग बोलनि, से भ्रमित चित्त लीलाहु करैं २
गति हास दृष्टि बोलनि सुमिरैं, कृष्ण ही रूप निजको जानैं ।
हमहीं हैं कृष्ण आपस में कहैं, हरि विहार से संभ्रम ठानैं ॥ ३
सब मिलि ऊँचे स्वर गान करैं, ढूंढैं बन बन हरि प्यारे को ।
सब में अकाशसम व्याप्त लखैं, तरु से पूंछैं दृगतारे को ॥ ४

पाकर पीपर बट आम कहो, हँसिकै चितलै हरि कहाँ गये। ५
पुन्नाग नाग चम्पक अशोक, मदहरन हरी कित जात भये॥ ६
दो०—हरिपद प्यारी हे तुलसि, तुम देखे गोपाल। ७
जुही चमेली मालती, तुम्हैं छुअत गयो हाल॥ ८
छ०—कटहर प्रियाल अरु कोबिदार, हे कदंब जामुन नीम बकुल।
पर उपकारी तट में बसते, कहो कृष्ण कहाँ हम फिरैं विकल॥ ९
पृथ्वी हरिपद छुइ रोम खड़े, यह तृण हमको दिखलाते हैं।
या बराह के तन परसि सुमिरि, रोमांच खड़े हो जाते हैं॥ १०
हे मृगी बताओ प्रियासहित, अँग से अनन्द देनेवाला।
कांता के अंग चंदन सुगंध, से महक दे रहा नँदलाला॥ ११
लैं कमल प्रिया के कंध हाथ, तुलसीसुगंध से मत्त भ्रमर।
तरु झुकि प्रणाम करि टेरत हैं, हरि गया यहाँ से निजपदधर॥ १२
दो०—स्पर्श किया इन लता को, धारे पुलक शरीर। १३
ढूंढि पूँछि सब गोपिका, लीला करहिं अधीर॥ १४
छ०—उनकी इच्छा से सब लीला, झट माया कर दिखलाती है।
कोइ बनै पूतना हरि मारैं, कोइ शकटा पद से गिराती है॥ १५
इक तृणावर्त ह्वै कृष्ण हरै, खेलती बजाती नूपुर को। १६
बनि राम कृष्ण बक वत्स हनैं, लखि दीन पठाते सुरपुर को॥ १७
गौवों को बुलावैं कृष्ण बनी, बंशी बजाय कै नृत्य करैं। १८
कोइ करै प्रशंसा हमहैं कृष्ण, गति लखौ सखा पर हाथधरैं॥ १९
मत डरो वायु बर्षा से सब, गिरि ब्याज से वस्त्र उठाती है। २०
मैं दुष्टदमन हरि प्रगट भया, यों कह सबको समझाती है॥ २१
दो०—एक कहै मूंदो नयन, जारैं अग्नि दवारि।
हम पीकर मंगल करैं, यह विधि लीला धारि॥ २२

छं०—इक कृष्ण बांधती ऊखल में, डरती सी आंखैं बंद करै। २३
पूंछै बृक्षों से लीला करि, पद परमात्मा के देखि परै॥ २४
ये नन्दसूनु के चरण चिह्न, अंकुश ध्वज बज्र लखाते हैं। २५
देखती चिह्न चलती आगे, यों बृन्द बृन्द बतलाते हैं॥ २६
आगे उन पद में मिले हैं पद, प्यारी के लख बतलाती हैं।
हे सखी पैर ये किसके हैं, करिणी करि सँग ज्यों जाती हैं॥ २७
इसने हरि ईश्वर आराधे, तजि हमैं इसे एकांत लिये। २८
हम बड़भागी पदरज पावैं, बिधिरमा शीश धरि पाप छये॥ २९

दो०—एक कहै ये दुखद पद, जाहि लिये गोपाल।
अधरामृत पीवै अलग, हम सब करी बिहाल॥ ३०

छं०—तृणमेंपदचिह्न न देखिपड़े, प्रियथकीजानि गोदीमें लिया ३१
हैं अधिक दबे पद लिये गोद, ह्यां पुष्प के हेत उतार दिया॥
ह्यां फूल चुने प्यारी के हेत, पद साथहिं में दिखलाते हैं। ३२
ह्यां बाल सवांरे पुष्प बांधि, यह चूर दृष्टि में आते हैं॥ ३३
ह्वै आत्माराम रमै तेहि लै, कामी की दीनता दिखलाई।
नारी दुशत्मपन प्रगट किया, यों गोपी लखि बनमें आई॥ ३४
सब गोपी फिरतीं जिसे कृष्ण, एकांत आपने संग लिये।
अभिमान काम की विजय देखि, त्यागै में उसके चित्त दिये ३५

दो०—सब गोपिन में श्रेष्ठ वह, मानै अपने काहिं।
सब गोपी प्रिय त्यागि कै, हमैं लिये बन जाहिं॥ ३६

छं०—करि गुमान केशव से कहती, हम थकी नहीं चल सकती हैं।
ले चलो तुम्हारी मौज जहां, ह्यां बैठी पैर न रखती हैं॥ ३७
हरि कहैं आप कंधे चढ़ लो, झुकते ही अंतरध्यान भये।
निज प्रीतम अपने पास न लखि, प्यारी के होश सब भूल गये ३८

हे रमण नाथ प्रिय कहां गये, दासी को दर्श शरण दीजै। ३९
आगईं गोपियां हरि ढूंढत, लखि प्रियवियोग में तिय भीजैं॥४०
माधव से मान किया त्यागी, सब गोपी विस्मय लावैं हैं। ४१
आगे बन तहां प्रकाश नहीं, अँधियाला लखि फिरि आवैं हैं ४२
दो०—हरि मन चेष्टा आत्म ह्वै, गावैं गृह बिसराय। ४३
यमुनातट हरिभाव करि, आवैं आश लगाय॥ ४४

भजन ला०—विकल वन में ब्रजकी वाला, दरश हमैं दीजै नँदलाला॥ टेक॥
विरह दुख से गोपी मन में, न पावैं चैन दुखित तन में।
विकल ह्वै सोचैं छन छन में, मिलैं हरि केहि विधि कुंजन में॥
दो०—बाला व्याकुल हैं बहुत, तुमहौ पालक सृष्टि।
वेगि दरश दीजै हमैं, करौ कृपामृत बृष्टि॥
आप हो भक्तन प्रतिपाला॥ दरश०
जन्म ब्रजमें जब से लीना, काज सुर मुनि साधन कीना।
पिता माता को सुख दीना, गोपियां तुम्हरे आधीना॥
दो०—धरि गोबर्धन राखि लीं, अब कस करते देर।
मोहन मोहीं रूप लखि, सुनौ हमारी टेर॥
आप हैं ईश्वर हम बाला॥ दरश०
चरणरज ढूंढैं शिव ध्यानी, रहैं लिपटे पद में ज्ञानी।
आप हैं जन के बरदानी, आज कस करते मनमानी॥
दो०—मनमानी कीने प्रभू, विनय सुनौ हरि कान।
सपने नाम न लेय कोइ, दीजै इस पर ध्यान॥
न डालो विरद माहिं ताला॥ दरश०
हरी सबके दुखहारी हो, कर्म करके अविकारी हो।
डूबते भवउद्धारी हो, सदा निर्गुण गुणकारी हो॥

दो०—कथा पापहरि देत सुख, भव से करती पार।
सुनैं तेइ जन धन्य हैं, बिना सुने नित हार॥

छुड़ाते माधव भ्रमजाला॥ दरश०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकत्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—एकत्रिंशे निराशास्ताः पुनः पुलिनमागताः।
कृष्णमेवानुगायन्त्यः प्रार्थयन्ते तदागमम्॥

दो०—गोपी सबै निराश ह्वै, यमुना तट पै आय।
गावैं कृष्ण विनय करैं, रहा शोक हिय छाय॥

गोप्यऊचुः छ०—ब्रजमें तव जन्म अधिक शोभित, ह्यां सदा सुलक्ष्मी बास करैं।
तुम्हरी हैं प्यारे दर्श देहु, ढूढ़ैं तुमही में प्राण धरैं॥ १
ऋतु शरदकाल के कमल सदृश, मुख नैन लखे मन हर जाहीं।
हम हैं दासी बिन मोल नाथ, क्या शस्त्र से बध ये बध नाहीं॥२
विषजल राक्षस बर्षा अग्नी, बृषमयसुत से प्रभु राखि लिया।
जग भय से बचावनहार आप, क्यों अब हमको ह्यां त्याग दिया॥३
नहिं आप यशोदा के सुत हो, जग अखिल जीव के हियमें बसे।
बिधि से प्रार्थित जग रक्षाहित, उत्तमकुल प्रगटे ब्रज बिलसे॥४

दो०—बृष्णि श्रेष्ठ देते अभय, चरणकमल जे लीन।
धरहु कमलकर शीश पर, भवभयहर हम दीन॥ ५

छ०—ब्रजजन की पीर हे वीर हरौ, निजजन मदनाशक मंदहास।

हम दासी तेरी भजौ सखे, मुखकमल दिखाके दो सुपास ॥ ६
पद प्रणाम करते हरौ पाप, लक्ष्मी निवासपद गौवन संग।
पदकमल सर्प के शीशधरा, धरि स्तन पै दलौ कामरंग ॥ ७
मृदुबानी मीठी बातों से, बुध मनहारी हे कमलनैन।
दासी मोहित दो अधरामृत, हमको पियाय प्रभु दीजै चैन ॥ ८
तापित को जीवन रूप कथा, सब पापहरनि कवि गाते हैं।
श्रीदायक सुनिकै मंगल दे, गा बड़भागी बन जाते हैं ॥ ९

दो०—प्रेमदृष्टि प्रियहास तव, मंगल ध्यान विहार।
गुप्त वार्ता हृदयहर, मनहिं क्षोभदातार ॥ १०

छ०—धरि चरणकमल ब्रजभूमी पर, गोचारण को हरि चलते हैं।
कहिं गड़ि न जांय कांटा कंकड़, मन गोपिनके कँपि हिलते हैं ११
मुखकमल पै अलकैं झुकी हरे, जब साम समय ब्रज आते हो।
गोरज छाई अलकैं पलकैं, लखि कामदेव उपजाते हो ॥ १२
जन कामदायि लक्ष्मी पूजैं, महिभूषन आपदि ध्येय चरण।
धरि अंगों पै हरि लेहु ब्याधि, हे रमण चरण कल्याणकरण ॥ १३
रतिवर्धक शोकविनाशक शुभ, बंशीसे चुंबित अधरामृत।
सब राग भुलावन मनुजों का, हे वीर दीजिये करिये हित ॥ १४

दो०—बन विचरो बिन मुख लखे, पलक कल्प सम जात।
पलक बरौनी रचैं बिधि, हम कहँ मूढ़ लखात ॥ १५

छ०—पति सुत कुटुंब भाई बंधू, सब तजि प्रभु तुम्हरे ढिग आईं।
सुनिगान मोहतीं नारि सबै, निशिमें तुम त्यागो दुख पाईं ॥ १६
एकांत बात हँसमुख देखनि, बक्षस्थल दीर्घ देख मोहैं।
अति चाह हृदय में मोहित मन, जो नहिं मोहै अस जगको है १७

ब्रजबासिन के दुख हरत नाथ, सब जग का मंगल करते हो।
प्रभुही में चाह आत्म हरदम, क्यों औषध आप न धरते हो॥ १८

दो०—चरणकमल स्तनन पै, लावत सदा डेराहिं।
बन बिचरौ कंटक गड़ैं, बुद्धि भ्रमित बिलखाहिं॥ १९

भजन—कठोरपना देखैं कृष्ण तुम्हार॥ टेक॥
अश्रुधार नैनों से डार कै, करैं तुम्हैं सुकुमार।
छली बली से एक चली नहिं, अबलों पर यह मार॥ कठोर०
गत विश्वास आश नहिं छूटै, लख लीना रंगकार।
माधवराम मिलो हरि अबहूँ, होय तुम्हार न हार॥ कठोर०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकत्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वात्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—द्वात्रिंशे विरहालापबिक्लिन्नहृदयो हरिः।
तत्राविर्भूय गोपीस्ताः सान्त्वयायास मानयन्॥

दो०—विरहगती सुनि क्षुभित हिय, हरि चट प्रगटे आय।
बत्तिस में बहु मान दै, गोपी दीं समुझाय॥

श्रीशुक उ०छं०—इह भांति विलाप रुदन करतीं, हरि दर्शन आश लगाये हैं १
मन्मथ[1] के मन्मथ कृष्णचन्द्र, हँसि पीताम्बरधर आये हैं॥ २
आते लखि गोपी दृग[2] प्रसन्न, सब उठीं प्राण तन में आवैं। ३
कोइ कमलहाथ हरि का पकड़े, कोइ गले में गलबाहीं नावैं॥ ४
चर्वित तांबूल कोई लेवै, कोई पद स्तन माहिं धरै। ५

[1] कामदेव [2] नेत्र

धरि होठ दांत से दृग तिरछे, करि भौंह टेढि रिस प्रेम भरै ॥ ६
मुखकमल पान करि दृगसे और, नहिं तृप्त संत हरिपद जैसे । ७
कोइ नेत्रद्वार से हिये धारि, योगी प्रसन्न पुलकित तैसे ॥ ८
दो०—हरि दर्शन से हर्ष लहि, तजा बिरह संताप ।
साक्षी लहि ज्ञानी सुजन, मुक्ति होय तजि पाप ॥ ६
छ०—छुटगया शोक गोपी संगमें, ज्यों पुरुष शक्तियुत हरि सोहैं । १०
मंदार कुंद खिल भ्रमर भ्रमैं, यमुना तट राजैं मन मोहैं ॥ ११
निशि शरद चंद्र की किरणों से, तम दूर उजेला छाय रहा ।
यमुना की लहरों से कोमल, बालू से मन लहराय रहा ॥ १२
हरि दर्शन से हिय रोग गया, प्रभु पाय श्रुती सिद्धांत लहैं ।
कुंकुम से चिह्नित स्ववस्त्र से, आसन रचि प्रिय को देन चहैं ॥ १३
तिस पर भगवान ईश बैठे, योगी हिय में आसन धारे ।
गोपिन की सभा में हरि सोहैं, तन शोभा से जन उद्धारे ॥ १४
दो०—काम प्रदीपक कृष्ण को, सब विधि करि सतकार ।
हँसि हेरैं पदहू परसि, बोलीं कुछ रिस धार ॥ १५
गोप्यऊचुः छ०—भजनेवाले को एक भजैं, नहिं भजै एक तिनहूं को भजैं
भजते औ न भजते जौन अहैं, इन दोनों को इक पुरुष तजैं ॥
सब में तुम कौन अहो प्यारे, कहिये यह प्रश्न हमारा है ।
करते हैं धर्म उपदेश आप, दीजै उत्तर निस्तारा है ॥ १६
श्रीभगवानुवाच—जो भजैं परस्पर हे गोपी, वह दोनों स्वारथ[१]वाले हैं
ह्वाँ धर्म मित्रता कुछ नाहीं, इक मतलब दिलमें पाले हैं ॥ १७
नहिं भजैं उन्हें जे भजते हैं, है दयालु माता पितु जैसे ।
निर्बाध धर्म है सुहृद भाव, हे गोपीजन समझौ ऐसे ॥ १८

[१] पशुपालक

दो०—भजते को नहिं भजत हैं, बिना भजे हैं कौन।
आत्मारामहु[1] पूर्णमन[2], मूढ़[3] गुरुद्रुह[4] जौन॥ १६

छ०—भजते जीवों को यों न भजें, उनकी वृत्ती मुझमें लागै।
निर्धन धन पाय कै नाशहोय, दिनरात चाह धनहीमांगै॥२०
तजि लोक वेद सब ही स्वारथ, मुझको भजतीं दिनराति हिये।
मैं गुप्तरूप से तुम्हें भजौं, मति इरषाबश कटु कहौ प्रिये॥ २१
निःछल तुम मेरा भजन करौ, सब तजि हमहीं को हिये धरे।
देवता उमर से बदला दें, तबहूँ नहिं सपने पूर परे॥

दो०—बेड़ी गृह की कठिन है, तुम सब डारी तोर।
नहिं बदला हम दे सकैं, धारे शीश निहोर॥ २२

भजन—मिले सब गोपी नन्दकुमार॥ टेक॥
त्यागि दिया अभिमान देखिकै, मद को दिया निकार।
विकल दीन ह्वै रुदन कीन जब, हरि हिय दाया धार॥ मिले०
प्रगट भये प्रसन्न सब गोपी, दीने आसन डार।
बैठे प्रश्न अनेकन कीने, प्रभु कीना निरधार॥ मिले०
प्यारे समझ लेहु हिय अपने, लोक वेद में सार।
माधवराम प्रेम से मिलिहैं, तब होगे भवपार॥ मिले०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्वात्रिंशोऽध्यायः

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—त्रयस्त्रिंशे ततो गोपी मण्डलीमध्यगोहरिः।
प्रियास्ता रमयामास ह्रदनीबनकेलिभिः॥

[1] ज्ञानी [2] संतोषी [3] मूर्ख [4] गुरुद्रोही

दो०—गोपी मंडल मध्य में, तेंतिस माहिं विराज ।
जल बन केली करि तिन्हैं, तृप्त कीन ब्रजराज ॥
श्रीशुकउ०छ०—इसभांति कृष्णकीमृदुबातैं, सुनिगोपीविरहताप त्यागैं
स्पर्श चरण पद अंग किये, लहि हर्ष हिये में अनुरागैं ॥ १
हरि महारास आरंभ किया, कर गहि कै गोपीगण मिलिकै । २
योगेश्वर कृष्ण मध्य सोहैं, दो दो गोपी मधि इक हिलिकै ॥
गोपी मंडल से शोभित हरि, पासहि जानै गल बांह दिये । ३
आये अकाश सुर विमान बहु, तिय सहित चाह है अधिक हिये ॥४
दुन्दुभी बजै हो पुष्पबृष्टि, गंधर्व नारियुत यश गावैं । ५
नूपुर कंकण किंकिणि झनकै, गोपिन के शब्द गगन छावैं ॥६
दो०—सुवर्ण मणि में श्याम मणि, त्यों सोहैं घनश्याम । ७
चरण धरनि करकी मुरनि, हँसि भ्रू फिरनि ललाम ॥
छ०—कटिकी लचकन पटकी फहरन, कुंडलकी हिलन मुखकी मोरनि ।
अलकन बिथुरन नीवी की छुटन, बिजली जिमि घन महँ झकझोरनि ॥
मुखपद्म स्वेद कन झलक रहे, कमलों पै अम्बुकन छाजैं हैं ।
गावैं नाचैं गोपी मोहन, हरि महारास में राजैं हैं ॥ ८
ऊंचे स्वर गावैं विविधि राग, मोहन अँग पर्शन प्यारा है ।
छा गया गगन में गान शब्द, तन अनुसंधान (सम्हार) विसारा है ॥ ९
कोइ मुकुन्द स्वर में स्वर मिलाय, ऊँचे लय स्वर धुनि से गावैं ।
कोइ करै प्रशंसा वाह वाह, कोइ मान देय कर हर्षावैं ॥ १०
भजन—नृत्यत (नाचहिं) रास में गोपाल ।
इक हरी द्वै गोपियां, कहुँ युगुल हरि इक बाल ॥ टेक ॥
प्रिया प्रीतम मिलि सखी प्रिय, प्रिया सखि बनिमाल ।
तड़ित द्युति अलियाँ प्रिया, घनश्याम श्याम तमाल ॥ नृत्यत०

झुकनि झिझकनि मुख मुरनि, पद थिरकि दें मुरि ताल।
ताथेई-ता ताथेई-ता थेइ-ताथेइ चाल ॥ नृत्यत०
सारे गमपध धपमगरेसा, निसा सानि रसाल।
लेत स्वर सब मूर्छना सुनि, देवबधू विहाल ॥ नृत्यत०
शिव सुरेश मुनीश अज, अद्भुत दशा ततकाल।
तजि सकलभ्रम मगन माधव, निरखि छवि नँदलाल ॥ नृत्यत०

दो०—थकीं रास में गोपिका, मोहन निकट विराज।
कंधे कर धरि श्रम तजैं, शिथिल अंग के साज ॥ ११

छं०—इक कृष्ण कमल कर की सुगंध, चंदनयुत सूंघैं चूमैं है। १२
कोइ श्रमित कृष्णमुख मुखमें लाय, बीड़ी लै खुशह्वै घूमैं है ॥१३
नूपुर बजाय गावैं नाचैं, कोइ कमलहाथ स्तन पै धरैं। १४
एकांत कांत हरि पती पाय, गलबाहीं दै गावैं विहरैं ॥ १५
कानन में कुंडल कर्णफूल, की चमक कपोलों पर आवै।
कंकण नूपुर धुनि से बाजैं, धुनि मंद मंद चहुँ दिशि छावै ॥
बिथुरी हैं अलक हैं चपल पलक, गोपी मोहन सँग नाच रहीं।
खिल रहे फूल यमुना के कूल, गुंजरहिं भ्रमर तहँ सोह सही ॥ १६

दो०—भ्रमण हास दृग कर परशि, करते रास विलास।
बालक जिमि निज छाँह सँग, नाचहिं रमानिवास ॥१७

छं०—हरि अंग संग से तिया मत्त, खुल अलकैं वस्त्र सँभाल नहीं।
नहिं आभूषणकी खबर उन्हैं, छुट गिरैं ज़राभी ख्याल नहीं ॥१८
सुरतिया मोहतीं रास देखि, गण सहित चंद्र विस्मय करते ।१६
जितनी गोपी उतने मोहन, करि रूप रास मोहन करते ॥
हैं आत्माराम करैं लीला, भगवान पूर बरदान किया। २०

करि नृत्य थकीं मुँह स्वेद छाय, हरि अपने करसे पोंछदिया ॥ २१
कुंडल सुवर्ण अलकों पै चमक, गोपी मृदु हँसि मुखकमल लखैं।
दै मान कृष्णसँग गावै हैं, करकमल पर्शि सुख लहि निरखैं ॥ २२

दो०—मोहन गोपो संग लै, करैं रासश्रम दूर।
करि करिणी लै नीर ज्यों, घुसे सेतु करि चूर ॥ २३

छ०—जलविहार करते हरि गोपी, हँसि नोर परस्पर डारैं हैं।
चढ़ि विमान देवी स्तुति करि, मन में अति आनँद धारैं हैं ॥ २४
यमुनातट फूले कुंजन में, गुंजरहिं भ्रमर करि के शृंगार।
करि करिणी सँग लै विचरिरहे, गोपी सँग मोहन करैं विहार ॥ २५
शशि किरन से शोभित रात्री में, करते लीला प्रभु सत्यकाम।
व्रतअखंड धारे रास किया, ऋतु शरदमें क्रीड़ा आत्माराम ॥ २६
राजोवाच—संस्थापन धर्म अधर्म नाश, हित कृष्ण ईश अवतार लिया। २७
कर्ता वक्ता धर्महु रक्षक, परतियपर्शन यह कर्म किया ॥ २८

दो०—आप्त काम यदुपति अहैं, निंदित कीना काम।
मतलब क्या समझे नहीं, समझावो गुणधाम ॥ २९

श्रीशुक उ० छ०—ईश्वर में धर्म व्यतिक्रम भी, कहिं साहसभी लख आता है।
तेजस्वी अग्नितुल्य होते, तिनमें न दोष कुछ आता है ॥ ३०
असमर्थ न भूलि करैं मनसे, हर जहर पिया पी और मरै। ३१
आचरण कहीं हरदम शिक्षा, ईश्वर की बुद्धि मानहि न धरै ३२
हंकाररहित ईश्वर ज्ञानी, करि धर्म न शुभफल चहते हैं।
यदि कोई उलटा कर्म होय, नहिं अधर्मफल वे लहते हैं ॥ ३३
नर तिर्यक सुर जग अखिल जीव, के मालिक कृष्णचंद्र स्वामी।
उनको क्या कुशल अकुशलकर्म, करतबसे हैं नामी धामी ॥३४

दो०—बालरूप धारे हरी, तहाँ न तनक विकार।
अबहूँ तो लखि लेहु नृप, बालक शुद्धाचार॥

छं०—जिनकी पदरज योगी लहिकै, सब कर्मबंध तज देते हैं।
स्वेच्छा विचरैं इच्छातन धरि, हरि कैसे बन्धन लेते हैं॥ ३५
गोपी उनके पति जीव, सभी में अंतरचारी बनवारी।
उसकी लीला में विस्मय क्यों, अध्यत्त भक्तहित तन धारी॥३६
जीवों में दया करि देह धरे, लीला करते मुनि तत्पर हैं। ३७
हरिमाया मोहित गोप सबै, सब गोपी मानैं निज घर हैं॥ ३८
निशि गई है ब्रह्ममुहूर्त भया, हरि वासुदेव ने बिदा किया।
इच्छानहिं गोपिनकी हरिप्रिय, सब गईं अपन स्थान लिया॥३९

दो०—गोपी मोहन रास यह, कहैं सुनैं जे कान।
भक्ति पाय भव रोग छुटि, कृपा करैं भगवान॥ ४०

भजन—रास मनमोहन का यह गावैं॥ टेक॥
शरद चंद्र अति विमल उदै ह्वै, किरण छटा फैलावै।
कृष्णचंद्र बंशी कर लय से, मधुरी तान बजावैं॥ रास०
सुनि धुनि चित्त हरे गोपिन के, इत उत से सब आवैं।
कहि उपदेश परीक्षा सब की, सबै भाँति अजमावैं॥ रास०
कहि निश्चय बरदान धूर हित, सँग में रास करावैं।
लखि अभिमान भये अंतरहित, गोपी ढूंढि न पावैं॥ रास०
मिलि कै महारास करि लीला, बहु आनन्द बढ़ावैं।
माधवराम श्याम गुण महिमा, गाय गाय हर्षावैं॥ रास०

—:❁:—

इतिश्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—चतुस्त्रिंशेऽहिना ग्रस्तं नन्दं हरिरमूमुचत्।
विद्याध्रं चाङ्गिरःशापाच्छङ्खचूडं तथाऽवधीत्॥

दो०—चौंतिस में अहि से ग्रसित, नन्दहिं कृष्ण छुड़ाय।
शंखचूड़ विद्याधरहु, शापमुक्त ह्वै जाय॥

श्रीशुक उवाच छं०—गोपालहु देवयात्रा में, सब गये अंबिका कानन[1] हैं। १
शिव पूजे सरस्वती नहाय, देवी पूजैं हर्षित मन हैं॥ २
गौ वस्त्र स्वर्ण दै विप्रों को, भोजन दै हरि प्रसन्न करते। ३
नन्दहु सुनन्द आदिक जे गोप, सब जलही पीकर ब्रतधरते॥ ४
थी रात सर्प आया भूँखा, नन्दहि का पैर पकड़ लीना। ५
चिल्लाये कृष्ण कृष्ण राखो, यह सर्प ग्रसै हम आधीना॥ ६
सब गोप उठे उल्मुक लै लै, विस्मित ह्वै सर्पहि मारै हैं। ७
पिटता, नहिं पैर सर्प छोड़ै, भगवान कमलपद धारै हैं॥ ८

दो०—हरिपद परसत त्यागि तन, विद्याधर तनधारि।
पाप नाश ताके किये, मोहन कृष्ण मुरारि॥ ९

छं०—धरि स्वर्णमाल दंडवत करै, तन दीपित हरि पूँछैं उससे। १०
यह दीप्त रूपको अहैं आप, तन निंदित पाया है किससे॥ ११
सर्प उवाच—विद्याधर नाम सुदर्शन है, हम विमान चढ़ि कै विचरि रहे। १२
ऋषि अंगिरसहु कुरूप लखिकै, हँस दिये शापलै देह लहे॥ १३
वह शाप मुनीकी दाया है, पद परसे पाप नशाये हैं। १४
पद परसे पाप छुटे मेरे, जन भयहारक प्रभु पाये हैं॥ १५

[1] वन

हे महापुरुष मैं शरण अहौं, लोकेश्वर हम पर दया करो। १६
दर्शन से ब्रह्म दंड छूटा, नामहि से सबके पाप हरो॥ १७

दो०—पद परशे क्या नहिं मिलै, करि परिक्रमा प्रणाम।
आज्ञा लै निज पुर गयो, नन्द लह्यो आराम॥ १८

छं०—यह कृष्णचन्द्र का विभव देखि, सब गोप हिये विस्मय पावैं।
यात्रा समाप्त कर नन्द सहित, आनन्द पाय ब्रज में आवैं॥१६
बलराम कृष्ण सँग गोपी लै, निशिमें बनमाहिं विचरते हैं। २०
शुभवसन माल भूषण धारे, करि हास मोद मन भरते हैं॥ २१
तारागण चन्द्र छटा छाई, बह वायु कुंज बन फूले हैं। २२
गाते मंगल सातों स्वर से, हरि भक्तों पर अनुकूले हैं॥ २३
गोपी सुनि गीत मगन मनमें, छुट अलक बसन संभार नहीं। २४
सेवक कुबेर का शंखचूड़, आया सुनि गान दुष्ट तबहीं॥ २५

दो०—देखत हैं बलराम हरि, गोपी लीन उठाय।
शंका तजि उत्तर चलै, तिय हिय में घबड़ाय॥ २६

छं०—हे राम कृष्ण राखो हमको, ज्यों चोर ग्रसैं लखि धाये हैं। २७
मत डरो आ गये कहि धाये, लै बृक्ष हाथ तहँ आये हैं॥ २८
लखि काल मृत्युसम वह भागा, गोपी तजि प्राण बचाने को। २६
बलराम खड़े गोपी ताके, हरि धाये खलहिं लाने को॥ ३०
झट पकड़ हना उस पापी को, शिर पर इक घूँसा मारा है।
चूड़ामणि लाये कृष्णचंद्र, गति दै कीना निस्तारा है॥ ३१

दो०—शंखचूड़ को मारि हरि, मणि लाये हरि साथ।
बलरामहि दै प्रीति से, गोपी करी सनाथ॥ ३२

भजन—सदा हरि भक्तन के प्रतिपाल ॥ टेक ॥
नन्दराय को सर्प ग्रस्यो जब, भये बहुत बेहाल ।
पद से परसि सर्प उद्धारै, नन्दहिं कीन निहाल ॥ सदा०
शंखचूड़ गोपी लै भागा, मारा बनिकै काल ।
गोपी की रक्षा हरि कीनी, राखत भक्त गोपाल ॥ सदा०
वेद शास्त्र सब भाँति लखे हम, कीनी सब परताल ।
माधवराम श्याम हैं रक्षक, मनमोहन नँदलाल ॥ सदा०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचत्रिंशोऽध्यायः ।

भुजंगप्रयात—यदा कृष्णचंद्रो बनं यातिगोप्य-
स्तदातच्चरित्राणिगायन्ति प्रेम्णा ।
सुमूर्तौ मनो धार्यमाणादिनं तद्-
व्ययं संप्रकुर्वन्ति चाशानिवद्धाः ॥

दो०—जाहिं कृष्ण गोसहित बन, गोपी हरि लवलीन ।
गावहिं लीला दिन बितै, पैंतिस महँ कहि दीन ॥ १

सवैया १—बाम कपोल धरे कर बामपै, बंसीधरे मुख नैन नचावत ।
कोमल आंगुरी पोर लगाय, सुकुंजन में जब बेनु बजावत ॥ २
स्वर्ग विमान चढ़ीं नवला, अरु सिद्ध सुनैं तब लाजहु लावत ।
बंधन बस्त्रन के छुटिगे, बस कामके ह्वै निजचित्त गवांवत ॥ ३
२—सुनिये अवला ये विचित्रता है, थिर बीजुरी सी उरहार धरैं ।
दुखिया जनके सुखदाई लला, गहि बेनु जबै मुख फूँकभरैं ॥ ४

मृग बैल गऊ ब्रजके जितने, सबके चित बाँसुरी शब्द हरैं।
लिखे चित्रसे दाँत दबाये तृनो, जनु सोवत कानदिये न टरैं ॥५

३–मोरपखा धरे धातु औ पत्र, लसैं रचि बेषहिं मल्ल लजावत।
दाऊ लै गोपन संग मुकुंद, बजायकै बांसुरी गाय बोलावत ॥ ६
पांवखुपद्म की धूरि चहैं, यमुना न बहैं थिरता हिये लावत।
प्रेम सों मंद भुजा ज्यों हलैं, लहरैं हमैं सी मिलिबेहित धावत ॥ ७

४–गो बुलाना–कारी सुप्यारीही धौरिहु धूमर, हीयो हियो हरि शब्दसुनावत।
श्यामा औ स्वर्णखुरी बहुला, मृगनैनी हियो कहि हांकलगावत ॥
पाटला मोहनी मैनी सुधा, सुनियोरी चलो क्यों हमैं भटकावत।
धायकै आय मिलैं हरिसों, जब माधव टेरि मुकुन्द बुलावत ॥

५–सेवक गोप बखान करैं, जनु आदिहिपूरुष की प्रभुताई।
गाय चरैं गिरि पै जबहीं, बनचारी हरी मुरली सों बुलाई ॥ ८
फूले फले बन बृक्ष लता, अपने में रहे हरि को प्रगटाई।
भार सों पूर तहूँ मधुधार, बहावत पादप प्रेम जनाई ॥ ९

६–प्रेम पर–बंशी सुने लता बृक्ष द्रवैं, न द्रवै तुम्हरो चित लै निठुराई।
नारि औ पूत में भूत बनो, सनो तामे घरी पल चैन न पाई ॥
काम ना ऐहैं कोऊ जँचिलो, करिहैं तन पै जब काल चढ़ाई।
माधव बांसुरी की धुनि मंद, धरो हिरदे हरि लेहैं छोड़ाई ॥

दो०–अनहद के दश शब्द हैं, तहँ मृदु बंशी एक।
सज्जन जो हिरदे धरैं, पूरन होवै टेक ॥

स०७–तिलकौ मृदु भाल पै लाल के हैं, सो हिये तुलसीबनमाल विराजैं
मृदु भौंरकी भीरहु गान करैं, हरि हर्षित वेणुकी देत अवाजैं ॥१०
खग सारस हंस सरोवर में डटे, चित्त हरे ज्यों उपासक राजैं।
दृढ़ मौनधरे नहिं गौनकरैं, गहि साधक सिद्ध समाधिसी साजैं ११

८-शिक्षा—देखहुतौगति पक्षिनकी,नरनारि हमें तुम्हेंलागें नलाजें
नेक नहीं इनको तनकी सुधि, है नर रात दिना तन साजें॥
साँझही प्रात कियो ही करैं, झट आइहैं शीश पै काल गराजें।
माधव वेगि बचौ औ सुनौ, मृदु गोविंद के पग नूपुर बाजें॥
९—गोबर्धन पै बलदाउ लिये, बनमाल हिये अति सोहत प्यारी।
हे अवला जग हर्षित कै, अति हर्षित वेणु बजावैं मुरारी॥ १२
पूज्य उलंघन होय नहीं, मधुरी धुनि गर्जत मेघ सम्हारी।
छत्र बने शिर छाया करैं, बरषावत फूल फुहार सुधारी॥ १३

दो०—मेघहु करत सम्हार अस, यह मन मेघ प्रचंड।
हरि धुनि दाब विष बरषि, लहै घोर यमदंड॥

स० १०—गोपनके बहु खेलन में,अति दक्ष स्वसीखसों बेनुबजावत
हे नँदरानी तुम्हार लला, धरि होठ पै बंशी ज्यों तान सुनावत॥१४
मंद सुमध्यम तार के भेद, सुरेश शिवौ बिधि को भरमावत।
कोविद हैं झुके कंध औ चित्त, विमोहित ढूंढ़ेहु तत्व न पावत॥१५

दो०—सुरपति शिव बिधि मोहिगे, गोपिन तजें अपान।
नरनारी मन सुनत नहिं, देखहु कैस सयान॥

स०११—पांवनमें ध्वजबज्रके चिन्ह,औअंकुशपद्म बिराजत नीके।
गौवन के खुर सो भयो खेद, हरै पगधारि हरी पृथवी के॥ १६
बेणु बजाय चलै मृदु चाल, निहारत काम जगै युवती के।
बृक्ष भई न चलैं न हिलैं, सुधि केशन वेश दशा मद पीके॥१७

दो०—सुनि बंशी पदचिन्ह लखि, गोपिहु तन न सम्हार।
नरनारी जगमें फँसे, होवैं किमि भवपार॥

स०१२—गौवनकी गणनाहित माल, मणी की धरे तुलसी प्रिय माला।

सेवक प्यारे गले महँ हाथ, बजावत गावत ज्यों नँदलाला ॥१८
सुन्दर बंशिहु के सुनि शब्द, गुनै पति कृष्ण ठगी मृगबाला।
आश तजैं गृहकी हमैं सी, गुणसिंधु हरी लहि होत निहाला १९

दो०—मृगी मोहिं हरि रूप लखि, गृह सुख त्यागत आश।
नर की मति बौरी मृगी, नित नव फाँसत फाँस ॥

स०—नारि पतिव्रत धारि हिये,पति सेवति बृन्दासदा प्रियप्रान है।
दैत्य कुचाल भरो है जलंधर, जाहिर तासु अनीति जहान है ॥
पारबती सत भंग करूँ, शिवरूप धरै सब ठानत ठान है।
देखि सती खुलिगो वह दैत्य, लियो झट गौरिहु अंतरध्यान है॥१
याद कियो झट गौरिजू विष्णु, तहाँ प्रगटे तुरतै भगवान हैं।
पालक हैं जग धर्म के आप, करै यह दैत्य कुनीति विधान हैं॥
मारिये याहि न देर करो, जेहि भांति मरै प्रभु सत्य सुजान हैं।
मानिहरी ब्रतभंग कियो, तियको तेहि भारत शंभु महान हैं॥२
बृन्दा मिली पति रूप हरी, प्रगटे जब देति सो शाप निदान है।
पाथर होउ कठोर बड़े, हरि शालिकराम भये ये विधान है॥
भस्म भई सो भई तुलसी, हरि शीश धरी यह गाव पुरान है।
नारि सबै हियमें समझो, प्रभु पूजित ह्वै सती पावति मान है॥३

१३—कुंद कलीन सों वेष रच्यो, यमुनातट गोप गऊ सँग लीन्हे।
पुण्यवती यशुधे तुव वत्स, वो नन्दलला विहरैं सुख दीन्हे॥२०
वायु सुमन्द बहै तट पै, जनु चन्दन पर्श हरी अँग कीन्हे।
वाद्य बजावत गावत गीत, सुदेवज्यों बन्दी सुमालिक चीन्हे॥ २१

दो०—सबै देव बन्दी बने, गुन गावहिं नँदलाल।
मन भटकै इतउत फँस्यो, याते बुरे हवाल ॥

स० १४–प्रभुवत्सल गो ब्रजके गिरधारि, हैं पूज्य बड़े चतुराननके।
नित साँझ समै सब गोधनलै, जब लेत विधान है तानन के।।२२
छवि कांति थके तनहू से बढ़ै, दृग उत्सव धूरि गोमालन के।
सुत देवकी के हिये चन्द्रउदै, सुखदायक मित्रहिं दानन के।। २३

दो०–मित्रन को सुख देत हरि, नर नारी गुनि लेहु।
सांच मीत प्रभु हिये धरि, जगत मित्र तजि देहु।।

स० १५–कुछ नैन तिरीछे भरे मद सों, बहु मान दें मित्रन को बनमाली।
युग कुंडल झांइसों पीतकपोल,ज्यों पक्कसुबेर मुखौ सुखमा ली २४
द्युतिचंद गयंद की भांति बिहार, किये हरि आवत साँझ भै आली
छवि आनन हर्षित गो ब्रजताप, छुड़ावत मोहन मर्दन काली २५

दो०–आश किये नित गोपिका, हरी हरत संताप।
जगत आश नर नारि कर, लहत नित्य दुख पाप।।

श्रीशुकउ०कुंड०-गोपी नित प्रति कृष्णके, गावहिं लीला गीत।
साँझ समै दर्शन लहैं, बढ़ै हिये हरि प्रीति।।
बढ़ै हिये हरि प्रीति, भीति भवकी मिटि जाहीं।
खान पान शृङ्गार, कुटुम सब जाल दिखाहीं।।
माधवराम मिलैं हरी, जब बुधि यहि बिधि चोपी।
कृष्णचंद मुखचंद लखि, मगन रहैं जिमि गोपी२६

भजन–न नना नानननना नानननना नानाना।
मिलते श्री कृष्णचंद्र जनको गीत गाने से।
बुराई छोड़ साफ चित्त के बनाने से।। टेक।।
देख लो गोपियां गुन गाय के हैं मतवाली।
देते हैं दर्श उन्हें श्याम हर बहाने से।। मिलते०

करके जप योग चहै मन कभी न थिर होवे।
गाय गुन सुनके होय बंद आने जाने से ॥ मिलते०
जची तदवीर करके आपको हम बतलावें।
करके देखो तो सही आवे दिल ठिकाने से ॥ मिलते०
कृष्णगुन गाय सदा माधवराम मस्त रहैं।
करते कुछ और नहीं और के सिखाने से ॥ मिलते०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचत्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षट्त्रिंशोऽध्यायः।

भुजंगप्रयात—अरिष्टे हते नारदोक्त्या विजान-
न्निमौ रामकृष्णौ सुतौ वासुदेवौ।
हि षट्त्रिंशकेऽक्रूरमित्रंदिदेश-
त्वयानीयतां मे पुरे बालकौ द्वौ ॥

दो०—छत्तिसके अध्याय में, बध अरिष्ट सुनि कंस।
नारदसों अक्रूर कहँ, पठयो ब्रजहिं प्रशंस ॥

श्रीशुक उ० छ०—बृषभासुर ब्रजमें आयगयो, खुरसे खोदै महि रूपविशाल।१
मलमूत्र करै कुछ चढ़े नैन, सुनि गर्जन गर्भ गिरैं ततकाल २
अतिघोर गर्जि महिखोदि, उठाये पूँछ औ सींग भुकाये हैं।३
बेसमय गिरैं गौवों के गर्भ, गिरि गुन घन बैठन आये हैं॥४
लखि तीक्ष्ण सींग वाले बृषको, गोपी गौ गोप लगे भागन।५
हे कृष्ण कृष्ण गोविंद हमैं, रक्षहु हैं नाथ तुम्हारी शरन ॥६

भगवान देखि मत डरो बचन कहि, ललकारे क्यों इनसे खल । ७
दुष्टों के बलहर्त्ता हम हैं, लड़ हमसे देख हमारा बल ॥ ८

दो०—ताल बजा फैलाय कर, सखा कंध धर हाथ ।
क्रुद्ध खोद महि पूंछ उठि, चल्यो भिरूँ हरि साथ ॥ ९

छ०—हैं झुके सींग दोउनैन लाल, तिरछा दौड़ा ज्यों बज्र चलै ।१०
धरि सींग अठारह पैर हरी, पीछे करि ज्यों गजगजहिं झिलै ॥११
भगवान से ताड़ित फिर उठिके, वह स्वेद क्रोध भरि फिर धाया ।१२
आतेही सींग धरि महि में पटकि, दियो मार न फेर उठन पाया ॥१३
ज्यों वस्त्र निचोड़ैं तैसे करि, बह रक्त मूत्र मल पद्दु पटक ।
मरगया दुष्टसुर बर्षि फूल, स्तुति की हरिकी मिटी खटक ॥ १४
ऐसे अरिष्ट को मारि आय ब्रज, गोपिन के हरि सुखदाई । १५
मरने पर इसके कंस पास, पहुँचे झट नारद ऋषिराई ॥ १६

दो०—सुता यशोदा के भई, रामकृष्ण वसुदेव ।
धरे देवकी के सुअन, नंदभवन सुनि लेव ॥ १७

छ०—सुनि कंस खड्ग लै क्रोध भरा, दौड़ा वसुदेवहिं मारन को ।१८
समझाया नारद कैद किया, करै युक्ति सो पुत्र पछारन को १९
गे मुनीश तब केशी भेजा, कहे राम कृष्ण मारो जाकर । २०
मुष्टिक चांडूर शल तोशल सब, मंत्री औ गजपतिं बुलवाकर ॥२१
कहता सब से वसुदेवपुत्र, निज राम कृष्ण धरे नन्दभवन । २२
मृत्यू हमरी उनसे ही है, मारो उनको कोइ रचो यतन ॥ २३
रच मल्लयुद्ध मंचान बँधा, सब पुरबासी देखन आवैं । २४
रख हाथी द्वार पर मरवाना, नहिं भीतर दोउ घुसन पावैं ॥ २५

दो०—चतुर्दशी में यज्ञ रचि, देहु पशू बलिदान ।
असुरन की येही क्रिया, खुश हों शिव भगवान ॥ २६

छ०—सबसे यों कह अक्रूर बुला, गहि हाथ बड़ाई करता है। २७
तुम मित्र मेरे यदुबंशिमुख्य, तुमसम कोउ हित नहिं धरता है ॥२८
गुरु काज के साधक तुम मेरे, ज्यों इन्द्र के वामन रूप हरी। २९
ब्रज जाय नंद के घर से पुत्र, वसुदेव के लावो रथ पकरी ॥ ३०
दोनों से मृत्यु देवों ने मेरी, ठानी नँद गोप सहित लाना। ३१
मरवाऊँ कालहस्ती से उन्हें, बचैं मल्लों से है पछाड़ाना ॥ ३२
उनके मरने से दुखित वृष्णि, दाशार्हादिक वसुदेव हनौ। ३३
पितु उग्रसेन जो राज चहैं, देवक भाई तेहि मृत्यु ठनौ ॥ ३४
दो०—कंटकरहित मही तब, हो जावैगी मित्र।
जरासंध गुरु द्विविध है, प्यारे सखा पवित्र ॥ ३५
छ०—शंबर बाणासुर नरकासुर, हैं मित्र हनौ नृप महि मेरी ।३६
यह समझ मित्र पुर देखन को, लावो दोनों न करो देरी ॥ ३७
अक्रूर उ०—राजन् मृत्यूकारक उपाय, तुमने तो खूब विचारा है।
पर सिद्धि असिद्धी सम समझै, दैवहि पर सब निस्तारा है ॥३८
नर भाग से हीन मनोरथ बहु, दिल बढाय कै नितही करते।
पाते हैं हर्ष औ शोक सदा, हम आज्ञा आपकी शिरधरते ॥ ३९
श्रीशुक उ०—अक्रूरको ऐसी आज्ञादे, मंत्रियों को भी छुट्टीदीनी।
घर गया कंस अपने चट से, अक्रूरहु निज मारग लीनी ॥ ४०
भजन—होनी टरति न टारे, सुनौ नृप ॥ टेक ॥
होनी बनति कर्म अपने से, कीन जो नीक बिकारे ॥ सुनौ०
हरनाकुश प्रहलाद बध्यो चह, नरसिंह ताहि बिदारे ॥ सुनौ०
रावण विजय हेत बहु अटको, तेहि रण राम पछारे ॥ सुनौ०
करत अनेक उपाय बचैं हित, जीव काल के चारे ॥ सुनौ०
माधवराम बचै यह कीने, रामकृष्ण हिय धारे ॥ सुनौ०

कुंडलिया—मद बृषभासुर जानिये, सींग कपट कटु बैन ।
अहं मोह छल झूठ पद, क्रोध काम युग नैन ॥
क्रोध काम युग नैन, धर्म गुनि ताहि हटायो ।
नहिं मान्यो तव ज्ञान, कृष्ण झट मारि मिटायो ॥
माधोराम अनन्द भे, हियबासी लहि गोपपद ।
निर्भय डोलहिं भजन करि, मरयो कंस कलि मित्र मद ॥

सवैया—मद होत है भांग अफीमहु में, अरु गांजहु माहिं भरे मद हैं ।
कुछ थोर तमाखुहु, जोर करै, फिर चर्श पिये नर गद्गद हैं ॥
तन आब शराब से धोय गई, नशा और अनेकन बेहद हैं ।
धन जाति सरूप गुनौ मद से, जग में मद मित्र सबै रद हैं ॥

कवित्त—एक थैली माहिं एक बोतल को नशा चढ़ै,
लाख माहिं आंख तरे नेक नाहिं आवती ।
चार छह माहिं गति होति है अनोखी यार,
रात दिन अंड बंड बातही बकावती ॥
कोटि द्वय कोटि अर्ब खर्ब की बतावै कौन,
पूरो प्रेतराट गुणमान को बनावती ।
माधोराम दाया जब केशव गोविंद करैं,
धनपति भये पर नम्रताई हिय भावती ॥

कुंड०—राजा करौ उपाय चह, दैव और कर देत ।
भागि आगिले कर्म से, बनति भोग के हेत ॥
बनति भोग के हेत, नारि नर निशि दिन धावैं ।
सुख सपने नहिं मिलै, उलटि दुख दूना पावैं ॥
माधव राम दयाल हों, तब सुधरैं सब काजा ।
होनी होइकै रहै, बचन सुनि लीजै राजा ॥

कुंडलिया—चित्त विकलता छोड़िकै, धीरज धारै मीत।
लेय सहारा ईश को, होय हार में जीत॥
होय हार में जीत, तुरत बिगड़ी बन जावै।
दुश्मन दावादार, मित्र ह्वै मिलने आवै॥
माधवराम सिखावते, धारैं मनमें नित्त।
विपति सहै सौगुन सुजन, धीरज धारैं चित्त॥

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षट्त्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तत्रिंशोऽध्यायः।

श्लोक—केशींहते केशवभाविसंस्तुतिं,
चकार चागत्य मुनीशनारदः।
व्योमासुरं गोपसरूपधारिणं,
जघान कृष्णः सुखदः सप्तत्रिंशे॥

दो०—केशव केशी दैत्य हनि, नारद स्तुति कीन।
गोपरूप व्योमहि हन्यो, सैं तिस में कहि दीन॥

छ०—केशी घोड़ा ह्वै खनत मही, जनु मनोवेग तन में धारे।
हींसता हटाता सुर विमान, भयभीत किये सुर नर सारे॥ १
हैं दृग विशाल मुखविकट, बड़ी गर्दन ज्यों महाबादल काला।
करने को चला हित मालिक का, ब्रजमें पहुँचा जहँ नँदलाला॥
गोकुल ब्रज कहँ डरपाते लख, बालों से मेघ हटावै है।
ढूँढ़ता कृष्ण को रण में आ, हरि सिंह सी गर्ज सुनावै है॥ २

सुनते ही सन्मुख चट दौड़ा, मानो अकाश हू पी जावै।
वह चंड वेग अति कठिन, कृष्ण कहँ लात मारि मन सुखपावै ३
दो०—झट बचाय दोउ पैर गहि, हरि चहुँ फेर फिराय।
फेंक्यो लघु अहि गरुड़ ज्यों, गिरचो सौ धनुष जाय॥ ४
छ०—उठ होश में आ भर गुस्से में, केशी हरि पर निज वार लिया।
भुज प्रभु हँसकर उसके मुखमें, ज्यों बिलमें सर्प प्रवेश किया॥ ५
ज्यों तप्त लोह छूते भुज के, सब दांत झर पड़े देर नहीं।
लापरवाही से रोग बढ़ै, त्यों बढ़ा हाथ मुख माहिं सही॥ ६
रुक गई स्वाँस केशी की, कृष्ण का बढ़ा हाथ मुँह के भीतर।
आँखैं निकार चहुँपद पछार, मलत्याग गिरा मरा पृथ्वी पर॥७
ककड़ी सी फट गइ देह, हाथ अपना मुरारि झट खींच लिया।
बिनयुक्तिपरिश्रम मारि शत्रु, सुर सुमनबर्षि यशगान किया॥८
दो०—नारद भक्त कृष्ण मिलि, अलग कहत यह बात। ९
कृष्ण योगपति जगतपति, वासुदेव जनत्रात॥ १०
छ०—सब जीवोंकी आत्मा हो एक, ज्यों अग्नि काष्ठमें व्यापिरहा।
हो गुप्त हृदय कंदरावास, ईश्वर साक्षी औ पुरुषमहा॥ ११
आत्मा से आत्मा आश्रय रह, माया से पहिले गुणहु रचे।
संकल्प सत्य गुण से सृष्टी, रचते पालत संहार जचे॥ १२
नृपरूप दैत्य राक्षस विनाश, पुल धर्म राखिबे को आये। १३
केशी को मारा बड़े भाग, सुनि जासु शब्द सुर भग जायें॥ १४
मुष्टिक चाणूर सब मल्लहु गज, कंसहु मारो परसों देखैं। १५
फिर कालयमन मुर नरकासुर, लौ बृक्ष इन्द्र छतिहू लेखैं॥ १६
दो०—मोल पराक्रम खर्चि कर, वीर सुता तुव ब्याह।
नृगराजा की मोक्ष हरि, पुनि द्वारिका उछाह॥ १७

छ०—मणिस्यमंत लाये मरे विप्र, सुत धामसे लाकर दिये हरी १८
पौंड्रकवध काशीपुरीदाह, गति दंतवक्र शिशुपाल करी ॥ १६
द्वारिका बास कर जो जो चरित, तुम करौ लखैं हम कवि गावैं । २०
ह्वै कालरूप सारथी पार्थ, अक्षौहिनि सेना विनशावैं ॥ २१
विज्ञान शुद्ध घन निज थिति से, है सफल बांछा पूर अर्थ ।
भगवान आपकी शरण हैं हम, निज तेजसे माया करौ व्यर्थ ॥२२
अपने आश्रय तुम ईश्वर हो, माया से जग कल्पना करौ ।
है नमस्कार यदुवंश श्रेष्ठ, क्रीड़ा के हेत नररूप धरौ ॥ २३

श्रीशुक उ० दो०—हरि स्तुति दंडवत करि, मुनि भागवत प्रवीन ।
लै आज्ञा हिय हर्ष अति, नारद झट चल दीन ॥ २४

छ०—गोविंद हरी केशी को मारि, ब्रज सुखद गोप लै गौपालैं ।
जन रुचि राखत गोपाल, रीति अनरीति नहीं देखैं भालैं ॥ २५
गोचारन गिरि पर गोप करैं, बनि चोर पाल छिपिकै खेलैं । २६
कोइ चोर पाल कोउ बकरे बनि, निर्भय क्रीड़ा करि सुख मेलैं २७
मायावी मयसुत व्योमासुर, बनि गोप चोर बहु ले जावै । २८
पांचही चार रह गये गुफा धरि, शिला द्वार पर धरि आवै ॥ २६
यह कर्म जानि उसको हरि चट, ज्यों सिंह भेड़िया को पकड़ा ३०
निजरूप धारि गिरिसम, छुड़ावने लगा न छूटै तन जकड़ा ॥ ३१

दो०—कर सों गहि महि पटकि हरि, लख सुर दै पशुमार । ३२
मारि दुष्ट लै गोपनिज, ब्रज गये नन्दकुमार ॥ ३३

भजन दादरा—भक्तजन रक्षक श्रीयदुराई ॥ टेक ॥
केशी कंसमित्र खल आयो, ब्रज महँ धूम मचाई ।
पल में पटकि प्राण बाहर करि, ताकी मुक्ति बनाई ॥ भक्त०

नारद विनय सुनी जब केशव, भली कीन सुनवाई।
बिदा किये व्योमासुर मार्यो, बालक लिये बचाई॥ भक्त०
हे नर नारि कहा यह मानो, हिय में गुनि लो भाई।
माधवराम श्याम पदपंकज, त्यागे नाहिं भलाई॥ भक्त०

कुंड०—मन केशी बाजी चपल, कंस कली (कलियुग) को यार।
दुखदाई आनन्द ब्रज, सत संकल्प पछार॥
सत संकल्प पछार, हार लखि हरि उठि धाये।
निर्भय करि हिय ब्रज़हिं, पवनगति रोकि गिराये॥
माधवराम अनंद है, जब बल प्राणायाम धन।
ब्रज हिय होय प्रसन्न, मरै केशी चंचल मन॥

सवै०—कृष्ण हैं ब्रह्म सरूपहु ज्ञान, दो हाथ विराग विचारहु धारे।
डारि विचारिहि हाथ दियो, मुख अश्व के बाढ़ सुनौ अब प्यारे॥
प्राण निरोधहु होय जबै, झट खोटिहु कल्पना पेट विदारे।
माधवराम मिलाय हरी, मन मुक्त करै भव बंधन टारे॥

ऊपर देवता भागे फिरैं, महि में सब जाय छिपैं मन मारे।
दीन मनुष्य भये बलसों, करि कोप भे केशी मनौ ललकारे॥
जो सुख चाहौ सुनै नर नारि, हिये धरिये हरि नन्ददुलारे।
माधवराम बचाइहैं श्याम, भजौ दिन रातिहु साँझ सकारे॥

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तत्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।

श्लो०—अष्टत्रिंशे यथाध्यानक्रूरो गोकुलंगतः ।
तथैव रामकृष्णाभ्यां गृहं नीत्वासुसत्कृतः ॥

दो०—अड़तिस के अध्याय में, ब्रजहिं गये अक्रूर ।
राम कृष्ण मिलि मार्ग महँ, भये मनोरथ पूर ॥

श्रीशुकउ०छ०—बसिरात प्रातरथचढ़ि चलिभे, अक्रूर नन्दगोकुल हरिदास १
हरि कमलनैन में पूर्णभक्ति, लहि पथमें सोचहिं निपटउदास ॥२
क्या सुकृत दान तपहै हममें, केशवपद आज निहारैंगे । ३
दुर्लभ दर्शन मुझ विषयी को, ज्यों शूद्र वेद किमि धारैंगे ॥४
मुझ अधम को जो प्रभु दर्शन हो, कोइ कालनदी से कब उबरे । ५
है सफल जन्म सब पाप नाश, मिल कृष्णचरण मुनिध्यानधरें ६
करी कंस कृपा पदकमल लखौं, हरिपद नखसे मुनि जगततरे । ७
ब्रह्मादिक सुर लक्ष्मी पूजैं, जन गोपीपूजित बनमें फिरे ॥ ८

दो०—सुन्दर मुख नासा हँसनि, अरुण अधर दृग लाल ।
अलक मुकुटयुत देखिहौं, होत सगुन यहि काल ॥ ९

छ०—महिभार उतारन मनुज विष्णु, तनशोभा लखि दृग होंय सफल १०
सत असत अहं से रहित तेजमय, मायासे जग रचै अखिल ॥११
सब पापहरन मंगलदायक, गुण कर्म जन्म से मिली कथा ।
जीवन दे सोहैं पवित्र कर, जग कृष्णसुयशबिन मृतक यथा ॥ १२
सुर मंगलकारी धर्मपाल, यदुवंश कृष्ण अवतार लिया ।
यश फैला कर ब्रज बसे हरी, देवता सुखद सोइ गान किया ॥ १३

हरि सतगति गुरु त्रैलोकपती, नैनों उत्सवदायक तन धर।
देखैं अवश्य हम रमारमन, वपु हो मंगल निशिदिन नहिं डर॥१४

दो०—चरण लाभ हित रथ उतरि, ईश्वर पुरुष प्रधान।
योगी भजें तिन्हें नवौं, सखा सहित भगवान॥ १५

छ०—निज कमलहाथ जनरच्चक प्रभु, जब हम पदपद्मप्रणाम करैं
भक्तन को काल ब्याल भय हरि, सुख देत सोइ कर शीश धरैं १६
बलि इन्द्रहु दीनी भेट जिन्हैं, त्रैलोकपतीपन शीघ्र लियो।
रासक्रीड़ा में गोपी श्रम, कर पर्शि सबै श्रम दूर कियो॥ १७
नहिं शत्रु बुद्धि गुनिहैं अच्युत, गुनि कंस दूत जग संदर्शक।
बाहर भीतर चेत्रज्ञ लखैं, निज विमलदृष्टि से जन रच्चक॥ १८
कर जोरि कमलपद परो हमैं, हँसि दयादृष्टि से जब देखैं।
सब पाप दूर हों मिलै हर्ष, गत शंक ये जन्म सफल लेखैं॥ १६

दो०—अनन्य गति जाती सुहृद, मिलैं जो हाथ बढ़ाय।
होय आत्मा तीर्थ मय, भव बंधन छुटि जाय॥ २०

छ०—मिलि मोहिं कहैं अक्रूर तात, तू तनुधारी में श्रेष्ठ भया।
नहिं आदर जिसको हरि से मिला, धिक्कार जन्मनर बृथा गया २१
हरि को प्रिय मित्र न शत्रु कोई, ज्यों कल्पबृच्च जन सुखकारी २२
बलराम पूंछिहैं मिलिकै मोहिं, गृह लैकै कंस कथा सारी॥ २३
श्रीशुकउ०—अस सोचत पथ अक्रूरचले, रथचढ़िदिनडूबतब्रजहिंगये २४
सब लोकपाल बंदित पदरज, यव अंकुश चिह्नित लखत भये २५
लहि प्रेम हर्ष रोमांच अश्रु, रथ उतरि धरहिं रज शिर अपने। २६
तनु धारे को है स्वार्थ यही, तजि दंभ धरै हिय हरि जपने॥ २७

कुंड०—चरणचिन्ह अक्रूर लखि, प्रेम हिये अधिकान।
करि प्रणाम लोटत मही, अब मिलिहैं भगवान॥
अब मिलिहैं भगवान, हृदय महँ निश्चय कीना।
तैसेही हरि आय, हाथ सो कर गहि लीना॥
माधवराम मिलाप के, सज्जन यह आचरण।
रटन नाम मुख प्रेम हिय, ध्यान कृष्ण के चरण॥
पद हियधारे कृष्ण के, सबै विपति छुटिजाँय।
नरनारी आनन्द लहि, सुख संपति नगचाँय॥
सुख संपति नगचाँय, दुःख पापहु जरि जावैं।
भोगि भोग संसार, अंत जन मुक्तिहु पावैं॥
माधवराम बतावत, हिये न आवै मोह मद।
जो सपनेहु हिय धरै, प्रेमसों राम श्याम पद॥
दो०—देखि कृष्ण बलराम कहँ, गो दोहन को जात।
नील पीत धारे वसन, कमल नैन मुसकात॥ २८
छ०—दोउ श्याम गौर भुजलंब सुमुख, सुन्दर बर गज बलवारे हैं। २९
बज्रांकुश ध्वज पद कमलचिन्ह, सोहत हिय दाया धारे हैं॥३०
शुभ खेल करै बनमाल माल, बर चन्दन वस्त्र सुघर सोहैं।३१
पूरुष प्रधान प्रभु जगतपती, अवतार अंशयुत जग मोहैं॥ ३२
निज तेज से दिशा उजेर करैं, जिमि श्याम श्वेतमणि रूपधरे ३३
अक्रूर उतरि रथ प्रेम सहित, झट राम कृष्ण पदकमल परे॥३४
भगवंत दर्शन पर्शन सुप्रेम, के आँम बहैं कुछ नहिं कहते।३५
हरि समझ कमलकरसे परसा, झट मिले भक्तके बश रहते।३६
दो०—बलरामहु जन कहँ मिले, कर गहि लाये धाम।
स्वागत करि आदर कियो, दियो सकल आराम॥३७

बर आसन दै पद पखारि कै, पुनि विधि पूर्वक मधुपर्क दियो। ३८
बर अतिथि श्रांत कहँ आदर दै, भोजन करवायो सुखी कियो ३९
खाये पीछे बलराम पान दे, कुशल प्रीति से सब पूँछी। ४०
कंसहि जीते कसरहो आप, पशुबधिक जियत पशु गति छूँछी ४१
निज बहिन के सुत जिसने मारे, तिसकी रैयत की गति कह कौन। ४२
इस भाँति नंद से पूँछे गये, गत श्रम अक्रूर तहँ गह्यो मौन॥ ४३

भजन—जानत हृदय प्रीति यदुराई॥ टेक
करि शंका अक्रूर चले ब्रज, मन धारे दुचिताई।
हृदय प्रेम लखि राम कृष्ण दोउ, मिले आय मग धाई॥जानत०
आदर सबहि भांति बहु कीनो, अतिथि मानि पहुनाई।
बार बार चाचा कहि मोहन, करैं चरण सेवकाई॥ जानत०
शुद्ध चित्त लखि संग चलैं हरि, तजि ब्रज माई गाई।
जो संदेह रही केशवजी, सोऊ दई छोड़ाई॥ जानत०
ईश्वर अपने कियो चहो बस, सिखो युक्ति यह भाई।
माधवराम साफ चित राखै, कपट पखंड बिहाई॥ जानत०

—:✻:—

इतिश्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे अष्टत्रिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः।

श्लोक—नवत्रिंशे पुरीं गच्छत्यच्युते गोपिकोक्तयः।
अक्रूरेणाथ कालिंद्यां विष्णुलोकस्य दर्शनम्॥

दो०—उनतालिस अध्याय में, कृष्ण मधुपुरी जाहिं।
गोपी कहे विविधि बचन, निजसरूप दर्शाहिं॥

श्रीशुक उ० छ०—पलँगामें पड़े हरिसे मानित, सब किये मनोरथ पायगये। १
हरि प्रसन्नहों तो क्या दुर्लभ, कुछ चहैं न जन हरिभायगये॥ २
ब्यालू करि पौढे पूँछैं हरि, सब कुशल कंसहू की करतब। ३
श्रीभगवा०—चाचा जी आये स्वागत है, कहिये गति वंधुजातिकी सब ४
कुल रोग कंस बढ रहा, कुशल क्यों प्रजा कुटुंबी की होगी। ५
हा मंदभाग हम, जिस निमित्त, सुतमरण विपति पितुने भोगी ६
बड़भाग आपका दर्श मिला, कहिये किस कारण से आये। ७
श्रीशुकउ०—अक्रूर कहैं सब बंधु बैर, पितु वध उपाय ज्यों वचपाये ८

दो०—जो सँदेश जिस हेत से, आये जिमि बनि दूत।
कृष्णजन्म की कंस सो, नारद की कहनूत॥ ९

छ०—अक्रूर बचन सुनि रामकृष्ण, पितुनंदसे कंस बुलाव कहा १०
सुनि गौदोहन एकत्र करो, जोड़ो गाड़ी उत्सव है महा॥ ११
कल जाँय मधुपुरी लैके भेंट, कह नन्द कंस को देन चलैं। १२
है पर्व महोत्सव लखैं तहां, कहो ढोल बजा सब सुनैं भलै॥ १३
यह सुनि गोपीजन भईं विकल, अक्रूर हरिहि लेने आये। १४
कोइ हृदयताप मुख मलिन भईं, छुट केशवसन मन घबराये॥ १५
दूसरी ध्यान में मग्न आत्म में, पहुँची लोक द्वै नहीं सुरत। १६
हियहरनि हँसनि बातैं सुमिरैं, मोहित कोई सरूप में रत॥ १७

दो०—मधुर हँसनि मृदु ललित दृग, शोकहरनि प्रियचाल।
चरित विचित्र सुमिरि सबै, गोपी भईं बिहाल॥ १८

छ०—सब विरह विकल भयभीत, इकट्ठी कहैं नैन बहैं हरिमें दिल।
गोप्य ऊचुः—हे ब्रह्मा तुम्हरे दयानहीं, करते वियोग करके इकमिल॥

चहै किसी का मतलब पूर न हो, तुम करो जुदा ज्यों खेलैबाल १९
तुम श्याम अलकयुत मुखदिखला, दुखहरनि हँसनि हरलियो नँदलाल २०
अक्रूर महा तुम क्रूर भये, सबके दृग हरि हरि ले जावो।
सब सृष्टिसुघरता एक ठौर, मधुमथन कृष्ण लखैं बिलगावो॥ २१
क्षणभंग सुहृदहरि झटपट करि, हे सखी न हमें निहारैंगे।
घर स्वजन पुत्रपति त्यागि मिलीं, नवप्रिय मन औरहिधारैंगे २२

दो०—रात दिवस भल होंय सखि, मधुपुरि नारिन केर।
ब्रजपति हरि आवत लखैं, मृदुमुख नैन मुरेर॥ २३

छं०—तिनके मुकुंद मृदु मंजुबैन, सुनि हिय हरि परवशता लावैं।
हेसखी यहां लौटहिं कैसे, लखि हँसनि लजीली रमिजावैं॥ २४
धनि नैन आज यदुवंशिन के, श्रीरमन गुणभवन कृष्ण लखैं। २५
निर्दय का नाम अक्रूर न हो, जनदुख में डारि लै जाय सखैं॥
चढ़ि चलै अनारी हरि रथ पै, जल्दी दुर्मद सब गोप करैं। २६
बूढे हू गाड़ी चढ़िकै चलैं, उलिटो भा दैव हम हृदय धरैं॥ २७
माधवको मिलि रोकैंगी हम, कुलवृद्ध बंधु का करैं हमें।
आधहु छनकेशव वियोग हम, सखिसहि न सकैं सब विकलभ्रमैं २८

दो०—मन्दहँसनि वानी मधुर, चितवनि रास मिलाप।
गई राति छनसम सखी, तेहि बिन बहु संताप॥ २९

छं०—जब बाल संग हरि सायंकाल, खुर धूरभरी अलकैं धारे।
बंशी बजाय हँसि मुरकिचितै, चितहरैं रहैं किमि बिनप्यारे॥ ३०
श्रीशुक उ०—हरिमें चित गोपी विरह विकल, तजि लाज रुदन बहुठाना है।
गोविंद दमोदर कहि माधव, रखि नाम लाज रहि जाना है॥ ३१
यों रोवैं गोपी सूर्य्य उदै, रथ पै अक्रूर चढ़ाय लिये। ३२
लै भेंट गोप सब नन्द चले, गाड़ी चढ़ि उत्सव चित्त दिये॥ ३३

कुंड०—आये हैं अक्रूर ब्रज, कृष्णचन्द को लेन ।
सुनि गोपी व्याकुल भईं, हिय में परै न चैन ॥
हिय में परै न चैन, करैं मिलि जहँ तहँ बातैं ।
यह करिबे अस करौ, बतावहिं रोकन घातैं ॥
माधवराम श्याम पद, हिय महँ सबै बसाये ।
महाक्रूर अक्रूर हैं, ब्रज महँ नाहक आये ॥
प्रेम गोपिका सत्य करि, भव से उतरीं पार ।
जीवन थोरे दिवस का, करिलो सब नर नारि ॥
करिलो सब नर नारि, यहां है कुछ दिन रहना ।
चलना परै ज़रूर, पाप से दुख बहु सहना ॥
माधवराम प्रेम हित, पहले धारो नेम ।
नेम निबाहे आइहै, धीरे धीरे प्रेम ॥

छ०—संदेश आश गोपी कीने, हरि में इकटक दे ठाढ़ी हैं । ३४
आवैंगे यह कहलाय दिया, लखि गोपीं प्रेमनदि बाढ़ी हैं ॥ ३५

दो०—रथ पताक रेणू लखैं, ठाढी कहैं कलाप ।
कुछ न देखि चित-पठै सब, भईं चित्र सम आप ॥ ३६

छ०—ह्वै निराश लौटीं गोविंद सो, दिनरात कृष्णलीलागावैं ३७
रथ वायुवेग चलि राम कृष्ण, अघहरनी यमुना पै आवैं ॥ ३८
नहवाय प्याय जल रथ बिठाय, थल बृक्ष खंड दोऊ सोहैं । ३९
अक्रूर पूंछि स्नान करैं, विधिसो, सुधि हरि करि चित मोहैं ४०
डुबकी लगाय ज्यों जपै मंत्र, त्यों रामकृष्ण तहँ देखि परे ।४१
रथमें बैठे किमि ह्यां आये, झट उझकि लखैं मनमाहिं डरे ॥ ४२
फिर डूबके देखा जलमें हरि, फिर देखा ऊपर झूंठे कौन । ४३
फिर देखा ईश्वर सिद्ध मुनी, सब करैं स्तुती कोई मौन ॥ ४४

दो०—शेषरूप बलराम हैं, सोहत शीश हजार ।
नीलांबर तन गौर शिर, सरसों सम महि धार ॥ ४५

छं०—गोदी में पीतपट धरे श्याम, भुजचारि कमलदृग धारे हैं ४६
मृदु हँसनि लखनि मुखप्रसन्न शुभ, सब अंग अधर अरुणारे हैं ४७
वक्षस्थल लक्ष्मी भुज प्रलंब, नाभीगँभीर गल शंख छबी । ४८
कटि दीर्घ जंघयुग शुभग जानु, हियभावति शोभा अधिक फबी ४९
उन्नत नख अरुण अंगुलियों में, दलकमल सुघर शोभा सोहैं ।५०
मणिमयनूपुर कौंधनी चारु, उपवीत मुकुट कुंडल मोहैं ॥ ५१
करशंख चक्र गद पद्मलसै, श्रीवत्स मणी कौस्तुभ बनमाल ।५२
सब पार्षद सनकादिक सुरेश, विधिरुद्र करैं स्तुति नँदलाल ॥५३

दो०—नारद वसु प्रह्लादजन, निज निज भाव मनाव । ५४
श्रीपुष्टी कांती सबै, सेवहिं आनँद पाव ॥ ५५
अति प्रसन्न लखि प्रेमयुत, भरे नैन रोमांच । ५६
करै बिनै गद्‌गद गिरा, हाथ जोरि मन सांच ॥ ५७

भजन—कृष्ण हैं नारायण भगवान ॥ टेक ॥
सुर सुरपति सब मुनि पूजैं पद, बिधि शिव करते ध्यान ।
हरिजन नित सुमिरैं सुख पावैं, मिलै भक्ति दृढ़ ज्ञान ॥ कृष्ण०
गुनि गोपाल क्रूर के हिय में, शंका अधिक समान ।
सो सब दूर भई इक पल में, जब यह रूप दिखान ॥ कृष्ण०
करि मज्जन रथ के ढिग आये, कीना सकल बखान ।
माधवराम श्यामपदपकंज, ध्यान करैं गुन गान ॥ कृष्ण०

इतिश्रीमद्भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चत्वारिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—चत्वारिंशे ततोऽक्रूरः कृष्णं मत्वेश्वरेश्वरम् ।
प्रणम्यभक्त्या तुष्टाव सगुणागुणभेदतः ॥

दो०—चालिस के अध्याय में, कृष्ण समुझि जगदीश ।
करि प्रणाम अक्रूरजी, स्तुति करहिं महीश ॥

छ०—सब हेतु के हेतु प्रणाम तुम्हैं, नारायण आदिपुरुष अव्यय ।
नाभी से कमल पैदा प्रभु के, भा सकल लोक वह है जगमय १
जल मही अग्नि वायू अकाश, मन इन्द्री देव तुमहीं से भये । २
नहिं रूप कोई जानैं तुम्हार, बिधिहू माया में मोहि गये ॥ ३
साध्यात्म साधि भूतौहू देव, लखि महापुरुष योगी मानैं । ४
रचि यज्ञ विप्र पढ़ि वेदत्रयी, पूजैं प्रभु विविधि यज्ञ ठानैं ॥ ५
कोइ तुमही में सब कर्म थापि, ज्ञानीजन ज्ञान यज्ञ करते । ६
लै संसकार बहु विधि तुमको, पूजैं बहु रूप एक धरते ॥ ७

दो०—शैव तुम्हैं शिवमार्ग से, पूजहिं शंभु सरूप । ८
सबै तुम्हैं सब भांति सों, पूजहिं सब के रूप ॥ ९

कुंड०—हिय शंका अक्रूर के, कंस न डारैं मारि ।
व्याकुल मन से अति दुखी, लखिगे कृष्ण मुरारि ॥
लखिगे कृष्ण मुरारि, विष्णु को रूप दिखायो ।
बाहर भीतर निरखि, प्रथम बहु संशय आयो ॥
माधवराम निहारि छवि, दुर्बलता तजि पुष्ट जिय ।
महिमा लखि स्तुति करी, हर्षित हैं अक्रूर हिय ॥

हरि तुमही सब रूप है, राम कृष्ण दोउ रूप ।
मच्छ कच्छ नरसिंह बनि, धरो बराह सरूप ॥
धरो बराह सरूप, परशुरामहु वपु धारो ।
वामन ह्वै नृप राम, घोर दशकंधर मारो ॥
माधव राम शरीर धरि, तारत रच्छा भक्त करि ।
नाम अनेकन आपके, जब जब धरत सरूप हरि ॥

छ०—जलपूरित ज्यों नदियों की धार, मिलि सिंधु एक हो जाती है ।१०
सत रज तम ब्रह्मा कीट सृष्टि, तुममें ही अंत समाती है ॥ ११
सर्वात्मा सब बुद्धी साच्छी, है नमो कियो गुणमयी प्रवाह ।
सुर नर पशु कीट पतंगमयी, रचि देति अविद्या है नहिं थाह १२
मुखअग्नि नेत्ररवि नाभिगगन, हैं कानदिशा अरु अकाशशिर ।
बाहू सुरेन्द्र प्रभुकोखि सिंधु, है प्राणवायु जीवत चर थिर ॥ १३
रोवां हैं बृच्छ औषधहु केश, है मेघ अस्थि पर्वत साजैं ।
है निमिष रात दिन बृष्टि वीर्य, ब्रह्मा उत्पति इन्द्रिहु राजैं ॥ १४

दो०—नाशरहित अव्यय पुरुष, सबके शोभा सीव ।
लोक लोकपति मशक ज्यों, गगन जलहिं जलजीव ॥१५

छ०—जो जो सरूप धरौ खेल हेत, दुख छुटै जगत तुवयश गावैं १६
जलचारी मत्स्यसरूप नमो, हय शीर्ष मधूनाशक ध्यावैं ॥ १७
नमो कूर्मरूप मंदरधारी, सूकर सरूप महि उद्धारी । १८
जन भयहर नरसिंह रूप नमो, वामन वलि जग भिच्छाकारी १९
खल च्छत्रिविनाशक परशुराम, है नमो राम रावणहर्त्ता । २०
बलदेव कृष्ण सुतयुत प्रदुम्न, है नमो जगत मंगलकर्ता ॥ २१
असुरन मोही नमो बुद्धदेव, म्लेच्छननाशक कल्की औतार ।२२

मायामोहित यह जीवलोक, मैं सुभ्रमें फँसि नहिं पावैं पार ॥ २३
सुत गृह तिय धन अरु कुटुम्ब में, मैं भ्रमूँ मूढमति मेरी हैं । २४
हैं अनित्य दुखदाई उलटे, नहिं लखूँ आत्मगति तेरी हैं ॥ २५

दो०—अज्ञानी जल त्यागि कै, मृगतृष्णा को धाव । २६
कर्म बँधो यह कृपिणमति, मन इन्द्री भरमाव ॥ २७

छ०—मैं चरणकमल की शरण तेरी, जो दुर्जन कभी न पाते हैं ।
छुट जाता है भवबंध तभी, करि आश शरण जन आते हैं ॥२८
विज्ञान मात्र पुरुषप्रधान, है ब्रह्म अनंत नमो तुमको । २९
सब जीवमयी नमो वासुदेव, निज शरण जानि रक्षहु हमको ॥३०

भजन—करी संस्तुति हरि की चित लाय ॥ टेक ॥
धन्य धन्य श्रीराम कृष्ण प्रभु, शंका दीन छुड़ाय ।
शेष रूप बलदेव विराजे, हरि नारायण आय ॥ करी०
सबहि देव आधीन आपके, हमको यही लखाय ।
लै अवतार हरत भूभारहिं, कीर्ति रहै महि छाय ॥ करी०
मातु पिता यदुवंशी भक्तन, लीजै नाथ बचाय ।
माधवराम चरणपंकज गहि, मगन सदा गुण गाय ॥ करी०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोचत्वारिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—एकचत्वारिंशकेऽहनूजकं प्रविशन्पुरीम् ।
ततो वरानदात्तुष्टः सुदाम्नो वायकस्य च ॥

दो०—इकतालिस अध्याय महँ, धोबी कहँ हरि मारि ।
दरजी मालिहि बर दियो, निजपद भक्त विचारि ॥
श्रीशुक उ०—जल माहिं कृष्ण निज तन दिखाय, नट खेलहरै त्यों हरलीना १
छिपगया रूप लख जलसे निकल,करि कर्म आय विस्मय कीना २
हरि पूंछैं क्या अद्भुत देखा, जल गगन मही में बतलावो ।
आश्चर्ययुक्त ह्वै तुम्हैं लखैं, सबभेद आप निज समझावो ॥ ३
अक्रूर उ०—जल गगन महीमें जो अद्भुत, विश्वात्मा प्रभुमें सबदीखै ४
सब जगह में अचरज जो कुछ है, लख तुम्हैं जगत महँ नहिं झीखै ५
यों कह अक्रूर ने रथ हाँका, श्रीराम कृष्ण मथुरा लाये । ६
मारग में ग्रामजन मिले, निरखि वसुदेवपुत्र हिय सुख पाये ॥ ७
दो०—ब्रजवासी नन्दादि सब, पहिलेही तहँ आय ।
परखहिं प्रभु कहँ बाग महँ, निरख रहे हरषाय ॥ ८
छं०—गोपन को मिलि हरि जगदीश्वर, अक्रूर हाथ गहि हँसिकै कहैं ।९
रथ लेकर पुरी में आप जांय, हम पीछे देखैं यहां रहैं ॥ १०
अक्रूर उ०—तुमबिन हम प्रभु पुर नहीं जांय, हे भक्तवछल हमैंमतत्यागो ११
घर मेरा चलो सनाथ करो, बलराम सखायुत अनुरागो ॥ १२
पदरज से वास पवित्र करो, पदजल से पितर सुर तृप्त भये ।१३
पदधोय वली यश गति पाये, शिव शिरधर सगरसुत स्वर्ग गये॥१४-१५
त्रैलोक पवित्र करैं गंगा, हे जगन्नाथ देवन के देव ।
उत्तमयश हरि यदुवंश श्रेष्ठ, नम नारायण सुनि विनय लेव ॥१६
श्रीभगवानु० दो०—आवैंगे बड़भाइयुत, तुव गृह हे अक्रूर ।
कंस मारि निज सुहृत प्रिय, देहैं सुख भरपूर ॥१७
श्रीशुक उवाच—यह सुनि उदास अक्रूर जाय, कहि हाल कंस सों घरथाये१८
दुपहर पीछे बलराम कृष्ण, सब सखा नगर देखन आये ॥ १९

स्फटिकमयी गोपुरहु उच्च, शुभद्वार किवार स्वर्ण झालर।
खावां गंभीर तांबे के कोष्ठ, तहँ बाग बगीचा अति सुन्दर॥ २०
चौराहे महल गृहयोग बाग, दूकान पंक्ति गृह स्वर्ण खचित।
वैडूर्यमणी हीरा नीलम, मूंगा मरकत स्फटिक रचित॥ २१
महलौं के झरोखों में मयूर, औ बैठ कबूतर शब्द करैं।
चौराहे मार्ग जलसे छिड़के, अंकुर मालादिक द्वार धरैं॥ २२

दो०—पूर्ण कलश धरे द्वार पै, तापर दीप अनूप।
पुष्पपताका कदलि के, सोहत हैं शुभ यूप॥ २३

छ०—वसुदेवपुत्र दोउ सखासहित, ज्यों राजमार्ग में आये हैं।
धाईं पुरनारी महल चढ़ीं, दर्शन हित आस लगाये हैं॥ २४
उलटे पलटे पहिरे हैं वस्त्र, आभूषण भी उलटे धारे।
नूपुर एकै इक कर्णफूल, कोइ एक नैन अंजन सारे॥ २५
भोजन करतीं भोजन तजि कै, नहिं भली भांति स्नान किया।
हल्ला सुन सोते से भागीं, कोइ दूध पिलाना छोड़ दिया॥ २६
तिनके मन कमलनैन हरिजी, चितवन औ हास्यसे हरि लीने।
गजमत्त पराक्रम कृष्णचंद, नैनों को आत्म उत्सव दीने॥ २७

दो०—प्रभु लखि चित चंचल लहे, हास्य दृष्टि सों मान।
आनँद रूप हिये धरि, तजी आधि अज्ञान॥ २८

छ०—महलों शिखरों पर चढ़ीं प्रीतिमुख, खिले फूल हरिपर बरषैं। २९
द्विज दधि अच्छत माला से पूजि, दै भेंट हिये महँ अतिहरषैं॥ ३०
कहँ क्या तप किया गोपियों ने, नरलोक महोत्सव सदा लखैं। ३१
आते लखि धोबी से मांगैं, दो वस्त्र स्वच्छ पुरजन निरखैं॥ ३२
दे डालो वस्त्र हमको प्यारे, तो बहुत भला होवै तेरा। ३३
याचना सुनत परिपूरण की, कटु बचन कहै भूपति चेरा॥ ३४

ये कपड़े तुम्हें बनचारी को, कैसे राजा की वस्तु चहौ । ३५
भगजाव प्राणले छोरे हो, नहिं बँध पिट नृपका दंड सहौ ॥ ३६

दो०—कुपित देवकीसुत हरी, सुनि तेहिकी अस बात ।
धोबी को हर लीन शिर, दे थप्पड़ की घात ॥ ३७

छं०—तज वस्त्र भगे उसके सेवक, अच्युत हरि कपड़ों को लेते ।३८
दोउ भाय पहिन गोपों को दिये, कुछ वहीं छोड़के चलदेते ॥३६
दरजी मिल बेष सवाँर दिया, अनुरूप बस्त्र शुभ पहनाये । ४०
श्रीराम कृष्ण का बेष शुभग, ज्यों सजे बालगज छवि पाये ॥४१
सारूप्य मुक्ति प्रभु खुशह्वै दें, लक्ष्मी बल आदिक सभीदिया ४२
गे भवन सुदामा माली के, वह चट धरि शीश प्रणाम किया ४३
आसन पादार्घ सुपूजनकर, सब विधि सेवै गोपाल सहित ।४४
कह जन्म सफल कुलहू पवित्र, हैं देवपितरखुश हरिकियहित ४५

दो०—आप विश्वकारण परम, प्रगटे जगसुख हेत । ४६
विषम दृष्टि जगदात्मा, छुई न सर्व निकेत ॥ ४७

कुंडलिया—धोबी दंभ दिखाव पट, हरि मांगैं हमैं देव ।
कहत कटु बचन देत नहिं, परी दंभ में टेव ॥
परी दंभ में टेव, सीख सच थप्पड़ मारा ।
छीन लियो दिखराव वस्त्र, धोबी को तारा ॥
माधवराम मरजी धरै, मन दरजी नहिं लोभी ।
गुन में औगुन लाय, करै निंदा सोइ धोबी ॥

सवैया—मन माली सुदामा विचार के फूल, बनाय कै माल हरी पहनावै ।
प्रभुपूजि भलीविधि अंतरमें, धरि ध्यान अनेकन भाँति मनावै ॥
वर देंय प्रसन्न ह्वै केशव जू, पदभक्ति सुसंगहि लै हरषावै ।
जनपालक माधवराम सदा, जग के सुख में परि नाहिं भुलावै ॥

छ०—करिये आज्ञा क्या करै दास, आज्ञा ही दया तुम्हारी है। ४८
पहना दी रच पुष्पों की माल, सबको हरि पर बलिहारी है ॥४९
मजिरामकृष्ण गोपों के सहित, शरणागत को बरदान दिया।५०
भक्तोंमें प्रेम जीवोंमें दया, पद अचलभक्ति वह माँग लिया॥५१

दो०—बंशबर्द्धिनी श्री दई, बल आयू यश कांति।
आगे दोउ भाई चले, तन सोहति छवि शांति ॥ ५२

भजन—मथुरा है दिल हमारा, विचरैं श्रीकृष्ण प्यारा।
बलदेव ज्ञान भाई, सँग गोप सद विचारा ॥ टेक
सदभाव पुर के वासी, तन भेंट दे रहे हैं।
शुभवृत्तियां हैं नारी, लखती हैं प्राण प्यारा ॥ मथुरा०
दिखराव वस्त्र लादे, आया है दंभ धोबी।
हरि मांगते न देवे, शिक्षा थपेड़ मारा ॥ मथुरा०
मरजी हरी की मानै, दरजी वसन वासना।
पहनाय कर प्रभू को, हरि का सरूप धारा ॥ मथुरा०
संकल्प फ़ूल माला, दे मन सुदामा माली।
माधोराम भक्ति पाई, लक्ष्मी अचल अपारा ॥ मथुरा०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः।

श्लोक—द्विचत्वारिंशके कुब्जोन्नमनं धनुषो भिदा।
वधस्तद्रक्षिणां कंसारिष्टं रंगोत्सवादि च ॥

दो०—चालिस दो अध्याय में, धनुष भंग हरि कीन।
प्रथम कूबरी सूधि करि, भक्तन कहँ सुख दीन॥

श्रीशुक उ० छ०—चलते ज्यों नृप मारग में कृष्ण, चंदन लै कुबरी मिली नारि।
रसदाता कृष्ण हँस के बोले, शुभ मुख अँगवाली तिय निहारि॥१
को तुम किसकी चंदन किसको, सुंदरि घिसके लिये जाती हो।
हमैं दो चंदन होवैगा भला, नेकी करके सुख पाती हो॥ २
सैरंध्र्युवाच—हे सुंदर दासी कंसकी हम, त्रयवक्र नाम त्रिभुवननायक।
भावै कंसहि मेरा चंदन, तुम तजि इस हित कोउ नहिं लायक॥३
माधुरी रूप चितवनि बोलनि, लखि मोही चंदन सघन दिया।४
केसरिया चंदन से शोभित, छवि पाय परम आनंद लिया॥ ५

दो०—शुभ मुख वाली कूबरी, सूधि कियो चह श्याम।
दर्शन फल हर्षित हरी, ताहि देत अभिराम॥ ६

छ०—पैरों से तलुओं पर दबाय, दो अँगुली से ठोढ़ी पकड़ी।
ज्यों मार दिया झटका अच्युत, चट सुधरी जनु सूधी लकड़ी॥७

कुंड०—त्रिगुण बुद्धि है कूबरी, चंदन जग बरताव।
कलि कंसहि भावत भले, कृष्ण कियो निज दाँव॥
कृष्ण कियो निज दाँव, मोहि कर अर्पण कीनो।
अच्युत हरी प्रसन्न, सूध निर्गुणपन दीनो॥
माधवराम लखावत, लेहु नारि नर हिये गुन।
ज्ञानभक्ति निर्गुनपनो, जगत जाल सबही त्रिगुन॥

सवैया—कूबरी बुद्धि हमारि तुम्हारि, कढो भरोकूबर क्रूर सुभावको।
चन्दन चातुरी कंस कली, तेहि भावत नीको है दुष्ट कुभावको॥
जो कहुं श्याम मुरारि मिलैं, ले मांगि दै लालच भक्ति के भावको।
माधवराम हो, सूधि सुबुद्धि, लखै सदा अच्युत शुद्ध प्रभाव को॥

चेति जा कूबरी दूबरी बुद्धि, मरीकलि कंसकी दासी कहायकै।
चंदन चित्त कटोरी भरो, जगजाल लगावति है हरषाय कै॥
सन्मुख कृष्णजू आये खड़े, नित मांगत देत न मोद बढ़ाय कै।
माधवराम प्रभू के लगाय दे, तो सुख पाइहै दुःख विहाय कै॥
छ०—समसूधी शुभग अंगवाली, मैं प्रभुहिं पर्शि सुंदरि नारी।८
गुणरूप उदार कहै हरिसों, गहि वस्त्र हँसे सुनो बनवारी॥ ९
घर चलो न तुमको त्याग सकूँ, तुमसे मन मेरा मथन भया।१०
याचना सुनी बलराम देख, गोपों को निरखि कहैं बचन नया॥११
हैं आधिहरन घर तेरा पथिक, विश्राम देत फिर आवैंगे। १२
कह मधुर बचन चल दिये, भेंट दै नगर लोग सुख पावैंगे॥ १३

दो०—निरखि कृष्ण क्षोभित हृदै, नारी तजैं अपान।
वसन केशबंधन छुटे, हिये मिलीं भगवान॥ १४

छ०—पुरजन से पूछते धनुष थान, जा इन्द्र धनुष सम लख्यो हरी।१५
पुरुषों से रक्षित पूजित भी, रोकते उठायो झट पकरी॥ १६
बायें कर से छन में तोड़ा, ज्यों हाथी ऊख को सभी लखैं। १७
छागया दशौदिशि गगन शब्द,सुनि कंस विकल निजमनमें झखै॥१८
अनुचर क्रोधित पकड़न दौड़े, बांधो मारो यों ललकारा। १९
लखि दुष्टों को श्रीराम कृष्ण, लै धनुषखंड सबको मारा॥ २०
सब सेन मार तहँ से चलिभे, जा घूम नगर देखा सारा। २१
पुरबासी अद्भुत बल निहार, लखि तेज रूप गुनै अवतारा॥ २२

दो०—विचरत साँझ भई जबै, निज थल आये श्याम। २३
गोपी कृष्ण वियोग में, कह्यो भयो इह धाम॥

छ०—लखि पुरुष अभूषन तन शोभा, जगलक्ष्मी हरितनमें निवसी।२४

पद पखारि भोजन कर सोये, लख गये कंस की चाल नसी ॥ २५
सुन धनुषभंग बध सेन कंस, श्रीराम कृष्ण करतूत भली । २६
डर से सोया नहिं दुष्टमती, लखै मृत्यु चिह्न सब भाँति छली ॥ २७
शिर धड़ में नहीं छाया में लखै, दो चंद्र दीप रवि देख पड़े ।२८
छाया में छिद्र नहिं प्राण सुनै, नहिं पैर स्वर्ण के बृत्त खड़े ॥ २६
सपने में लिपटैं प्रेत, गधा पर चढ़ा जहर बहु पान करै ।
गल लाल फूल की माल, तैल तन लगा दिगम्बरबेष धरै ॥ ३०
सोते जागत में अशुभ देख, मरने से डरै नहिं नींद परी । ३१
गइ रात सूर्य निकला ज्योंहीं, तैयारी मल्ललीला की करी ॥ ३२

दो०—पुरुष रंग अर्चन करैं, बजैं नगारे ढोल ।
मंच सजाये विविधि विधि, ध्वज पताक अनमोल ॥३३

छ०—द्विज क्षत्री जन पुरवासी भूप, निज निज आसनपर बैठ गये । ३४
नृप आसन पै मंत्रीले कंस, बैठा है प्राण हिय विकल भये ॥ ३५
दें मल्ल ताल उत ढोल बजैं, गुरु सहित मल्ल सब बैठे हैं । ३६
चाणूर कूट तोशल मुष्टिक, शल मुखिया ये तन ऐंठे हैं ॥ ३७

दो०—नन्दादिक ब्रज गोप सब, नृप की आज्ञा पाय ।
भेंट दीन एक मंच पर, चुप से बैठे आय ॥ ३८

भजन—दै चन्दन कूबरी भव से तरी ॥ टेक ॥
बुद्धि कूबरी चित चन्दन है, कलि कंसहि दै नर्क परी ।
जो कहुँ चेति जाय अबहूँ तो, सुधर जाय सबही बिगरी ॥ दै०
सुन्दरि सीख हमारि न मनिहौ, जन्मि जन्मि जग मरत फिरी ।
माधवराम श्याम संमुख ह्वै, दे चित चन्दन मिलैं हरी ॥ दै०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।

—:❀:—

श्लोक–त्रिचत्वारिंशके हत्वा गजेन्द्रं रामकृष्णयोः ।
रंगप्रवेशसौभाग्यं चाणूरेण च भाषणम् ॥

दो०–तेंतालिस अध्याय में, कुबलय गज को मारि ।
रामकृष्ण चाणूर की, बातैं रंग मँझारि ॥

श्रीशुकउ०छं०–श्रीरामकृष्ण मज्जनकरिकै, सुनिमल्लवाद्य सजि तहँआये ।१
द्वारे पै कुबलयापीड़ निरखि, हथवाल से कहते हर्षाये ॥ २
कस कमर कृष्ण केशहु सम्हार, गंभीरनाद कर बात कही । ३
हथवाल राह दे देर न कर, नहिं हाथी तुमको हनूँ सही ॥ ४
वह सुन गुस्सा हो हाथी को, ज्यों काल कृष्ण पर छोड़दिया ।५
हाथी ने दौड़ हरिको पकड़ा, चट छूट मार पद छिपन लिया ॥ ६
नहिं देख क्रुद्ध चट सूँघ गहा, बलकरि झट सूंड़ से हरि निकले ।७
पच्चीसधनुष गहि पूँछ खींच, ज्यों गरुड़ सर्प गहि पट पिछले ॥ ८

दो०–दहने बायें चक्र दै, ज्यों बछरा सँग बाल ।९
मुख में थप्पड़ मारि जनु, छुआत भागे लाल ॥ १०

कुंडल-भाव–मदहि कुबलयापीड़ गज, कलियुग कंस दुआर ।
राम कृष्ण मग रोकतो, अहंकार हथवार ॥
अहँकार हथवार, न भीतर आवहिं देवै ।
पटकि ताहि दोउ दन्त, कृष्ण झट कर में लेवैं ॥
माधवराम सुदन्त दोउ, करनी जासों सबहिं हद ।
बिगड़ी रहै सदैव, दबाये जबलों गज मद ॥

हरि खेल में गिरि झट सिकिलि उठे, महि गिरा समझ गज दंत हने।११
खाली गा दांव गज महाकुपित, हरि पै धायो हथवाल तने॥१२
आते गज लखि मधुसूदन प्रभु, चट पकड़ सूंड़ महिपै पटका।१३
हाथी हथवाल दोउ मारे, गज दबा दंत लिये दै झटका॥ १४
मृत हाथी तजि हरि दंत कंध, कुछ स्वेत रक्तविंदहु आजैं। १५
सँग गोप राम श्रीनंदलाल, गजदंत गहे रँग में राजैं॥ १६

दो०—मल्ल बज्र नरबर नरहिं, नारिहु काम सरूप।
गोपहु निज जन दुष्ट नृप, देखहिं शिक्षक रूप॥
मौतहु कंस पिता सुवन, योगी तत्व विलास।
वृष्णिवंश कहँ देव निज, रँग महँ दोऊ भास॥ १७

छ०—गज मरा निरखि दोउ दुर्जय लखि, द्वै वीर कंस मन घबरायो।१८
सोहैं अद्भुतसरूप दोऊ, नटबर छवि लखि सब सुख पायो॥ १९
सब उत्तमपुरुष निहारि, खुशी मुख नैनों से छवि पान करैं। २०
नैनों से पिये जनु चाटैं जीभ, से सूँघ नाक भुज अंक भरैं॥ २१
सब कहैं परस्पर तस देखा, जस सुना रूप गुण में आगर। २२
ये हरि नारायण साक्षात्, वसुदेवभवन प्रगटे आकर॥ २३
देवकी में जन्मे गे गोकुल, छिप नन्दराय घर दिन टारे। २४
पूतना तृणावर्तहु केशी, धेनुक वधि यमलार्जुन तारे॥ २५

दो०—गो गोपाल दवाग्नि से, राखि इन्द्र हरि मान।
कालीमर्दन काढ़ि अहि, शोभित ब्रज भगवान॥ २६

छ०—गोबर्द्धन सात दिवसधारा, जल वायुसे गोकुल राखिलियो २७
मुख प्रसन्न गोपी हरिका लख, सुखपाय तापसब त्यागिदियो॥२८
यदुवंश विदित होइहै इनसे, यश लक्ष्मी रक्षित हो पावै। २९
यह कमलनैन बलराम भाय, बधि प्रलंब आदिक हर्षावै॥ ३०

श्रीः

श्लो०—वसुदेवसुतंदेवं कंसचाणूरमर्दनम् ।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

श्रीकृष्णाय नमः ।

कंस-वध ।

दो०—मारि मल्ल कंसहिं बध्यो, भक्तन सुखदातार ।
मुरारिपद बंदन करौ, माधव जन रखवार ॥

मरचेंट प्रेस, कानपुर ।

सब बात करैं यों बजैं ढोल, चाणूर आय दोऊ से कहै । ३१
हे नन्दपुत्र हरि राम सुनो, नृप कुस्ती तुम्हरी लखा चहै ॥ ३२
नृप प्रिय कीन्हे से प्रजा सुखी, उलटा करके दुख आवैं हैं । ३३
गोचारन में सब गोप खुशी, करि मल्लयुद्ध सुख पावैं हैं ॥ ३४
दो०—हम तुम नृप को खुश करैं, सर्वजीवमय भूप । ३५
युद्ध इष्ट हरि हँसि कहैं, बचन समय अनुरूप ॥ ३६
छ०—तुम प्रजा अहौ बनबासी[1] हम, प्रिय करैं दया मेरी जानो ।३७
समबल से बालक हम लड़िहैं, तुम मल्ल अधर्म नहीं ठानो ॥ ३८
चाणूर उ०—नहिं बाल किशोर वीर दोऊ, गज हजार बल हाथी मारा ३९
अन्याय नहीं तुम मुझसे लड़ो, मुष्टिक बलराम से निस्तारा ॥ ४०
भजन—अद्भुत रूप दिखायो—सभा महँ ॥ टेक ॥
मल्ल बज्र सम देखहिं प्रभु को, नरबर सब नर पायो—सभा महँ०
नारी कामदेव छवि निरखैं, गोपन सखा बनायो—सभा महँ०
दुष्ट भूप निज शिक्षक जानै, कंस मौत डरवायो—सभा महँ०
नंद पुत्रगुनि हिय हर्षित हैं, योगिन तत्व बतायो—सभा महँ०
वृष्णिवंश पर देव विचारैं, जो जस तैस लखायो—सभा महँ०
माधवराम श्याम युग जोड़ी, निज प्रभु लखि सुख छायो—सभा०
इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—चतुश्चत्वारिंशके तु मल्लकंसादिमर्दनम् ।
कंसयोषित्समाश्वासस्ताभ्यां पित्रोश्च दर्शनम् ॥

[1] जलवासी विष्णु ।

दो०—चौवालिस अध्याय में, मल्ल कंस सब मारि।
मामी को समुझाइ प्रभु, मा पितु मिले मुरारि॥

श्रीशुकउ०छं०—चाणूरसेभिड़िगे मधुसूदन,निश्चयलखि मुष्टिकसे बलराम १
हाथों से हाथ पग पग से बांधि, खींचते परस्पर चहैं नाम॥ २
बांधैं पंजे से पंजा जानु, जानू से, शिर शिर में मारैं। ३
घूमना फेंकना लिपट पटक, आगे पीछे बंधन धारैं॥ ४
बैठे से उठाना बैठाना, झट खींच परस्पर जीतन हित। ५
बलअबलयुद्ध अबला निहारि, सब दया धरैं कह कोमलचित॥ ६
अन्याय अधर्म नृपति करते, बल अबल युद्ध का ठाना ढंग। ७
गिरिबज्र सार ये मल्ल कहां, कहं बालक दोउ सुकुमार हैं अंग॥८

दो०—धर्म पलटि जैहैं अवशि, यह समाज को ठीक।
होय अधर्म जहां सखी, बैठब तहां न नीक॥ ९

छं०—नहिं सभा में जावै बुद्धिमान, बिन कहे कहेहू पाप लगे १०
अरि संमुख हरिमुख लखो सेत,जिमिकमलकोश जलबिंदु टँगे ११
बलराम का मुख मुष्टिक संमुख, दृगलाल हास्ययुत क्रोध भरो।१२
बड़भाग गोपियों के निरखैं, श्रीराम कृष्ण शृङ्गार खरो॥
बलदेव सहित गोचारन कर, बंशी बजाय बहु खेल करैं।
लक्ष्मीसे पूजित चरणकमल, पूजन करि निजहियमाहिं धरैं॥ १३
गोपियां कौन तप कियो सखी, सुंदर सिधियुक्त रूप देखैं।
जो दुर्लभ दुष्टजनों को है, यश लक्ष्मी धाम जाहि लेखैं॥ १४

दो०—दोहनादि गृह काज करि, गावहिं प्रिय हरिगान।
गद्गद आँसू नैन में, धन्य लगीं भगवान॥ १५

छं०—गोचारन में प्रभु जांय प्रात, जब सांझ समय गृह आवत हैं।
बंशी बजाय मुख दयायुक्त, दिखराय हर्ष बरषावत हैं॥ १६

नारियों की ऐसी बातैं सुनि, अरि मारन की इच्छा धारी। १७
भयभरी पुत्र के प्रेम सनी, बातैं उत पिता ताप भारी॥ १८
बहु युद्ध रीति चाणूर हरी, बल मुष्टिक लड़ि शोभा पावै। १९
हरि दाबैं ज्यों चाणूर चूर ह्वै, निज दिल में शरमा जावै॥ २०
जिमि बज्र वेग भरि क्रोध उछल, मुष्ठी से हिय घूँसा मारा। २१
नहिं हिले माल हत हाथी ज्यों, गहि हाथ घुमायो अरिहारा॥२२

दो०—महि पटक्यो चट कृष्णजी, मर्‌यो दुष्ट गतप्रान।
केश पाद कर बिखरिगे, सुरपति ध्वजा समान॥ २३

छ०—बलरामके मुष्टिक मुष्ठिहनी, बलरामखैं चिमुख थप्पड़ दीन २४
थहराय रक्त मुख से उगलै, गिरि मरा वायु से जिमि तरु छीन २५
बायें कर से बलराम कूट को, खेलहि में चट पट मारा। २६
श्रीकृष्ण शलहिं तोशलहिं मारि, मल्लों को रंग में ललकारा॥२७
चाणूर कूट मुष्टिक तोशल, शल मरते ही सब मल्ल भगे। २८
साथी गोपों को खींच हरी, बज वाद्य खेल दोउ करैं लगे॥ २९
श्रीराम कृष्ण का खेल निरखि, सब खुशी कंस बिन कहँ भल है ३०
मरे मल्ल देखि रोकैं बाजा, कह कंस बचन हिय हलचल है॥ ३१

दो०—खोटे दोउ वसुदेवसुत, ह्यां से देहु निकार।
धन गोपन को लेहु हरि, बांधहु नन्द गवाँर॥ ३२

छ०—दुर्मति वसुदेवहिं शीघ्र हनौ, पितु उग्रसेन परहितकारी।३३
बकवाद कंस की सुनि उछले, चट मंच चढ़ गये बनवारी॥ ३४
आवत लखि मृत्युरूप हरि को, तरवार ढाल गहि वीर खड़ा। ३५
पैंतड़ा बदलते दायें बाम, ज्यों गरुड़ सर्प हरि अरि पकड़ा॥ ३६
धर चोटी मुकुट गिरा मचान से, रङ्गभूमि में पटक दिया।
त्रैलोक्यभार धरि स्वबशहरी, छातीपै कूदि चट प्रान लिया॥३७

ज्यों मृत हाथी को सिंह पकड़, चुटिया गहि कंस कढ़ीलन की।
हा हा करते अरिपक्ष के नर, गहे मातु केश की चुकती दी ॥३८
हरदम उद्विग्न बुद्धि से वह, खाते पीते चलते फिरते।
कृष्णाही लखै भयो कृष्ण रूप, दुर्लभ मुनि गति सन्मुख मरते॥३६

दो०—आठ भ्रात धाये कुपित, कंक आदि न्यग्रोध।
बदला भाई का चहैं, हिये न जिनके बोध ॥४०

छ०—बलराम लखे आये तयार, ज्यों सिंह पशू परिघा से हने।४१
दुन्दुभी बजै नाचैं देवी, बिधि स्तुति बर्षहिं पुष्प घने ॥ ४२
तिनकी नारीं पति मरे दुखी, शिर पीट रुदन बहु करती हैं।४३
रण सेज पै सोये पती परसि, रोदन करि हिय दुख भरती हैं॥ ४४
धर्मज्ञ नाथ प्रिय दायाधर, सहपुत्र मरीं तुव मरने से। ४५
नहिं सोहै तुम बिन पुरी नाथ, हमरी नाईं दुख भरने से ॥ ४६
अपराधरहित जीवों से बैर करि, भूत द्रोह को सुख पावै। ४७
हरिपालक घालकहैं सबके, अपमान किये तेहि दुख छावै॥ ४८

श्रीशुकउ०दो०—राजनारि समुझायहरि, मृतकक्रिया करवाय।४६
मातु पिता बंधन हरे, चरणन शीश नवाय ॥ ५०

दो०—मातु देवकी जगपति, लखि वसुदेव निहाल।
गोद लिये पद नमत दोउ, लपटाये हिय बाल ॥

कुंड०—मल्ल पांच चाणूर सब, पंचविषय लो मानि।
काम क्रोध कपटहु सही, लोभ मोह पहचानि ॥
लोभ मोह पहचानि, तहां चाणूर काम है।
मुष्टिक मारत क्रोध, कपट को कूट नाम है ॥
माधोराम करी विजय, शल लोभहिं कियो हल्ल।
तोशल मोहहिं मारिकै, भगा दिये सब मल्ल ॥

कंस कली ऐंठो फिरै, इन मल्लन के जोर।
लड़िकै शीघ्र सेरायगे, मिलतै नंदकिशोर॥
मिलतै नन्दकिशोर, मरे औरहु सब भागे।
कूदि कै चढ़े मचान, कंस के पीछे लागे॥
माधवराम विजय करी, चंद्रवंश अवतंस।
कंकादिक माया पटल, मार्‍यो कलियुग कंस॥

सवै०—हे नरनारि सुनो विनती, तुम नन्द यशोदा बनो मनलाई।
नाहिं तो गोपहि गोपी बनो, हरि रक्षक हों नितही सुखदाई॥
नन्द या गोप बनावहु जीव, करौ बुधि गोपी यशोमति माई।
माधवराम औ श्याम सदा, सुत मित्र बनाय खेलावहु भाई॥

कुंड०—झपटि मंच पै चढ़ि गये, देखि कंस घबरान।
लगो पैंतरा फिरन सो, ताके हैं भगवान॥
ताके हैं भगवान, भूमि झट चुटिया पकरी।
पटकि भूमि पै दिया, यथा बालक लघु चकरी॥
माधवराम विजय लही, मिले भाय दोऊ लपटि।
कंस भाय आठौ हने, बलरामहु चट पट झपटि॥

भजन—बुरा फल देति सदा अनरीति॥ टेक
कीन्हि अनीति कंस रक्षा हित, त्यागि धर्म शुभ नीति।
मरे मल्ल हाथी भाई सब, अपनी भई फजीति॥ बुरा०
जो कोउ निर्भय भयो चहै जग, सिख लेवै यह रीति।
रक्षा करै जगतजीवनकी, करै नाहिं भय भीति॥ बुरा०
यह संसार माहिं जो अपनी, हरदम चाहै जीति।
छोटे बड़े बरोबर वारे, सब में राखै प्रीति॥ बुरा०

जो परलोक लोक जय चाहो, सुनिये मेरे मीत।
माधवराम सकल भ्रम तजि कै, गाव कृष्ण गुण गीत ॥ बुरा०

इतिश्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचचत्वारिंशोऽध्यायः।

श्लोक—पंचचत्वारिंशकेऽथ पितृनन्दादिसांत्वनम्।
उग्रसेनाभिषेकश्च गुरौवासात्पुरागमः॥

दो०—पैंतालिस अध्याय में, नन्दपितहिं समुझाइ।
उग्रसेन को राज दै, गुरु सों विद्या पाइ॥

छ०—पितु परमपुरुष हरिको मानैं, लखिहरि निजमाया फैलाई।१
बलराम सहित हरि बचन कहैं, करिप्रणाम सादर पितु माई॥ २
उत्सुक हमेश हम दोनों से, नहिं बालपना के सुख पाये। ३
हम भागहीन तुव ढिग न बसे, पितुघर लालित सुत सुखछाये॥ ४
जिस पितु से जनित पालित यह तन, शतवर्ष सेइ नर नहिं उद्धार। ५
सुत धन तन से मां पितु न सेइ, मर अपन मांस खावै निरधार॥ ६
पितु बृद्ध मातु तियसती पुत्र, शिशु गुरु द्विज शरणागत आवै।
ह्वै समर्थ इनको नहिं पालै, जीवतही मृतक बहुदुख पावै॥ ७

दो०—नहिं समर्थ हम व्याकुल, कंसहि से भयभीत।
बिन पूजे माता पितहिं, बृथा गये दिन बीत॥ ८

छ०—हे मातु पिता अपराधक्षमहु, सेये न तुम्हैं तुम दुख पाये।९
श्रीशुक उ०—माया नरहरि के बैन सुने, मोहित गोदी लै सुख छाये॥ १०
आंसू की धार से सींचि, पुत्रस्नेह से मोहित मौन गहे। ११
समुझाय देवकीसुत मां पितु, नृप उग्रसेन ही करन चहे॥ १२

ह्वै महाराज आज्ञा दो हमैं, न ययातिशाप से नृपसाजा । १३
मुझ सेवक को सेवा में देख, सुर देहैं भेंट क्या ये राजा ॥ १४
निज जातिभाइ यदुवृष्णिदास, अहींदिक भयसे भगे रहे । १५
आदर से बुला विदेशों से, गृह धन दे राखा सगे रहे ॥ १५

दो०—राम कृष्ण भुजपालित, सकल मनोरथ पाय ।
निज निज गृह में सब बसे, हियमें अति हरषाय ॥ १६

छ०—नित दया हास्ययुत हरिमुख लखि, प्रतिदिन प्रसन्न सब रहते हैं १७
पुनि नन्दसे मिलि दोउ रामकृष्ण, समझाय बचन यों कहते हैं१८

छ०—ह्वै पिता हमैं तुम दोउ पालो, निजपुत्र से बढ़कर प्यार किया ।२१
सुतसम पालै सोइ पिता मातु, असमर्थ बंधु जब त्याग दिया ॥२२
ब्रज जाहु आप हम दुखित सबहिं, देखन पीछे से आवैंगे ।२३
समझाय नन्द को धन बहु दै, भेजा समझे दुख पावैंगे ॥ २४
मिलि दोउ प्रेमसे विकलनन्द, बह नैन गोपसँग ब्रजहि चले ।२५
वसुदेव पुरोहित बोलि, यज्ञ उपवीत दोउन को करत भले ॥ २६
गो धन रत्नादि दक्षिणा दे, पूजन करि द्विज बहु सन्माने ।२७
जो कृष्णजन्म में गौ दीनी, सब दै विप्रन नृप हर्षाने ॥ २८

दो०—लहि द्विजपन संस्कारयुत, गुरु सों दृढ़ब्रत पाय । २६
जगतपती विद्यानिधी, नर तन ज्ञान छिपाय ॥ ३०

छ०—उज्जैनपुरी में सांदीपन, गुरु पास वास करने को गये ।३१
इन्द्रीजित ह्वै गुरु सेवा करि, आदर दै विद्या पढ़त भये ॥ ३२

श्लोक—यज्ञोपवीतंद्विजधर्मकर्मणां,
नेपथ्यसद्धर्म धृतं द्विजातिभिः ।
मूलं हि संध्यामुनिदेवपितृणां,
सुतर्पणं पाठजपौ श्रुतेस्तथा ॥

कुंड०—डारि जनेऊ झट गरे, बनिगे ब्राह्मन पूत।
जाति कहत नहिं सांच निज, लड़िबे में मज़बूत[1] ॥
लड़िबे में मज़बूत, धूर्त ठगते सब दुनियां।
सुधि भूले परलोक, बने पंडित बड़गुनियां ॥
माधवराम सिखावत, सुनिलो संशय टारि।
भजन किये तरिहौ सुजन, नहीं जनेऊ डारि ॥
चलो जनेऊ बंश जेहि, सो पहिरै मन लाय।
धर्म कर्म अपनो करै, रहि है सो सुख पाय ॥
रहिहै सो सुख पाय, वैश्य क्षत्री द्विज सुनिये।
गायत्री जपि रोज, धर्म अपनो सच गुनिये ॥
माधौराम सुधार लो, करतब चाहो जो भलो।
फिरि पछितैहौ हाथ मलि, समय जात सबही चलो ॥

छ०—जिनकी सतवृत्तिसे गुरु प्रसन्न, सब अङ्गों युत वेदों को दिया। ३३
धनु धर्म नीति विद्या रहस्य, युत पढ़ाय कै तैयार किया ॥ ३४
सब शास्त्रप्रवर्तक मनुज श्रेष्ठ, हरि पढ़ली एकहि बार कहे। ३५
चौसठ दिन में चौसठों अंग, चौदह विद्या के अंग गहे ॥ ३६

चौसठ कला—कवित्त।

साठिचार विद्याअङ्ग गीत[1] वाद्य[2] नृत्य[3] नाटय[4],
लिखब[5] कटाव फूल[6] रचना बनाइबो[7]।
पुष्पहू विरचिबो[8] बसनदंत अङ्गराग[9],
मणिभूमिकर्मरचि[10] सेजहू बिछाइबो[11] ॥
जलवाद्य[12] चित्रयोग[13] माला गूँथिबेकी विधि[14],
मुकुट रचन[15] औ पोशाकहू सजाइबो[16]।

[1] ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः।

कर्णफूल रचन[१७] सुगन्धयुक्ति[१८] इंद्रजाल[२०],
भूषणसंयोग[१९] करि कौतुक दिखाइबो[२१] ॥
रचब रसोई[२३] हस्तलाघव[२२] रसाइन विधि[२४],
दरजी को कर्म[२५] अरु चकरी नचाइबो[२६] ।
वीणा आदि वाद्यहू बजाइबो[२७] पहेली गाथ[२८],
प्रतिमाल[२९] वानीकर्म[३०] पुस्तक सुनाइबो[३१] ॥
नाटक[३२] समस्यापूर्ति[३३] वाणवेत्र वेधविद्या[३४],
तर्कशास्त्र[३५] तत्त्तण❀[३६] वाद्यविद्यहू बनाइबो[३७] ।
रत्न की परीक्षा[३८] धातुरूप्य[३९] मणिरागज्ञान[४०],
जानब खधानि[४१] बृक्षआयु पहिचानिबो[४२] ॥
पशुपक्षि युद्धविधि[४३] शुकसारिका प्रलाप[४४],
शत्रु उत्सादन[४५] केश झारन सुधारिबो[४६] ।
अक्षर विधान[४७] अरु म्लेच्छित कुतर्क कल्प[४८],
देश भाषा ज्ञान[४९] पुष्प शकट सवांरिबो[५०] ॥
यंत्र मातृ[५१] विधि संबाचन[५२] मानसीहू काव्य[५३],
अभिधान कोण[५४] छन्दज्ञानहू विचारिबो[५५] ।
क्रिया के विकल्प[५६] छल बल योग[५७] वस्त्र गोप[५८],
द्यूत[५९] आकर्ष क्रीड़ा[६०] बालक्रीड़हु सारिबो[६१] ॥
दो०—वैनायिक[६२] वैतालिकी[६३], अरु वैजयिकी जान[६४] ।
चौदह विद्या की कला, चौंसठ यही प्रमान ॥ ३६

छ०—गुरु से गुरु दक्षिणा हेत कहा, वह नर दुर्लभ महिमा लखकर।
तियकी सम्मति से डूबो पुत्र, सागर से मँगवाया हिय धर॥ ३७
हां करि हरि रथ पै प्रभास गे, लखि सिंधु ईश निज भेट दई। ३८

❀ शान चढ़ाना।

भगवान कहैं गुरुपुत्र देहु, जो तुम्हरी लहरैं बोरि लई ॥ ३९
समुद्र उ०—हम नहीं दैत्य रह पांचजन्य, वह शंख रूप चह लाया है । ४०
जल प्रवेश कर उसको मारा, बहु ढूँढा पुत्र न पाया है ॥ ४१
उस अंग से पैदा शंख लियो, रथ चढ़ि यमराजपुरी आये । ४२
कियो शंख शब्द सुनि धर्मराज, श्रीरामहरी मिलिबे धाये ॥ ४३

दो०—पूजन करि दोउभाय की, सब हियबासी जान ।
लीला नरतन मोहि प्रभु, आज्ञा देहु सुजान ॥ ४४

श्रीभगवानु०छ०—निज कर्म बंधो गुरुसुत लाये, मेरी आज्ञा से लेआवो । ४५
हांकरि चट लाये गुरुसुत यम, लै दियो गुरुहिं फिर फरमावो ॥ ४६
गुरुरुवाच—करिदिया काम मेरा पूरा, तुमसम चेला मिले क्या कमती । ४७
घर जाहु अटल कीरति विद्या, होवै तुम्हार रह शुद्ध मती ॥ ४८
गुरु आज्ञा पाय रथचढिआये, निजपुर हरि शंख बजायो है । ४९
लखि राम कृष्ण सब प्रजाखुशी, निर्धनी गयो धन पायो है ॥ ५०

कुंड०—राम कृष्ण दो पुत्र हैं, तत् सत् ज्ञान विचार ।
पिता आत्म वसुदेव हैं, मां देवकि बुधिधार ॥
मां देवकि बुधिधार, मारि कलि कंस छुड़ायो ।
संसकार दृढमथन, पिता माता करवायो ॥
माधोराम गुरू कियो, सांदीपिन जेहि नाम ।
दीप्ति दिखावै आत्म की, सो है आत्माराम ॥

सवैया—पुत्र हरो गुरु को भवसिंधु, सो आतम आनँद नाम जो पायो ।
ज्ञान कह्यो बहु ग्रंथन में, सतब्रह्म सोई हरिकृष्ण कहायो ॥
रामहु कृष्ण हैं एक सरूप, सो ज्ञान विचार को रूप बतायो ।
माधवराम सुदीपित कांति, पिता वसुदेव मां देवकी गायो ॥

ज्ञान औ भक्ति में भेद नहीं, नर बीचके भेद लगावत भारी।
मारग देखत में दुइ हैं, मिलि अंत में एकहि धाम मँझारी॥
शुद्ध हियेते करौ चहै ज्ञान, तो आवतिभक्ति सो ज्ञान सुधारी।
माधवराम हैं श्याम रँगे, प्रभु ज्ञान विचार के रूपहु धारी॥

भजन–जगत में गुरु से नैया पार॥ टेक॥
सब नाते जग में बंधनहित, गुरुनाता सच धार॥ जगत०
सांच गुरू करै समझ बूझिकै, गड़बड़ बोरनहार॥ जगत०
विद्या ज्ञान मंत्र युक्ती लै, सेवै सत व्यवहार॥ जगत०
गुरु अपमान नर्क दुखदायक, रखियो हिये विचार॥ जगत०
माधवराम गुरु विश्वराममय, समझै से निरधार॥ जगत०

इतिश्रीमद्भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे पंचचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः।

श्लोक–षट्चत्वारिंशके घोषमुद्धवं प्रेष्य तद्गिरा।
यशोदानंदयोश्चक्रे कृष्णः शोकापनोदनम्॥

दो०–षट्चालिस अध्याय में, उद्धव ब्रजहिं पयान।
मातु पिता को शोक हरि, गोपिन सिखयो ज्ञान॥

श्रीशुकउ०–वृष्णियों में अतिउत्तम मंत्री, हरिके अति प्यारे सांच सखा
हैं शिष्य बृहस्पति बुद्धि श्रेष्ठ, उद्धव उत्सव से कृष्ण लखा॥१
एकांत भक्त प्यारे का हाथ, हरि संदेश निज भेजन को धरो।२
ब्रज जाहु पिता मातहि प्रसन्न करि, गोपि वियोगी दुःख हरो॥३

मेरे में प्राण मन हैं उनके, गृह काज लोक धर्महु त्यागें। ४
प्रियसेप्रिय मेरे वियोग में, तिय विरह विकल मन अनुरागें ॥५
मेरे आने की आश किये, किसही विधि गोपी रखतीं प्रान।
जा समझावो संदेश कहो, दुख दूर करो कहते भगवान ॥ ६
श्रीशुक उ० दो०—स्वामी को संदेश लै, गोकुल रथ चढ़ि जात।७
सूर्य अस्त पै पहुंचिगे, रज सों रथ न लखात ॥ ८

छ०—वासित गौवों हित युद्धकरैं, बृषशब्दसेपूरित ब्रज नितही।६
बछरा इत उत बहु कूदि रहे, गो दोहन बंशी नाद सही ॥ १०
गुन राम कृष्ण के गान करैं, गोपी गोपों से ब्रज राजै। ११
अग्नी रवि द्विज गो अतिथि देव, सब पूजैं धूप दीप साजैं॥ १२
फूले बन पक्षी भ्रमर शब्द, जलपक्षी कमल अमल सोहैं। १३
आये उद्धव लखि कृष्ण मित्र, मिले नन्द पूजि हरिसे मोहैं॥ १४
भोजन कराय पौढ़ाय पलँग, पैरहू दाबि नँदजी कहते। १५
हे प्यारे सुखी वसुदेव मित्र, निज पुत्र कुटुम्ब सहित रहते ॥ १६
दो०—पापी कंस मरो भले, असुर सकल भे नाश।
धर्मशील यदुवंश को, नितही चहैं विनाश ॥ १७
छ०—निज मातु सखा हमैं गौ ब्रज को, निज नाथ बृन्दाबन यादकरैं १८
गोविंद स्वजन देखन ऐहैं, सुस्मित मुख लखि ब्रज दुःख टरैं ॥१६
दावाग्नि बात बर्षा बृष अहि, मृत्यू से राखि हरि सुख दीने।२०
लीला बोलनि मृदुहँसनिसुमिरि,हों शिथिल कर्मगृह सबछीने २१
यमुना गिरि ब्रज पद अंकित लखि, क्रीड़ाथल लखि तन्मय मन है। २२
हम मानैं राम कृष्ण ईश्वर, सुर काज हेत आये धनि है॥ २३
दश हजार हाथी बली कंस, मल्लहु पशु सिंह तुल्य मारे। २४

धनु तीन ताल को लकड़ी सम, इक हाथ से तोर्‍यो गिरि धारे २५
धेनुक प्रलंब बक तृणावर्त, सुर असुर अजित हरि दैत्य हने। २६
श्रीशुकउ०—करि याद कृष्णमें मति लै ह्वै, उत्कंठहियेअति नंदघने २७

दो०—वर्णित पुत्रचरित सकल, सुनति यशोदा माय।
बहत नैन दूधहु चुअत, रह्यो शोक हिय छाय॥ २८

छ०—दोनों की प्रीति असि हरिमें लखि, उद्धव अतिहर्षित वचनकहैं २६
उद्धव उ०—धनधन्य देहधारी में आप, नारायण में असि बुद्धि रहैं ३०
ये राम कृष्ण जग योनि अहैं, पूरुष प्रधान सब जीव ईश। ३१
जिनमें जन अंत शुद्धचितधरि, तनत्यागि ब्रह्महो बिस्वाबीश ३२
सब की आत्मा नारायण में, कारण मूर्ती में भाव लगा।
कुछ तुम्हैं कृत्य बाकी न रही, हरि पूर्ण महात्मा किया सगा॥३३
झटही आवैंगे ब्रजमें कृष्ण, सात्वतपति पितु मातहिं प्रिय करि ३४
भक्तन दुखदाई कंस मारि, जो कहा तुम्हैं सच सोइ हिय धरि ३५

दो०—महाभाग दुख करहु जनि, देखिहौ कृष्णहि पास।
सबके हियमें हरि बसैं, अग्नि काठ ज्यों भास॥ ३६

छ०—नहिं प्रिय अप्रिय उनके हैं कोई, नहिं ऊँच अधम समअसम कोई ३७
माता न पिता नारी न पुत्र, नहिं निज पराव तनु जन्म सोई ३८
नहिं लगै कर्म सब योनि जन्मि, करि खेल भक्त रक्षा करते।३६
सत रज तम धारैं निर्गुण ह्वै, उत्पति पालन नाशहु धरते॥ ४०

कवित्त—पराभक्तियुक्त बुद्धि सोई है यशोदा मातु,
प्रेम भरो जीव नन्द भक्त को बखानो है।
ऊधो सूधो मित्र ज्ञान कृष्ण को पठायो भयो,
बहु समझायो तिन एकहू न मानो है॥

भरा छवि माधुरी हिये में रोम रोम जाहि,
ताहि ज्ञानचरचा हिये नेक न सुहानो है।
माधोराम आठो याम श्याम में समानो रहै,
वेद विधि विधान भूलि प्रेम प्रण ठानो है ॥ १ ॥

यशोदावाक्य–बालक हमारो कृष्ण होयगो तिहारो ब्रह्म,
अलख तिहारो हमें सम्मुख लखात है।
तुम्हें है निरंजन दृग अंजन लगाये हमें,
तुम्हें मुखहीन हमें छीन दधि खात है ॥
मातु पितु हीन तुम्हें दुइ दुइ माई बाप,
कथन तुम्हार हिये मेरे न समात है।
सूधो जान ऊधो प्यारे कोशहु न बार बार,
माधोराम सामरो हमारो मृदु गात है ॥ २ ॥

कहो हम दोउ पितु मातु कृष्ण के हैं नाहिं,
सोऊ सही तुम्हें अस कहब सुहात है।
वसुदेव देवकी तो बैठे मथुरा में अहैं,
पोथी पढ़ि डारीं नाहिं इतनो लखात है ॥
अक्ष बक्ष बकत कहत यह ज्ञान सुनो,
भोरी जानि हमें भटकाय कै बतात है।
सूधो जान ऊधो प्यारे कोशहु न बार बार,
माधोराम सामरो हमारो मृदु गात है ॥ ३ ॥

छ०–बालक घूमहिं गृह भ्रमत लखैं, मन आत्मा माहिं अहंपन धर । ४१
नहिं सुत तुम्हार भगवान हरी, सबके आत्मा पितु मा ईश्वर ॥ ४२
सब भूत भविष्यत वर्तमान, चर अचर बड़े लघु दीख सुना।
बिन कृष्ण के कोई वस्तु नहीं, परमार्थ से मुनिजन यहीगुना ॥ ४३

दो०—गई रात बतरात सब, नंदहिं ऊधव साथ।
उठि गोपी दधि मथति सब, गावहिं हरिगुनगाथ ॥ ४४

छ०—दीपों की ज्योति मणियों की दमक, कढनी कर्षण हिय माल हलन।
कटि चलन हार कुंडल लटकनि, कांती कपोल कुंकुमआनन ४५
हरिगुणगातीं गोपियों की धुनि, स्वर्गहु जाकर छू लेती है।
दधि मथन शब्द मिलि बहुत मधुर, दुखहरि दिशि मंगल देती है ॥ ४६
रवि उदय नन्दके द्वार देखि, ब्रजबासी कहँ किसका यह रथ। ४७
अक्रूर कंस साधक आयो, लैगयो कृष्ण करि तिह स्वारथ ॥ ४८

दो०—का हमसे पिछली क्रिया, कंस की करिहैं जाय।
अस बतरावैं गोपियां, ऊधव परे दिखाय ॥ ४९

भजन—कोशो हमें न ऊधो, विनती सुनो हमारी।
सुत के विछोह में हम, मरतीं बिनाहि मारी ॥ टेक
सूझी पती को (मेहर को) क्या धौं, मथुरा से ब्रजमें आये।
होतीं वहाँ पै हम जो, तजतीं नहीं मुरारी ॥ कोशो०
बिन बच्छ की हैं गैयां, भावै चहै सो कह लो।
तुम तो पढ़े लिखे हो, बोलो बचन सँभारी ॥ कोशो०
ज्यों पंख बिन पखेरू, पितु नन्द की दशा पर।
दाया करो दुखी हैं, ज्ञानी बनो विचारी ॥ कोशो०
कितना ही ज्ञान बक दो, हमको नहीं है धीरज।
पावों परैं मिलादो, माधव हमैं बिहारी ॥ कोशो०

दादरा—छोर लियोरे तू ने मोरा कन्हैया ॥ टेक
साथ तुम्हारे ज्ञान पढ़ि लीनो, भूलि गयोरे अपन पितु मैया ॥
रथ बैठाय बिगारो छोरा, छोड़ दियो रे अपनि गृह गैया ॥
बालक तो बालक सुधि भूली, रमिगयो रे खेलाड़ी सँग खेलैया ॥

ऊधो एक बार लै आवहु, अपनैहौं रे अपन करि छैया ॥
माधवराम मिलावहु श्यामहिं, ऊधो तुम्हारी रे लैहौं बलैयाँ ॥

इति श्रीमद्भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—सप्तचत्वारिंशकेऽथ कृष्णादेशेन गोपिकाः।
बोधयित्वोद्धवस्तत्वमनुज्ञाप्यागमत्पुरीम् ॥

दो०—सैंतालिस अध्याय में, गोपिन ज्ञान बुझाय ।
चेला ह्वै ऊधव चले, मधुपुर पहुँचे आय ॥

श्रीशुकउ०छ०—हरिके अनुचर गोपी लखतीं, आजानुवाहु नवकमलनैन ।
पीताम्बर हिय बनमाल लसै, मुखकमल मणी कुंडल कहँ बैन ॥१
हँसि मंद कहैं यह शुभ दर्शन, हरि रूप धरे कहँ से ह्यां कौन ।
हरिभक्तसुघर उद्धवको निरखि, उत्सुक सब कहतीं वह धृतमौन २
प्रभु पाती लाये समुझि, नमित ह्वै आसन दै आदर दीना ।
मृदु हास्य मधुरि बातैं दै भेंट, एकांत बैठि प्रश्नहु कीना ॥ ३
यदुपति के पार्षद आये आप, हरिके पठये पितु मातु के हित ४
नहिं याद योग गोब्रज में कौन, बंधूका प्रेम हरैं मुनिबरचित ५

दो०—होति मित्रता और महँ, स्वारथ साधन रीति ।
नारी में नर नेह ज्यों, भ्रमर पुष्प में प्रीति ॥ ६

छ०—गणिका तजती निर्धन नर को, असमर्थ भूपको तज रैयत ।
विद्या पढ़ि गुरु को विद्यार्थी, दछिना लै यजमानहि पंडित ॥७

फल बिना बृक्ष पक्षी छोड़ै, भोजन करि अतिथी हू घर ज्यों।
जर जावै बन तो मृगा तजैं, स्वारथ लै नारी को नर त्यों ॥ ८
गोपियों के तन मन हरि में हैं, हरिजन ऊधो लखि काम तजैं ६
गुणगाय लाज तजि रुदनकरैं, बालकपन गुन सुधि कृष्ण भजैं १०
हरि संग सुमिरि कोइ भ्रमर देखि, यह कृष्णदूत गुनि बचन कहैं।
ऊधव के ऊपर डारि श्याम तन, उपमा दै हिय में उमहैं ॥ ११

गोप्युवाच दो०—कपटी के तुम मित्र हो, भ्रमर छुओ जनि पांय।
सौति हिंये शुभ माल को, चंदन मुखमें लाय ॥

छं०—मधुपति तुमहरि उनहीं पै जाय, सबभांतिसे तिन्हैं प्रसन्नकरो।
यदुसभा में बड़ा विडंबन है, ह्वै हरि के दूत यह रूप धरो ॥ १२
इकबार अधर निज सुधाप्याय, ज्यों पुष्प भ्रमर हमैं तजदीना।
लक्ष्मी किस भांति चरण सेवैं, बस उत्तम यश चितहरिलीना १३
क्या गाते मधुकर मेरे पास, हरि सखियों के सन्मुख गावो।
यह पुराण सुनकर प्रसन्न वे, दे वांछित फल खुश होजावो ॥ १४
पृथ्वी पताल स्वर्गहु में कौन, नारी छलहास्य से नहिं मोहैं।
लक्ष्मी पदरज धरैं क्या हम हैं, उत्तम यश दाया से सोहैं ॥ १५

दो०—धरहु चरण शिर पर लखी, कपटी दूत मुकुंद।
सुतपति तजि सब लोकहू, मिलीं तबहुं छलछंद ॥ १६

छं०—बाली को ब्याध ज्यों बध डाला, स्त्रीजित नारि विरूपकरी।
बलिलेके काक सम बलि बांधा, कारे की प्रीति औकथाबुरी ॥१७
जिसकी लीला सुनि एक बार, बहु लोक धर्म तज देते हैं।
गृह कुटुम छोड़ बनि परमहंस, भिक्षुकी वृत्ति ले लेते हैं ॥ १८
ज्यों बंशीधुनि सुनि कृष्ण बधू, बे समझ मृगी मोही हमसी।

स्पर्श सुमिरिहिय अधिकपीर, कहु और बात का यहीबसी ॥१९
का प्रिय के पठये आये फिर, हो मान्य लेहु बर क्या चहिये।
ले चलिहौ ह्वां क्या काम कौन, जहाँ रमा नारि हियमें रहिये२०

दो०—राजैं हरि मधुपुरी महँ, का सुमिरैं ब्रज काहिं।
का दासिन की सुधि करैं, धरिहैं भुज शिर माहिं ॥२१

श्रीशुक उ० छ०—हरि दर्श आश धारे गोपिन की, बातैं सुनि यों समझावैं।
कह ऊधौ सुनो प्रियहरि सँदेश, सुनिबे हित गोपी हरषावैं ॥२२
उद्धव उ०—तुम पूर्णकाम जगमें पूजित, इसभांति कृष्णमें मनदीना २३
जप होम दान ब्रतसंयम बहु, साधनों न भक्ती अस लीना ॥२४
उत्तम यश भगवतपदमें भक्ति, मुनिदुर्लभ तुम सबने धारी २५
पतिपुत्र स्वजन तन भवन त्यागि, हरि परब्रह्म की अधिकारी २६
सर्वात्मभाव हरि में तुम्हार, हो महाभाग हरि दया हमैं। २७
संदेश कृष्ण के सुनौ सुखद, हम लाये सो सब कहैं तुम्हैं ॥ २८

श्रीभगवा०दो०—सर्वात्मा मुझसे कभी, नहीं वियोग तुम्हार।
गगन पवन जल अग्निमहि, जीवों में जिमिधार ॥२९

छ०—तैसे हम प्राणभूत इन्द्रिय, गुणमन आश्रय हो जगतरचैं।
आत्मा से आत्मारचि पालन, करिनाश सदा मायासे बचैं ॥ ३०
आतमा ज्ञानमय शुद्ध अलग, मिलो जाग्रत स्वप्न सुषुप्ती में ३१
जिस मनसे स्वप्नमें विषय लखै, जागै (ज्ञान भये) मन रख सद्वृत्तीमें ३२
मन बश करना ही वेद योग, तप सांख्य त्याग दम सत्य कहैं।
आखिर में नदी समुद्र मिलैं, जबलौं नहिं पहुंचैं नित्यबहैं ॥ ३३
गोपियो हैं तुमसे अलग जोहम, दृढ़ ध्यान जमैं मन लगने को। ३४
पति दूरभये अतिप्रेम, निकट नहिं, सत्यप्रीति हिय जगने को ३५

सब छोड़ लगाया मुझमें मन, मुझे सुमिरि शीघ्रमिलजावोगी ३६
ब्रजबन में मुझसंग रासकिया, वह याद से मुझको पावोगी ३७

श्रीशुक उ०दो०—प्यारे को संदेश सुनि, ब्रज अबला हरषाय।
ऊधव से कहने लगीं, पाछिल कथा सुनाय॥ ३८

गोप्यऊचुः छ०—बड़भाग असुर युत कंसमरा, यदुवंशिन दुख देनेवाला।
सब काज सधे कहो कुशल अहैं, तुम्हरे अच्युत ब्रज नँदलाला॥ ३९
आवेंगे गदाग्रज हमें मिलन, पुरनारी सो पूजा पाये।४०
क्यों बंधैं न उनमें बड़े चतुर, बानी चितवन से दुलराये॥ ४१
ऊधो गोविंद करैं चरचा, हम ग्वारिनि की पुरनारिनि में। ४२
वो रातें याद करते हैं कभी, जो किया रास ब्रजवारिन में॥
खिले कुमुद कुन्दबनं चन्द्रछटा, घनश्याम घटासी गोपीसँग।
नूपुरबजाय स्वरमधुर गाय, छोड़ा नचाय अब रचे ये ढँग॥ ४३

भजन कजरी—ऊधो अब अच्युत वनि गये ब्रह्म, वो नँदलाला घनश्याम॥टेक॥
लिखि लिखि योग पठावत समझे, हमें न अबला बाम।
असर होय चेलन पर तबहीं, जो गुरु होय ललाम॥ ऊधो०
अपना तो कुबरी सँग रमिगे, हमें योग अभिराम।
लाज न आवत कहत सुनत में, करिकै ऐसो काम॥ ऊधो०
दै दै छाँछ नचायो जिनको, लै लै कन्हुआ नाम।
भये सिद्ध सोइ तुम्हैं पठायो, लिखिकै यह इतमाम॥ ऊधो०
भले सोउ सब साधन करिहैं, निशि दिन आठौ याम।
योगिनि कहां पाइहै कहिये, ऊधो ये भोली मृगचाम॥ ऊधो०
कह्यो जाय हमरीहू इतनी, कान खोलि सुनैं श्याम।
माधव रामसहित मिलैं वेगिहि, नहिं करिहौं बदनाम॥ ऊधो०

दो०—आय यहां घनश्याम हरि, गोपी हिय संताप।
रूप दिखाय जिवाइहैं, बरषि इन्द्र बन ताप ॥ ४४

छ०—क्यों आवैंगे मिलगई राज, हतशत्रु भूपकन्या ब्याहैं। ४५
बनवासिनि हमसों औरसे क्या, वह पूर्णकाम भरि उत्साहैं ॥ ४६
सुखनिराश में पिंगला कहै, हम जानैं हरि में आश धरी। ४७
उत्तम यश हरिको तजै कौन, बिन चाहे लक्ष्मी चरण परी ॥४८
गिरि यमुना बन गौ बंशीधुनि, बलराम सहित हरि हियमेंरमैं ४६
करवाय देहिं सुधि नन्दलाल, बन चरणचिन्ह किमि भूलैंहमैं ५०
गतिललित उदार हास हरिकी, लीला चितवनि मन हरलेवैं।
मीठी बातैं चित हरती हैं, कैसे उनको बिसरा देवैं ॥ ५१

दो०—रमानाथ ब्रजनाथ हरि, दुखनाशक हे नाथ।
विपति सिंधु बोरत ब्रजहिं, गोविंद दे निजहाथ ॥ ५२

श्लोक—विरहसिंधुजलेह्यबलागणः,
परिनिमज्जतिमाधवश्रूयताम्।
मधुररूपतरौयुगवाहुक,
प्लवनदंडधरा स्वजनानव ॥

भजन कजरी—बूडहिं विपतिसिंधु ब्रजवाला, सुनो नँदलाला हे हरी ॥
नौका किरिये रूप रसाला, बल्ली भुज चाला रामा,
होवो ब्रजगोकुल प्रतिपाला, दीनदयाला हे हरी ॥ बूडहिं०
हैं गोपी ग्वाल बिहाला, सहहिं कसाला रामा,
गये ह्वां देकर हमैं दुमाला, कर टाला बाला हे हरी ॥ बूडहिं०
डाला मातु पिता में ताला, जिन दूध से पाला रामा,
जातै कुबरी अंग सँभाला, दीख नहिं भाला हे हरी ॥ बूडहिं०

आय मिलो नँदलाला, ये खुलैं न हाला रामा,
हरि तुम्हें अपनैहैं ब्रजबाला, भूलि कुचाला हे हरी ॥ बूडहिं०
करि माधव सच ख्याला, तजो जंजाला रामा,
ब्रजबसि पहिनो प्रेम की माला, सीख सुनो आला हे हरी ॥बूडहिं०
भजन दादरा—सवति कुबरी ने हरि मोहि लियारे ॥ टेक
हमैं वियोग योग लिखि पठयो, बोयो द्रोह बियारे ॥ सवति०
मोहन मतवारो सौतिहि मिलि, हमको छोड़ दियारे ॥ सवति०
माधव रामश्याम मिलो अबतो, जाय जुड़ाय जियारे ॥ सवति०
श्रीशुकउ०छ०—गत विरह कृष्णके संदेश सुनि, हरिकी आत्मा गोपी मानै ५३
कई मास बसे गोपी दुख हरि, हरि गाय गाय ब्रज सन्मानैं ५४
ऊधो जितने दिन ब्रजमें रहे, प्रभु वार्ता से छन तुल्य गये । ५५
यमुना गोबर्द्धन बन निरखैं, हरि सुमिरन होवैं नित्य नये ॥ ५६
हरि आवेशते गोपिका बिकल, लखि प्रणाम करि उद्धव कहते ५७
तनधारिन में गोपी हैं श्रेष्ठ, सर्वात्मभाव हरि में रहते ॥
भव दुख से डरि मुनि साधु सभी, दिन रात भजैं हरि नहिं पावैं ।
ब्रह्मा ह्वै विप्र जन्म से क्या, बिन प्रेम जन्म योंहीं जावैं ॥ ५८
दो०—बनवारी गोपी कहां, परमात्मा कहँ श्याम ।
बिन समझे भजे अमृत ज्यों, देत कृष्ण विश्राम ॥ ५९
छ०—स्वर्गहु की कमल अंगवारी, देवियों ने यह सुख नहिं पायो ।
किमि और रास में गलबाहीं, दै कृष्ण संग नाच्यो गायो ॥ ६०
सेवैं हम भी गोपी पद रज, ब्रज में लघु लता बृच्छ होवैं ।
तजि लोकधर्म सत हरि में लगीं, जेहि श्रुति ढूँढै यह नित जोवैं ६१
लक्ष्मी विधि पूर्ण काम योगी, धरि ध्यान कृष्ण के पद टोवैं ।
नहिं पावैं, गोपी तन में धारि, सोइपद निज भवबंधन धोवैं ॥६२

गोपियों के पदरज इक किनका, हम बार बार बंदन करते।
जिनका गुण गावैं स्वयं कृष्ण, जगमें सुनि त्रिभुवनजन तरते ६३
श्रीशु०उ०दो०—नंद यशोधा गोपिका, सब सों आज्ञा लीन।
ऊधो रथ चढ़ि चलि भये, मन बहु भयो मलीन ॥ ६४
छ०—ऊधो जाते लखि नंदादिक, वह नैनधार देते भेटैं (सौगादवस्तु) ६५
बिनवैं मनवृत्तिकृष्ण में हो, मुख नाम रटैं तन पद भेटैं (मिलैं) ६६
कर्मन के बस हरि इच्छा से, कहुँ जन्म होय पद प्रेम मिले।६७
यों कहत सुनत ऊधो सबसे, हरि मिलैं हेत मधुपुरी चले ॥ ६८
दो०—हरिहि मिले करि दंडवत, ब्रज को प्रेम बखान।
भेंट दई वसुदेव कहँ, ज्ञान विराग भुलान ॥ ६९

भजन कजरी—केशव कहन योग ब्रज दशा नहीं, चलि आंखिन देखहु आप॥
गौवैं वत्स न प्यावैं अपने, बालक लेहिं न माइ बाप।
हुंकरैं कृष्ण कृष्ण सुनि बानी, सब के कृष्णै कृष्ण प्रलाप॥केशव०
नंद यशोदा प्रेम देखिकै, खुली न हमरी चाप।
हमरो ज्ञान विरागहु भूलो, लखि उन दोउन को संताप॥केशव०
गोपी विरह विकल बहु रोवैं, गावैं दै दै कुबरी छाप।
हमहूं कहीं सुनीं सब बातैं, उनके एक तिहारो जाप ॥केशव०
चलत समय श्रीनंद यशोदा, कीन्हो करुणा सहित कलाप।
ऊधो कह्यो जाय कन्हुआते, बेटा लखो मेरा बिरधाप॥केशव०
बड़ी दया धारे ब्रजबासी, देत न तुम कहँ शाप।
मोहन शरणागत को त्यागब, है तो वेदहु में बड़ पाप॥केशव०
प्रेम थाह नहिं पाई ब्रज की, सब विधि कीनी नाप।
माधवराम श्याम दर्शन दै, राखहु सत्य आपनी थाप॥केशव०
इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

श्लोक—अष्टचत्वारिंशकेऽथ कृष्णः कुब्जामरीरमत् ।
अक्रूरस्य गृहं गत्वा तं गजाह्वयमादिशत् ॥

दो०—अड़तालिस अध्याय महँ, कुबरी कृष्ण विहार ।
अक्रूरहु गृह गमन पुनि, पांडुसुतहु उद्धार ॥

श्रीशुकउ०—सर्वात्मा सबदर्शी भगवत, कुबरीइच्छा पुरवैंको गये १
सबविधि रचना मणिध्वज वितान, गृहशयन शुभग शृङ्गार नये २
हरि आये लखि उठि संभ्रम से, कुबरी सखि युत उपचार किया ।३
आसन बिठाय उद्धवहि पूजि, हरि कहँ सब विधि सतकार दिया ४
लज्जित मिलि कांतभावसे प्रभु, सबही विधि इच्छा पूर्ण करी ।५-६
कहु काल वियोगिनि ताप सह्यो, थी शूर्पनखा अब मिले हरी ॥७
दुर्लभ हरि मुक्ति दानि लहिकै, सुखकाम लियो दुर्भागि रही ।८
हे प्रभो बसौ कुछ काल कहै, नहिं तजौं तुम्हारा संग सही ॥ ९

दो०—ताहि दियो हरि काम बर, गे अक्रूरहु धाम ।
जो जस इच्छा से भजै, तस पुरवत घनश्याम ॥ १०

छ०—दुःसाध्य विष्णु आराधन करि, बरमांगै काम कुबुद्धी नर । ११
बलराम सहित अक्रूर भवन, गये पांडुसुतन के रक्षाकर ॥ १२
निज बंधुरूप नरवर हरि लखि, उठि हर्ष सुमन लखि मिले हरी १३
दंडवत परस्पर आसन दै, पूजन विचित्र बहु भांति करी ॥ १४
पद धोय धरचो शिर चरणामृत, दिव्यांबर माला पहनाये । १५
शिर पद में धरि हाथों से छुअत, अक्रूर नमित स्तुति लाये ॥ १६

धनि भाग भाइयुत मरो कंस, यदुबंश कष्ट सब दूर किया । १७
जग हेतु जगतमय परमपुरुष, निज पर तुमबिन है मृतक जिया १८
दो०—निजकृत जगमहँ प्रविशिहरि, शक्ति सहित बलवान ।
बहु विधि करत कल्पना, सब महँ आप प्रधान ॥ १६
छ०—जेहि विधि जीवों में पंचतत्व, ऐसेही आप स्वतंत्र तहाँ ।२०
रचि पालि हरत गुण तीन शक्ति से, बँधत नहीं धरि ज्ञानमहा ।।२१
देहादि उपाधि न तुममें हैं, इससे न भेद नहिं जन्म अहैं ।
आत्म स्वरूप नहिं बंध मोक्ष, अविवेक न तुममें वेद कहैं ॥ २२
जगके हित वेद पुराण कहा, रुक पखंड से तब रूप धरो । २३
वसुदेवपुत्र भूभार हरन हित, दैत्य नाश करि सुयश करो ॥ २४
घर धन्य मेरो सब जीव रूप, पद जल जग तारै घर आये । २५
को पंडित त्यागै तुम्हैं नाथ, शरणागतपाल सुहृद भाये ॥
दो०—पुरवत जन के काम सब, ऐसे आप कृतज्ञ ।
देत आत्महु भक्त कहँ, जे न भजहिं ते अज्ञ ॥ २६
छ०—योगेश्वर जिन्हैं न पावैं इन्द्र, हरि मेरे ऊपर दया करी ।
सुत नारि गेह धन मोह फँस्यो, काटो माया श्रीकृष्ण हरी ॥ २७
इम विधि से पूजित संस्तुत हरि, हंसि अक्रूरहि मृदुबचन कहे २८
श्रीभगवानु०—तुम गुरु चचा हो पूजनीय, हमबालक पोषणयोगरहे२९
तुम सम सज्जन हैं पूजनीय, स्वारथी देव उपकारी संत । ३०
जल रूप तीर्थ मृदु शिला देव, फलैं देर माहिं साधू तुरंत ॥ ३१
पितु मरे मातु सह दुखित पांडु, सुत चाचा के सँग रहते हैं । ३३
सो आप पांडवन हाल लेन, जावो हस्तिनपुर चहते हैं ॥ ३२
तिनमें धृतराष्ट्र न समदृष्टी, रखते निज सुत के हो गये बश । ३४
है अंध जाहु जचो भल विकार, कहो हमैं आय करैं उनको खुश ३५

दो०—अस कहि हरि अक्रूर सों, सँग ऊधो बलराम।
हरनभार भगवान हैं, आये अपने धाम ॥ ३६

भजन बहार—हरि भक्त मनोरथ करतपूर, नहिं लखैं कर्म पूरहु अधूर
भइ शूर्पणखा कुबरी सरूप, बर काम लह्यो मति मलिन क्रूर ॥ हरि०
राक्षस औ दैत्य नित करहिं बैर, तारैं तिनको करिमान चूर ॥ हरि०
जो तजत मान तेहिं मिलैं धाय, मानी नरसों रहैं बहुत दूर ॥ हरि०
सब व्यंजन भोग लगावैं कृष्ण, सबके पहले खावैं गरूर ॥ हरि०
योगीजन बिरले लहैं ध्यान, माधोराम भक्तजन के हजूर ॥ हरि०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः।

अथ श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः।

श्लोक—ऊनपंचाशत्तमे तु गत्वाऽक्रूरो गजाह्वयम्।
राज्ञः स्वभ्रातृपुत्रेषु बुद्ध्वा वैषम्यमागमत् ॥

दो०—ऊनचास अध्याय में, तहाँ गये अक्रूर।
खबर लाय कह्यो कृष्ण सों, करतब नृप की क्रूर ॥

श्रीशुक०उ०—हस्तिनापूर अक्रूर गये, धृतराष्ट्र भीष्म विदुरहु से मिल।१
दुर्योधन दोणाचार्य कर्ण से, मिले पांडवों से इकदिल ॥ २
बंधुओं से मिलि सब कुशल पूंछि, ह्वां ह्यां की कुशल सब सुनी कही।३
गति जानैं हित कुछ मास रहे, खलसुत के बश हैं भूप सही ॥४
बल तेज पांडवों के शुभ गुण, लखि बैर करैं सुतबश राजा।५
कुंती औ विदुर ने सभी कहे, विष देना आदि कुटिल काजा ॥६

अक्रूर से मिलि कह कुंती दुख, बच्चों का हाल सबही रोकर। ७
मा बाप भाइ क्या याद मेरी, करते हैं दिलमें दाया धर ॥ ८

दो०—शरणपाल जन वत्सल, मेरे हरि बलराम।
कब पलिहैं सुत बुआ के, दुख हरि दै आराम ॥ ९

छ०—भेड़ियों में हरिणी त्यों इनमें, शोचूं कब आ धीरज दोगे।१०
हे कृष्ण कृष्ण विश्वात्मा हरि, गोविंद शरण निज रख लोगे।।११

कुंती भजन—प्रभु हैं शरण तिहारी, सुधि लीजिये हमारी।
शिर पर है भीर भारी, राखो हमैं मुरारी ॥ टेक
जन्मे हैं पुत्र बन में, आये समझ स्वजन में।
उनके कपट है मन में, सुत मृत्यु नित बिचारी ॥ प्रभु०
दियो भीम को ज़हर भी, मानै न लोक डर भी।
नहिं कृष्ण की मेहर भी, किस की लगैं गोहारी ॥ प्रभु०
जन पर विपत्ति आई, वह देत ज्यों दोहाई।
सब काज तजि कन्हाई, लेते उसे उबारी ॥ प्रभु०
हे कृष्ण कृष्ण प्यारे, इक हो तुम्हीं हमारे।
माधोराम नित पुकारे, प्रभु लीजिये सम्हारी ॥ प्रभु०

सवैया—गीधहु ब्याध सम्हारिलिये,गनिका अधमौ प्रभुतासुउबारी
पूतना पूत भई पलमें, गति कौन कहै कर ली महतारी ॥
औरन के अपनाइबे में, पल एकहु बार न लाये बिहारी।
माधव शुद्ध तो आप गहो कर, पाप भरो तहूँ लेहु उबारी ॥

छ०—तव चरणकमल तजिशरण नहीं, हरि मृत्युका भयहरलेतेहो।१२
है नमो कृष्ण हो शुद्ध ब्रह्म, क्यों शरण न अपनी देते हो ॥ १३
श्रीशुकउ०—यों सुमिरि स्वजन जगदीस कृष्ण, परदादी आपकी रोनेलगी।१४

अक्रूर विदुर समझाय उसे, धीरज देने से शांति जगी ॥ १५
जाते धृतराष्ट्र से मिले कहा, निजसुत पांडवों में राखो सम । १६
अक्रूरउ०—धृतराष्ट्र कीर्तिवर्द्धन हैं आप, पांडवोंको मत तुम समझोकम १७

दो०—धर्मशील से पालहु, प्रजा सकल परिवार ।
भेदभाव तजि दिये नृप, होवै सुयश तुम्हार ॥ १८

छ०—करि कुकर्म नृप जावोगे नर्क, इससे दोनों में रख समता १९
नहिं किसीको ह्यां हरदम रहना, तन छुटै पुत्र पर क्या ममता २०
इकला पैदा हो मरै जीव, इकला सुकर्म दुष्कर्म भोग । २१
धन अधर्म कर लेते हैं और, मछरी जीवन जल कुलके लोग २२
जिनको अधर्म कर पालै नर, वे सब जीते या मरे तजैं । २३
शिर पापकी गठरी लादचलै, पड़िनर्क दुःख बहु सहन सजैं २४
यह लोक मनोरथ स्वप्न तुल्य, हो शांतचित्त नृप आत्म लखो ।
अपना पराव तजि द्वैत भाव, सुत धनमें फँस कर नहक झखो २५

धृतराष्ट्रउ० दो०—कहत दानपति बचनतुम, हमरोहित अनुमान ।
तृप्ति न होवै सुनत सब, करिके अम्मृत पान ॥ २६

छ०—तौभी चंचलचितमें न जमैं, बिजलोघनमें ज्यों सुतवश हैं ।२७
ईश्वर करतब कैसे पलटे, महिभार उतारन में खुश हैं ॥ २८
जिसकी मायापथ लख न आव, जग रचिपालैं हरि नाशकरैं २९
लीला लख में आवैं न जासु, भवतारक प्रभुपद शीशधरैं ॥
श्रीशुक उ०—नृप अभिप्राय अक्रूर समुझि, सब से मिलि द्वारपुरी आये ।३०
श्रीरामकृष्ण से हाल कहा, पांडवों के दुख सब बतलाये ॥ ३१

दो०—रचिभारत नाश्यो सबहिं, दीन पांडवहिं राज ।
पूर्वार्द्ध संक्षेप कहि, कृष्ण सवांरे काज ॥

भजन—बालचरित हरि लीला गाई ॥ टेक ॥
महि दुख विनै कीन सब देवन, जन्म लीन यदुराई ।
नन्द महोत्सव तारि पूतना, तृणावर्त शकटहि गतिदाई ॥ बाल०
क्रीडा बाल तारि यमलार्जुन, वत्सासुर कुटिलाई ।
बकासुरौ अघ धेनुक तारे, ब्रह्मालीला सबहिं सुनाई ॥ बाल०
गो चारण काली दवारि हरि, बर्षा बेनु बजाई ।
भातखाय चीरहु हरि लीनो, गोबर्द्धन सुरपति विकलाई ॥बाल०
भे गोविंद वरुण सों पूजा, लीला रास रचाई ।
शंखचूड़ वृषभादिकमारे, केशी बधि मधुपुर पहुनाई ॥ बाल०
मल्ल कंस धोबी को मार्‍यो, पितु की बंदि छुड़ाई ।
पढ़ि विद्या गुरु दच्छिणा दीनी, कुबरी अक्रूरहु सुखदाई ॥ बाल०
सुधि पांडवन मँगाय मुरारी, उनको राज दिवाई ।
माधवराम दशम पूर्वारध, कहैं सुनैं सुख मुक्तिहु पाई ॥ बाल०

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः

दशमस्कंध पूर्वार्द्ध समाप्तः ।